UNIVERSAL LIBRARY

OU_180772
UNIVERSAL LIBRARY

तुलसी-रत्नावली

गोस्वामी तुलसीदास के समस्त ग्रन्थों में से चुने हुए
ललित पदों का संग्रह]

संकलनकर्त्ता

बाबू केदारनाथ गुप्त, एम० ए०

प्रिंसिपल अग्रवाल विद्यालय इन्टरमीडियट कालेज, इलाहाबाद

प्रकाशक

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

१९४८

तृतीय बार] [मूल्य १॥)

Published by
K. Mittra,
at The Indian Press, Ltd.
Allahabad.

Printed by
B. L. Varshney
at The Varshney Press,
Allahabad.

रामभक्तों से निवेदन

वेदमत सोधि, सोधि सोधि के पुरान सबै,
संत औ असंतन को भेद को बतावतो।
कपटी कुराही कूर कलि के कुचाली जीव,
कौन रामनामहूँ की चरचा चलावतो॥
'बेनी' कवि कहै मानो-मानो हो प्रतीति यह,
पाहन-हिये में कौन प्रेम उपजावतो।
भारी भवसागर उतारतो कवन पार,
जो पै यह रामायन तुलसी न गावतो॥

प्रातःस्मरणीय कविकुलशिरोमणि महात्मा तुलसीदास जी के नाम से कौन परिचित नहीं है। श्रीरामचरितमानस ने तो उन्हें अमर बना दिया है। जैसा लोकप्रिय ग्रन्थ रामचरितमानस हुआ है वैसा अभी तक कोई दूसरा ग्रन्थ देखने में नहीं आया है। कविवर 'रहीम' मानस की इस प्रकार प्रशंसा करते हैं:—

रामचरितमानस विमल, संतन जीवन प्रान।
हिंदुआन को वेदसम, जमनहिं प्रगट कुरान॥

महात्मा गांधी कहते हैं, "मैं तुलसीदास जी की रामायण को भक्ति-मार्ग का सर्वोत्तम ग्रन्थ समझता हूँ।"

महामना पं० मदनमोहन मालवीय का मत मानस के प्रति इस प्रकार है "गोस्वामी तुलसीदास जी की मानस रामायण संसार में अपने ढंग की निराली पुस्तक है। ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य और शूद्र चारों वर्णों और ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यासी चारों आश्रमवालों के लिए वेद, स्मृति और पुराण के उपदेशों का सारभूत यह धर्मग्रन्थ है।

इसमें ज्ञानें, भ क्ति और वैराग्य की विमल त्रिवेणी का प्रवाह बहता है। यह असंख्य प्रा णियों के जीवन की सर्वस्व रही है। करोड़ों प्राणियों ने इसके द्वारा इच्छा के अनुकूल ज्ञान, भक्ति और वैराग्य का अमृत रस-पान किया है और समय के अन्त तक करोड़ों इसके द्वारा अनुपम सुख और शान्ति पाते रहेंगे। यह ग्रन्थ समस्त मनुष्य-जाति के अनिर्वचनीय सुख और शान्ति का साधन है।"

संसार के अन्य भाषा के विद्वानों ने भी रामायण की इसी प्रकार मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। मानव-समाज इस ग्रन्थ से बहुत अधिक प्रभावित हुआ है। क्या धनी, क्या निर्धन, क्या स्त्री, क्या पुरुष सब इस ग्रन्थ को बड़े चाव और उत्साह से पढ़ते हैं। बहुत से सज्जन एक साथ बैठकर मधुर स्वर से इस की चौपाइयों को झाँझ, मृदंग और अन्य बाजों के साथ गाते और भगवद् भक्ति प्राप्त करते हैं। कहने का तात्पर्य यह कि यह सब प्राणियों का कंठहार हो रही है। इसने करोड़ों स्त्री-पुरुषों का उत्थान किया है। इसको पढ़कर न मालूम कितने सज्जन संसार से विरक्त हो गये हैं। राजनीति, व्यवहारनीति और अन्य नीतियों का यह एक अनुपम ग्रन्थ है।

विनयपत्रिका ने भी रामायण की तरह विद्वानों में अच्छी ख्याति प्राप्त की है। इस ग्रन्थ में कवि ने अपना हृदय निकालकर सर्वसाधारण के सामने रख दिया है। इस ग्रन्थ में ग्रन्थकार ने जीव की कमज़ोरियों का बहुत ही अच्छा दिग्दर्शन कराया है। वियोगी हरि के शब्दों में 'उनकी (तुलसी की) यह कृति ज्ञानियों की सिद्धान्त-मंजूषा है, पण्डितों की पाण्डित्य-निकाय है, योगियों की समाधि-स्थली है, एवं प्रेमियों और भक्तों की मानसतरंगिणी है।'

इन दो ग्रन्थ रत्नों के अतिरिक्त उनके ग्यारह और मान्य ग्रन्थ हैं जिनके नाम इस प्रकार हैं—दोहावली, कवितावली, गीतावली, हनुमान-बाहुक, श्रीकृष्णगीतावली, रामाज्ञा प्रश्न, रामलला नहछू, बरवै रामायण, वैराग्यसन्दीपनी, पार्वतीमंगल और जानकीमंगल। ये भी सब

ग्रन्थ भक्ति, उपदेश, वैराग्य आदि उत्तमोत्तम विषयों से सम्बन्ध रखते हैं। इन सब ग्रन्थों की रचना से तुलसीदास जी ने चिरपिपासाकुल संसार-पथिकों के लिए सुधा-स्रोतस्वती पुण्यसलिला राम-भक्ति मदाकिनी की एक धवल धारा बहा दी है जिसे पीकर जनता को शान्ति मिलती है।

वतमान युग अशान्ति का युग है। जहाँ लोग ईश्वर-चिन्तन करते हुए निरासक्ति के साथ अपने कर्त्तव्य का पालन करते थे वहाँ उन्होंने अब संसार को ही अपना सर्वस्व मान रक्खा है। इस प्रकार विषयों में ॰और नाना प्रकार के जंजालों में फँसे हुए और जीवन भर नाना प्रकार के दुख और विषम अशान्ति सहते हुए वे इस दुर्लभ शरीर को यों ही निरर्थक गँवा देते हैं और सुख अथवा शान्ति प्राप्त करने का उनका यह प्रयास मृगजल की भाँति भ्रमात्मक सिद्ध होता है।

तो वास्तव में सुख है कहाँ ? यह इच्छाओं में नहीं है क्योंकि इच्छायें मनुष्य को क्रमशः उत्कट लोभी बनाकर पतन के गड्ढे में ढकेल देती हैं। यह धन में नहीं हैं और न स्त्री और पुत्रों के प्रेम में ही हैं। वास्तव में सच्चा सुख इच्छाओं के छोड़ने में है। यह जनता जनार्दन की सेवा में है। यह त्याग में है। यह काम, क्रोध, मोह, लोभ, मद और ईर्ष्या के छोड़ने में है जिन्हें षट्विकार कहते हैं। जो षट्-विकारों को छोड़ता है वही सच्चा त्यागी है, वही सच्चा संन्यासी है और वही सच्चा सुखी है। गेरुआ वस्त्र पहिनकर और मूँड़ मुँड़ाकर संन्यासी बनने की आवश्यकता नहीं है। वे नररत्न धन्य हैं जो षट्विकारों को जीतकर ईश्वरचिन्तन करते हुए अपने कर्तव्य का पालन करते हैं।

ऐसे समय में जब लोग संस्कृत भाषा को भूल से गये हैं हमें अध्यात्मज्ञान अथवा ब्रह्मज्ञान सबसे अधिक 'तुलसी' के ग्रन्थों से ही मिलता है। इन ग्रन्थों में संस्कृत के सभी अच्छे अच्छे ग्रन्थों का निचोड़ आ गया है। इनको पढ़ने से किसी भी बुद्धिमान् पुरुष को ब्रह्मज्ञान, जो सच्चा ज्ञान है, अल्प समय में मिल सकता है।

सन् १६१६ ई० में मुझे एक पुस्तक देखने को मिली जिसका नाम

था (Beauties of Shakesheare) शेक्सपियर रत्नावली। उसमें शेक्सपियर के सब ग्रन्थों के चुने हुए पद दिये हुए थे। उसी समय मेरे हृदय में भी इच्छा उत्पन्न हुई कि हिन्दी में भी इसी प्रकार की पुस्तक तुलसीदास जी के ग्रन्थों से सम्बन्ध रखनेवाली निकलती तो इससे सर्व-साधारण को और मुख्यकर उन लोगों को विशेष लाभ होता जो उनके सारे ग्रन्थों को नहीं पढ़ सकते।

यह विचार उस समय से मेरे मन में बराबर चलता रहा। मैं तुलसी के साहित्य सागर में डुबकियाँ लगाने लगा। सब रत्नों से अमूल्य रत्न को धीरे धीरे संचित करने लगा। सबसे पहली डुबकी रामचरित-मानस में लगी। अपनी बुद्धि के अनुसार अमूल्य रत्नों को ढूँढ़ा। हर एक कांड के अमूल्य रत्न शीर्षक देकर क्रमबद्ध किये गये और शीर्षक से बचे हुए रत्न सूक्तियों और स्फुट पदों में विभाजित किये गये। इसके अनन्तर विनयपत्रिका में डुबकी लगी और उसके भी अमूल्य रत्न निकाले गये। अन्त में उनके और ग्रन्थों का भी अध्ययन हुआ और उनके भी सुन्दर सुन्दर रत्नों का चयन किया गया। इस प्रकार 'तुलसी-रत्नावली' तैयार हुई जिसे तुलसीदास जी के सारे ग्रन्थों का निचोड़ कहना चाहिए। कोई ऐसा पद नहीं चुना गया जो रोचक और उपदेश-पूर्ण न हो।

रामचरितमानस का पाठ मैंने गीता प्रेस के मानसांक से लिया है और विनयपत्रिका का श्री वियोगीहरि-द्वारा सम्पादित पुस्तक से। कवितावली का पाठ छात्रहितकारी पुस्तकमाला, प्रयाग-द्वारा प्रकाशित पुस्तक से, दोहावली का लाला भगवानदास द्वारा सम्पादित दोहावली से, गीतावली का गीता प्रेस की गीतावली से और शेष के पाठ श्री बजरंगबली-द्वारा प्रकाशित तुलसी रचनावली से लिये गये हैं। अतएव मैं इन प्रकाशकों का अत्यन्त आभारी हूँ।

इस रत्नावली के तैयार करने में मुझे अपने मित्र बा० राधेश्याम जी एम० ए०, एल-एल० बी० से बड़ी सहायता मिली है। अतएव

मैं आपका भी आभारी हूँ। आप रामायण के विशेषज्ञ हैं और उसकी टीका भी की है जो अभी तक अप्रकाशित है। आपने विनयपत्रिका और तुलसी के अन्य ग्रन्थों का भी अच्छा अध्ययन किया है

मैं इंडियन प्रेस, प्रयाग के जनरल मैनेजर और अध्यक्ष श्रीयुत हरिकेशव घोष जी का भी अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंने इस पुस्तक के प्रकाशन का सारा भार अपने ऊपर लेकर मुझे उत्साहित किया है। आशा है उनके द्वारा इस पुस्तक का खूब प्रचार होगा।

अन्त में नरदेह को सार्थक बनाने के लिए इस 'रत्नावली' का हमें बार बार पाठ और मनन करना चाहिए। याद रखिए—

एहिं कलिकाल न साधन दूजा। जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा ॥
रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि। सतत सुनिअ रामगुन ग्रामहि ॥
जासु पतितपावन बड़ बाना। गावहिं कवि श्रुति सन्त पुराना ॥
ताहि भजिहि मन तजि कुटिलाई। राम भजें गति केहिं नहिं पाई ॥

और भी

क्षणभंगुर जीवन की कलिका, कल प्रात को जाने खिली न खिली।
मलयाचल की शुचि शीतल मंद, सुगंध समीर मिली न मिली ॥
कलिकाल कुठार लिए फिरता, तनु 'नम्र' से चोट झिली न झिली।
भज ले हरिनाम अरी रसने, फिर अन्त समय में हिली न हिली ॥

अग्रवाल विद्यालय कालिज.
प्रयाग
देवोत्थान एकादशी
संवत् २०१०

भगवद्भक्तों का दासानुदास
केदारनाथ गुप्त

विषय-सूची

राम चरितमानस

बालकाण्ड—

प्रार्थना	...	....	१
असंतों की वन्दना	...	..	२
संतों और असंतों के लक्षण	.	.	२
नाम वन्दना ..	....		३
राम और नाम की महिमा	...	...	४
संग और कुसंग का प्रभाव	....	....	५
जीव की एकता	....	.	५
यथास्थान सबकी शोभा	....	...	५
रामचरितमहिमा	.	....	५
रामचरित मानस महिमा	....	...	६
रामायण किसे नहीं सोहाती	..		७
तीर्थराज प्रयाग का स्नान	...		८
तपस्या की महिमा	....	...	८
कामदेव का प्रताप	...		८
ब्रह्मा का लिखा अमिट होता है	....	.	१०
शिव और राम की समानता	.		१०
शिवस्वरूप वर्णन	.	...	१०
रामविमुख लोगों की दुर्दशा	...	...	१०
रामकथा की महिमा	...	....	११
शिव जी राम के प्यारे हैं	...	...	११
अज्ञानियों की दशा	....	...	१२

सगुण और निर्गुण ब्रह्म की समता		..	१२
ईश्वर अवतार कब लेते हैं	..		१३
वसंतऋतु का वर्णन	...	....	१३
स्वायंभू मनु और सतरूपा को भगवद्दर्शन		....	१३
बड़े सहज ही कृपालु होते हैं	...		१४
ईश्वर प्रेम से पैदा होते हैं	.	...	१४
रामजन्म और उनका स्वरूप	...		१४
रामचन्द्र जी का बाल स्वरूप	...		१५
चारों भाइयों का नामकरण	...	...	१६
जनकपुर की शोभा	..	...	१७
पार्वती जी की प्रार्थना	...		१८
श्रीचरण महिमा	....	.	१८
राम का विराट् स्वरूप	...	...	१९
सीताजी की अपार सुंदरता	...	...	१९
छोटी वस्तुओं के चमत्कार	....		२०
समय चूकने से हानि	...	...	२०
शुभ सगुन के लक्षण	...		२०
सूक्तियाँ ..	....	.	२०
फुटकर ...	...		२३

अयोध्याकाण्ड—

भक्त की इच्छा	...	..	२८
कामदेव की शक्ति	...	...	२८
पितृभक्त पुत्र की अवस्था	...		२८
स्त्री की प्रबलता	...	...	२८
पुरनारियों का कैकेयी को समझाना		...	२८
सास का पुत्रवधू पर प्रेम	...	...	२९

वन के लिए कौन स्त्रियाँ चाहिए	...	२६
राम जी की सीता जी को शिक्षा	...	३०
पति ही स्त्री का सर्वस्व है	...	३१
राम जी का लक्ष्मण को उपदेश	...	३२
सुमित्रा का लक्ष्मण जी को उपदेश	...	३३
राम का माता-पिता के प्रति प्रेम	...	३४
संसार की निर्मूलता ...	...	३४
धर्म के लिए संकट सहना ...	.	३५
बिना पति के सब ऐश्वर्य्य निरर्थक है	....	३५
केवट का श्रीराम के चरण धोने का विनोद	....	३५
केवट का सौभाग्य ...	....	३६
तीर्थराज प्रयाग का वर्णन ..	...	३६
भरद्वाज का राम जी के प्रभाव का वर्णन	...	३७
भगवान् के रहने का स्थान ...	..	३७
चित्रकूट का वर्णन ...	...	३६
राम के वियोग से घोड़ों को दुख	...	३६
धीर पुरुष का लक्षण	...	३६
भरत जी का कैकेयी को धिक्कारना	...	४०
भरत जी कौशिल्या जी को सफ़ाई देते हैं	...	४०
सोचने योग्य कौन है	....	४१
पिता के वचनों को पालन करना	...	४१
भरत का राम के प्रति प्रेम व संसार को रामभक्ति की शिक्षा		४२
सत्संगति का फल ..	...	४३
भरत की भक्ति की महिमा	...	४४
रामचन्द्र जी का स्वभाव ...	...	४४
राजमद का नाश ...	...	४४
काम में जल्दी न करना चाहिए	...	४५

भरत की प्रशंसा	....	...	४५
राम शैल की शोभा	...	....	४५
लक्ष्मण जी की कर्तव्यनिष्ठा	.	.	४६
राम जी की सर्वव्यापकता	.	...	४६
भरत जी की प्रशंसा	...	..	४६
भरत का पश्चात्ताप	....	...	४६
राम का भरत को आश्वासन	...		४७
प्रेम और वैर सब जानते हैं	...	....	४७
सेवक का कर्त्तव्य	...		४७
बिना रामप्रेम के सब व्यर्थ है	...	....	४७
किसका जीवन व्यर्थ है	...	...	४७
भगवत् प्रेम की महिमा	...	...	४८
मुखिया कैसा होना चाहिए	...	...	४८
रामचन्द्र जी की चरणपादुका	...		४८
भरत जी की तपस्या	...	..	४८
भरत जी का आचरण	...	.	४६
सूक्तियाँ	...	...	४६
फुटकर	...	...	५२

अरण्यकाण्ड –

राम जी के विमुख होने से हानि		...	५५
स्त्री-धर्म	...	...	५५
राम जी के निवास से वन की शोभा		...	५६
भक्ति-योग	...		५६
क्षत्रियों के कर्तव्य	...	...	५७
कौन जल्दी से नष्ट होते हैं	...	...	५७
रावण की अपनी धारणा	...	...	५७

दुष्टों की कृपा अच्छी नहीं होती ... ५८
नव व्यक्तियों से विरोध न करना चाहिए ... ५८
प्रभु की दयालुता ५८
नवधा भक्ति ५८
वन की शोभा पर एक श्लेष ५६
वसंतऋतु ५६
सुंदर उपमायें और शिक्षा ५६
राम नाम की प्रधानता ६०
राम भक्त को रक्षा करते हैं ६०
स्त्री सबसे दुखदाई है ६१
संतों के गुण ६१
सूक्तियाँ ६२
फुटकर ६३

किष्किन्धाकाण्ड

काशी की महिमा .. ६५
शंकर जी की महिमा .. ६५
सच्चा मित्रता ६५
कन्या के समान कौन है . .. ६५
बाली की अन्तिम अभिलाषा ... ६६
शरीर की रचना .. ६६
वर्षा वर्णन ६६
शरदऋतु का वर्णन ... ६७
माया बड़ी प्रबल है ६८
सूक्तियाँ ६६
फुटकर ७०

सुन्दरकाण्ड—

सत्संग की महिमा .. . ७१

रामजी का स्मरण कर काम करिए		...	७१
विभीषण की दीनता	...	...	७१
हनुमान जी का आश्वासन	...	...	७१
सीता जी की वियोगावस्था	...	...	७२
सीता जी का सतीत्व	...	...	७२
सीता जी की व्याकुलता	...	...	७२
राम जी की वियोगावस्था	...	...	७२
हनुमान जी को रावण का उपदेश		...	७३
राम जी के बिना हानि		...	७३
राम जी की कृपा से सब होता है		...	७३
सीता जी की विकलता	...	...	७३
हनुमान जी का निहोरा	...	...	७४
राम ही ईश्वर हैं	...		७४
राम शरणागत-प्रतिपालक हैं	...	...	७४
कुछ ज्ञान की बातें	...	...	७४
विभीषण द्वारा राम का दर्शन	...	.	७५
राम जी किसको अपनाते हैं	...		७५
अनधिकारी को उपदेश निष्फल है		...	७५
सूक्तियाँ ...	...	...	७५
फुटकर ...	...	...	७७

लंकाकाण्ड—

राम और शिव की एकता	...	...	७८
रामेश्वरधाम का दर्शन	...	..	७८
महान् की क्षुद्र से तुलना नहीं हो सकती		...	७८
चन्द्रमा पर अनेक उक्तियाँ	...	.	७६
राम जी का विराट् स्वरूप	...	..	७६

मन्दोदरी की शिक्षा	...	...	८०
स्त्रियों में आठ अवगुण	.	...	८०
वैर से भी मोक्ष	...	...	८०
सगुण चरित की दुर्गमता	...	...	८०
शस्त्ररहित की विजय	...	...	८०
अशुभ सूचनायें	...	...	८१
पाप का अंतिम परिणाम	...	...	८१
सूक्तियाँ ...	...	...	८२
फुटकर .	...	...	८३

उत्तरकाण्ड—

मातृभूमि अवधपुरी की शोभा	...	...	८७
राम जी की स्तुति		...	८७
रामराज ...	...	...	८८
सन्तों के लक्षण	...	....	८९
असन्तों के लक्षण	...	.	९०
मनुष्य-शरीर की अज्ञानता	...	...	९१
परलोक जाने का सुलभ मार्ग	...	.	९१
सब साधनों का मूल रामभक्ति		...	९२
राम की अनन्त महिमा	...	...	९३
रामभक्ति दुर्लभ है	...	...	९३
सत्संग की महिमा	...	...	९३
शिक्षा ...	...	...	९३
राम जी माया से परे हैं	...	...	९४
राम के भक्त उनको अत्यन्त प्यारे हैं		...	९५
राम-कृपा से भक्ति की प्राप्ति	...	....	९५
शिक्षा ...	. ....	...	९५
कलियुग के धर्म	...	...	९६

कलियुग के गुण	...	...	९९
गुरु से शत्रुता करने की हानियाँ		...	१००
शंकर जी की स्तुति	.	...	१००
ब्रह्म का स्वरूप	..	...	१०१
कुछ उपदेश ..	...	.	१०१
भक्ति की महिमा	..		१०२
ज्ञान और भक्ति का अन्तर	...	...	१०२
भक्ति की महिमा	...	...	१०५
परमार्थ के कुछ प्रश्न और उनके उत्तर		...	१०६
राम-भक्ति के बिना कोई तरता नहीं		...	१०८
इस कलिकाल में केवल राम-नाम ही मुक्ति का देनेवाला है			१०९
सूक्तियाँ	...	...	१०९
फुटकर ...	...	...	११२
वेदों द्वारा स्तुति	...	...	११६
विनय-पत्रिका	...	....	११८
दोहावली	...	...	१३७
कवितावली रामायण	...	...	१४७
गीतावली	...	....	१६२
विविध ग्रन्थों से—			
हनुमान बाहुक	...	...	१७५
श्रीकृष्ण गीतावली		...	१७६
रामाज्ञा प्रश्न	...	...	१७९
पार्वती मंगल ..	...	...	१८१
रामलला नहछू	...		१८४
बरवै रामायण	...	...	१८५
वैराग्यसंदीपिनी	...		१८७
जानकी मंगल	...	.	१८९

तुलसी-रत्नावली

बालकाण्ड

प्रार्थना

सो०—जो सुमिरत सिधि होय, गननायक करिवर बदन।
करउ अनुग्रह सोई, बुद्धिरासि सुभगुन सदन॥
मूक होइ बाचाल, पंगु चढ़इ गिरिवर गहन।
जासु कृपा सो दयाल, द्रवउ सकल कलि-मल दहन॥
नील सरोरुह स्याम, तरुन अरुन बारिज नयन।
करउ सो मम उर धाम, सदा छीर सागर सयन॥
कुन्द इन्दु सम देह, उमारमन करुना अयन।
जाहि दीन पर नेह, करउ कृपा मर्दन मयन॥
बंदउँ गुरु पद कंज, कृपासिन्धु नररूप हरि।
महामोह तम पुंज, जासु बचन रबि कर निकर॥

बंदउँ गुरुपद पदुम परागा। सुरुचि सुबास सरस अनुरागा॥
अमिय मूरिमय चूरन चारू। समन सकल भव रुज परिवारू॥
सुकृति संभु तन बिमल बिभूती। मंजुल मंगल मोद प्रसूती॥
जन मन मंजु मुकुर मल हरनी। किएँ तिलक गुनगन बसकरनी॥
श्रीगुरु पद नख मनि गन जोती। सुमिरत दिव्य दृष्टि हियँ होती॥
दलन मोह तम सो सप्रकासू। बड़े भाग उर आवइ जासू॥
उघरहिं बिमल बिलोचन ही के। मिटहिं दोष दुख भव रजनी के॥
सूझहिं रामचरित मनि मानिक। गुपुत प्रगट जहँ जो जेहि खानिक॥

संतों की वन्दना

साधुचरित सुभ सरिस कपासू। निरस बिसद गुनमय फल जासू॥
जो सहि दुख परछिद्र दुरावा। बंदनीय जेहि जग जस पावा॥
मुद मंगलमय संत समाजू। जो जग जंगम तीरथराजू॥
रामभक्ति जहँ सुरसरिधारा। सरसइ ब्रह्मबिचार प्रचारा॥

सुनि समुझहिं जन मुदित मन, मज्जहिं अति अनुराग।
लहहिं चारि फल अछत तनु, साधु समाज प्रयाग॥

बिनु सतसङ्ग बिबेक न होई। रामकृपा बिनु सुलभ न सोई॥
सत संगत मुद मंगल मूला। सोइ फल सिधि सब साधन फूला॥
सठ सुधरहिं सत संगति पाई। पारस परस कुधात सुहाई॥
बिधिबस सुजन कुसंगत परहीं। फनिमनि सम निजगुन अनुसरहीं॥

बंदउँ संत समानचित, हित अनहित नहिं कोइ।
अंजलिगत सुभ सुमन जिमि, सम सुगध कर दोइ॥

असंतों की वन्दना

बहुरि बंदि खलगन सतिभाएँ। जे बिनु काज दाहिनेहु बाएँ॥
परहित हानि लाभ जिन्ह केरें। उजरें हरष बिषाद बसेरें॥
हरिहर जस राकेस राहु से। पर अकाज भट सहसबाहु से॥
जे परदोष लखहिं सहसाखी। परहित घृत जिन्ह के मन माखी॥
तेज कृसानु रोष महिषेसा। अघ अवगुन धन धनी धनेसा॥
उदय केत सम हित सबही के। कुम्भकरन सम सोवत नीके॥

संतों और असंतों के लक्षण

बिछुरत एक प्रान हरि लेहीं। मिलत एक दुख दारुन देहीं॥
उपजहिं एक संग जग माहीं। जलज जोंक जिमि गुन बिलगाहीं॥

सुधा सुरा सम साधु असाधू। जनक एक जग जलधि अगाधू ॥
भल अनभल निज निज करतूती। लहत सुजस अपलोक बिभूती ॥
सुधा सुधाकर सुरसरि साधू। गरल अनल कलिमल-सरि ब्याधू ॥
गुन अवगुन जानत सब कोई। जो जेहि भाव नीक तेहि सोई ॥

भलो भलाइहि पै लहइ, लहइ निचाइहि नीचु।
सुधा सराहिअ अमरताँ, गरल सराहिअ मीचु ॥

नाम वन्दना

बंदउँ नाम राम रघुबर को। हेतु कृसानु भानु हिमकर को ॥
बिधि हरिहरमय बेद प्रान सो। अगुन अनूपम गुननिधान सो ॥
महामंत्र जोइ जपत महेसू। कासीं मुकुति हेतु उपदेसू ॥
महिमा जासु जान गनराऊ। प्रथम पूजिअत नामप्रभाऊ ॥
जान आदिकबि नाम प्रतापू। भयउ सुद्ध करि उलटा जापू ॥
सहस नाम सम सुनि सिव बानी। जपति सदा पिय संग भवानी ॥
हरषे हेतु हेरि हर ही को। किय भूषन तियभूषन ती को ॥
नाम प्रभाउ जानि सिव नीको। कालकूट फलु दीन्ह अमी को ॥

बरषा रितु रघुपति भगति, तुलसी सालि सुदास।
रामनाम बर बरन जुग, सावन भादव मास ॥

आखर मधुर मनोहर दोऊ। बरन बिलोचन जन जिय जोऊ ॥
सुमिरत सुलभ सुखद सब काहू। लोक लाहु परलोक निबाहू ॥
नर नारायन सरिस सुभ्राता। जगपालक बिसेषि जनत्राता ॥
भगति सुतिय कल करन बिभूषन। जगहित हेतु बिमल बिधु पूषन ॥
स्वाद तोष सम सुगति सुधा के। कमठ सेष सम धर बसुधा के ॥
जन मन मंजु कंज मधुकर से। जीह जसोमति हरि हलधर से ॥

एक छत्रु एकु मुकुट मनि, सब बरनिन पर कोउ ।
तुलसी रघुवर नाम के, बरन बिराजत दोउ ॥
रामनाम मनिदीप धरु, जीह देहरीं द्वार ।
तुलसी भीतर बाहिरेहुँ, जौं चाहसि उजियार ॥

राम और नाम की महिमा

निरगुन तें एहि भाँति बड़, नाम प्रभाउ अपार ।
कहउँ नामु बड़ राम तें, निज बिचार अनुसार ॥

राम भगत हित नरतनु धारी । सहि संकट किय साधु सुखारी ॥
नाम सप्रेम जपत अनयासा । भगत होंहि मुद मङ्गल बासा ॥
राम एक तापस तिय तारी । नाम कोटि खल कुमति सुधारी ॥
रिषि हित राम सुकेतु सुता की । सहित सेन सुत कीन्हि बिबाकी ॥
सहित दोष दुख दास दुरासा । दलइ नामु जिमि रबि निसि नासा ॥
भंजेउ राम आपु भव चापू । भव भय भंजन नाम प्रतापू ॥
दंडक बनु प्रभु कीन्ह सुहावन । जन मन अमित नाम किय पावन ॥
निसिचर निकर दले रघुनन्दन । नामु सकल कलि कलुष निकन्दन ॥

सबरी गीध सुसेवकनि, सुगति दीन्ह रघुनाथ ।
नाम उधारे अमित खल, बेद बिदित गुनगाथ ॥

राम सुकंठ बिभीषन दोऊ । राखे सरन जान सब कोऊ ॥
नाम अनेक गरीब निवाजे । लोक बेद बर बिरिद बिराजे ॥
राम भालु कपि कटक बटोरा । सेतु हेतु श्रमु कीन्ह न थोरा ॥
नाम लेत भव सिन्धु सुखाहीं । करहु बिचारु सुजन मन माहीं ॥
राम सकुल रन रावनु मारा । सीय सहित निज पुर पगु धारा ॥
राजा राम अवध रजधानी । गावत गुन सुर मुनि बरबानी ॥
सेवक सुमिरत नाम सप्रीती । बिनु श्रम प्रबल मोह दलु जीती ॥

संग और कुसंग का प्रभाव

लखि सुबेष जग बंचक जेऊ। बेष प्रताप पूजिअहिं तेऊ॥
उघरहिं अन्त न होइ निबाहू। कालनेमि जिमि रावन राहू॥
किएहुँ कुबेष साधुं सनमानू। जिमि जग जामवन्त हनुमानू॥
हानि कुसंग सुसंगति लाहू। लोकहुँ बेद बिदित सब काहू॥
गगन चढ़इ रज पवन प्रसङ्गा। कीचहिं मिलइ नीच जल सङ्गा॥
साधु असाधु सदन सुक सारीं। सुमिरहिं राम देहिं गनि गारी॥
धूम कुसङ्गति कारिख होई। लिखिअ पुरान मंजु मसि सोई॥
सोइ जल अनल अनिल सङ्घाता। होइ जलद जग जीवनदाता॥

ग्रह भेषज जल पवन पट, पाइ कुजोग सुजोग।
होहिं कुबस्तु सुबस्तु जग, लखहिं सुलच्छन लोग॥
सम प्रकास तम पाख दुहुँ, नाम भेद बिधि कीन्ह।
ससि सोषक पोषक समुझि, जग जस अपजस दीन्ह॥

जीव की एकता

आकर चारि लाख चौरासी। जाति जीव जल थल नभवासी॥
सीयराममय सब जग जानी। करहुँ प्रनाम जोरि जुग पानी॥

यथास्थान सबकी शोभा

मनि मानिक मुकुता छबि जैसी। अहि गिरि गज सिर सोह न तैसी॥
नृप किरीट तरुनी तनु पाई। लहहिं सकल सोभा अधिकाई॥

रामचरित्र महिमा

राम चरित चिंतामनि चारू। संत सुमति तिय सुभग सिंगारू॥
जगमंगल गुनग्राम राम के। दानि मुकुति धन धरम धाम के।

सदगुर ग्यान बिराग जोग के। बिबुध बैद भव भीम रोग के॥
जननि जनक सिय राम प्रेम के। बीज सकल व्रत धरम नेम के॥
समन पाप सन्ताप सोक के। प्रिय पालक परलोक लोक के॥
सचिव सुभट भूपति बिचार के। कुंभज लोभ-उदधि अपार के॥
काम कोह कलिमल करिगन के। केहरि सावक जन मन बन के॥
अतिथि पूज्य प्रियतम पुरारि के। कामद घन दारिद दवारि के॥
मंत्र महामनि बिषय ब्याल के। मेटत कठिन कुअंक भाल के॥
हरन मोह तम दिनकर कर से। सेवक सालि पाल जलधर से॥
अभिमत दानि देवतरु बर से। सेवत सुलभ सुखद हरिहर से॥
सुकबि सरद नभ मन उडगन से। राम भगत जन जीवन धन से॥
सकल सुकृत फल भूरि भोग से। जग हित निरुपधि साधु लोग से॥
सेवक मन मानस मराल से। पावन गङ्ग तरंग माल से॥

कुपथ कुतरक कुचालि कलि, कपट दंभ पाषंड।
दहन राम गुन ग्राम जिमि, इंधन अनल प्रचंड॥
रामचरित राकेस कर, सरिस सुखद सब काहु।
सज्जन कुमुद चकोर चित, हित बिसेषि बड़ लाहु॥

रामचरितमानस-महिमा

रामचरितमानस यहि नामा। सुनत श्रवन पाइअ बिश्रामा॥
मन करि विषय अनल बन जरई। होइ सुखी जौं एहिं सर परई॥
रामचरितमानस मुनिभावन। बिरचेउ संभु सुहावन पावन॥
त्रिबिध दोष दुख दारिद दावन। कलि कुचालि कुलि कलुष नसावन॥
सप्त प्रबन्ध सुभग सोपाना। ग्यान नयन निरखत मनमाना॥
रघुपति महिमा अगुन अबाधा। बरनब सोइ बर बारि अगाधा॥
रामसीय जस सलिल सुधासम। उपमा बीचि बिलास मनोरम॥

पुरइनि सघन चारु चौपाई। जुगुति मंजु मनि सीप सुहाई॥
छन्द सोरठा सुन्दर दोहा। सोइ बहुरंग कमल कुल सोहा॥
अरथ अनूप सुभाव सुभासा। सोइ पराग मकरंद सुबासा॥
सुकृत पुंज मंजुल अलि माला। ग्यान बिराग बिचार मराला॥
धुनि अवरेब कबित गुन जाती। मीन मनोहर ते बहुभाँती॥
अरथ धरम कामादिक चारी। कहब ग्यान बिग्यान बिचारी॥
नव रस जप तप जोग बिरागा। ते सब जलचर चारु तड़ागा॥
सुकृती साधु नाम गुन गाना। ते बिचित्र जल बिहग समाना॥
सन्त सभा चहुँ दिसि अवँराई। श्रद्धा रितु बसंत सम गाई॥
भगति निरूपन बिबिध बिधाना। छमा दया दम लता बिताना॥
सम जम नियम फूल फल ग्याना। हरिपद रति रस बेद बखाना॥
औरउ कथा अनेक प्रसङ्गा। तेइ सुक पिक बहु बरन बिहंगा॥

पुलक बाटिका बाग बन, सुख सुबिहंग बिहारु।
माली सुमन सनेह जल, सींचत लोचन चारु॥

रामायण किसे नहीं सोहाती ?

अति खल जे बिषई बक कागा। एहि सर निकट न जाहिं अभागा॥
सम्बुक भेक सेवार समाना। इहाँ न बिषय कथा रस नाना॥
तेहि कारन आवत हियँ हारे। कामी काक बलाक बिचारे॥
आवत एहि सर अति कठिनाई। रामकृपा बिनु आइ न जाई॥
कठिन कुसङ्ग कुपंथ कराला। तिन्ह के बचन बाघ हरि ब्याला॥
गृहकारज नाना जंजाला। ते अति दुर्गम सैल बिसाला॥
बन बहु बिषम मोह मद माना। नदीं कुतर्क भयंकर नाना॥

जे श्रद्धा सम्बल रहित, नहि सन्तन्ह कर साथ।
तिन्ह कहुँ मानस अगम अति, जिन्हहिं न प्रिय रघुनाथ॥

जो करि कष्ट जाइ पुनि कोई। जातहिं नींद जुड़ाई होई ॥
जड़ता जाड़ विषम उर लागा। गएहुँ न मज्जन पाव अभागा ॥
करि न जाइ सर मज्जन पाना। फिरि आवइ समेत अभिमाना ॥
जौं बहोरि कोउ पूछन आवा। सर निन्दा करि ताहि बुझावा ॥
सकल बिघ्न ब्यापहिं नहिं तेही। राम सुकृपा बिलोकहिं जेही ॥
ते नर यह सर तजहिं न काऊ। जिन्ह के राम चरन भल भाऊ ॥
जो नहाइ चह एहिं सर भाई। सो सतसङ्ग करउ मन लाई ॥

तीर्थराज प्रयाग का स्नान

माघ मकरगत रबि जब होई। तीरथपतिहिं आव सब कोई ॥
देव दनुज किन्नर नर श्रेनी। सादर मज्जहिं सकल त्रिबेनी ॥
पूजहिं माधव पद जलजाता। परसि अखयबटु हरषहिं गाता ॥
भरद्वाज आश्रम अतिपावन। परम रम्य मुनिवर मनभावन ॥
तहाँ होइ मुनि रिषय समाजा। जाहिं जे मज्जन तीरथराजा ॥
मज्जहिं प्रात समेत उछाहा। कहहिं परसपर हरिगुनगाहा ॥

ब्रह्मनिरूपन धरम बिधि, बरनहिं तत्त्व बिभाग।
कहहिं भगति भगवन्त कै, संजुत ग्यान बिराग ॥

तपस्या की महिमा

तपबल रचइ प्रपंचु बिधाता। तपबल बिष्नु सकल जग त्राता ॥
तपबल संभु करहिं संघारा। तपबल सेषु धरइ महिभारा ॥

कामदेव का प्रताप

अस कहि चलेउ सबहि सिरु नाई। सुमन धनुष कर सहित सहाई ॥
चलत मार अस हृदयँ बिचारा। सिवबिरोध ध्रुव मरनु हमारा ॥

तब आपन प्रभाउ बिस्तारा । निजबस कीन्ह सकल संसारा ॥
कोपेउ जबहिं बारिचर केतू । छन महुँ मिटे सकल श्रुतिसेतू ॥
ब्रह्मचर्ज ब्रत संजम नाना । धीरज धरम ग्यान बिग्याना ।
सदाचार जप जोग बिरागा । सभय बिबेक कटकु सबु भागा ॥

भागेउ बिबेक सहाय सहित सो सुभट संजुग महि मुरे ।
सद्ग्रंथ पर्बतकंदरन्हि महुँ जाइ तेहि अवसर दुरे ॥
होनिहार का करतार को रखवार जग खरभरु परा ।
दुइ माथ केहि रतिनाथ जेहि कहुँ कोपि कर धनु सरु धरा ॥
जे सजीव जग अचर चर, नारि पुरुष अस नाम ।
ते निज निज मरजाद तजि, भये सकल बस काम ॥

सबके हृदयँ मदन अभिलाषा । लता निहारि नवहिं तरुसाखा ॥
नदीं उमगि अंबुधि कहुँ धाई । संगम करहिं तलाव तलाई ॥
जहँ असि दसा जड़न्ह कै बरनी । को कहि सकइ सचेतन करनी ॥
पसु पच्छी नभ जल थलचारी । भए कामबस समय बिसारी ॥
मदन अंध ब्याकुल सब लोका । निसि दिनु नहिं अवलोकहिं कोका ॥
देव दनुज नर किंनर ब्याला । प्रेत पिसाच भूत बेताला ॥
इन्ह कै दसा न कहेउँ बखानी । सदा काम के चेरे जानी ॥
सिद्ध बिरक्त महामुनि जोगी । तेपि कामबस भए बियोगी ॥

भए कामबस जोगीस तापस पावँरन्हि की को कहै ।
देखहिं चराचर नारिमय जे ब्रह्ममय देखत रहे ॥
अबला बिलोकहिं पुरुषमय जगु पुरुष सब अबलामयं ।
दुइ दंड भरि ब्रह्मांड भीतर कामकृत कौतुक अयं ॥
धरी न काहूँ धीर, सबके मन मनसिज हरे ।
जे राखे रघुबीर, ते उबरे तेहि काल महुँ ॥

ब्रह्मा का लिखा अमिट होता है

जननिहिं बिकल बिलोकि भवानी । बोली जुत बिबेक मृदुबानी ॥
अस बिचारि सोचहिं मति माता । सो न टरइ जो रचइ बिधाता ॥
करम लिखा जौ बाउर नाहू । तौ कत दोसु लगाइअ काहू ॥
तुम्ह सन मिटहिं कि बिधि के अंका । मातु ब्यर्थ जनि लेहु कलंका ॥

शिव और राम की समानता

शिव पद कमल जिन्हहिं रति नाहीं । रामहि ते सपनेहुँ न सोहाहीं ॥
बिनु छल बिस्वनाथ पद नेहू । राम भगत कर लच्छन एहू ॥

शिव स्वरूप-वर्णन

चरित सिन्धु गिरिजा रमन, बेद न पावहिं पारु ।
बरनै तुलसी दास किमि, अति मतिमन्द गँवारु ॥

कुन्द इन्दु दर गौर शरीरा । भुजि प्रलम्ब परिधन मुनि चीरा ॥
तरुन अरुन अंबुज सम चरना । नख दुति भगत हृदय तम हरना ॥
भुजग भूति भूषन त्रिपुरारी । आननु सरद चंद छबि हारी ॥

जटा मुकुट सुरसरित सिर, लोचन नलिन बिसाल ।
नीलकंठ लावन्यनिधि, सोह बाल बिधु भाल ॥

राम-विमुख लोगों का दुर्दशा

जिन्ह हरिकथा सुनी नहिं काना । श्रवन रंध्र अहिभवन समाना ।
नयनन्हि संत दरस नहिं देखा । लोचन मोरपंख कर लेखा ॥
ते सिर कटु तुंबरि समतूला । जे न नमत हरि गुर पद मूला ॥
जन्हि हरि भगति हृदय नहिं आनी । जीवत सब समान तेइ प्रानी ॥
जो नहिं करइ राम गुन गाना । जीह सो दादुर जीह समाना ॥
कुलिस कठोर निठुर सोइ छाती । सुनि हरिचरित न जो हरषाती ॥

रामकथा की महिमा

रामकथा सुन्दर करतारी । संसय बिहग उड़ावनिहारी ॥
रामकथा कलि बिटप कुठारी । सादर सुनु गिरिराज कुमारी ॥
रामनाम गुन चरित सुहाए । जनम करम अगनित श्रुति गाए ॥
जथा अनन्त राम भगवाना । तथा कथा कीरति गुन गाना ॥
बुध बिश्राम सकल जनरंजनि । रामकथा कलि कलुष बिभंजनि ॥
रामकथा कलि पन्नग भरनी । पुनि बिबेक पावक कहुँ अरनी ॥
रामकथा कलि कामद गाई । सुजन सजीवनि मूरि सुहाई ॥
सोइ बसुधा तल सुधा तरंगिनि । भय भंजनि भ्रम भेक भुअंगिनि ॥
असुर सेनसम नरकनिकंदिनि । साधु बिबुध कुल हित गिरि नंदिनि ॥
संत समाज पयोधि रमा सी । बिस्व भार भर अचल छमा सी ॥
जमगन मुँह मसि जग जमुना सी । जीवन मुकुति हेतु जनु कासी ॥
रामहि प्रिय पावनि तुलसी सी । तुलसिदास हित हियँ हुलसी सी ॥
सिव प्रिय मेकल सैल सुता सी । सकल सिद्धि सुख संपति रासी ॥
सदगुन सुरगन अंब अदिति सी । रघुबर भगति प्रेम परमिति सी ॥

रामकथा मंदाकिनी; चित्रकूट चित चारु ।
तुलसी सुभग सनेह बन, सिय रघुबीर बिहारु ॥
रामकथा सुरधेनु सम, सेवत सब सुखदानि ।
सत समाज सुरलोक सब, को न सुनै अस जानि ॥

शिवजी राम के प्यारे हैं

जपहु जाइ सङ्कर सत नामा । होइहि तुरत हृदय विश्रामा ॥
कोउ नहिं सिव समान प्रिय मोरें । अस परतीति तजहु जनि भोरें ॥
जेहि पर कृपा न करहिं पुरारी । सो न पाव मुनि भगति हमारी ॥

अज्ञानियों की दशा

जिनके अगुन न सगुन बिबेका । जल्पहिं कल्पित बचन अनेका ॥
हरि माया बस जगत भ्रमाहीं । तिन्हहि कहत कछु अघटित नाहीं ॥
बातुल भूतबिबस मतवारे । ते नहिं बोलहिं बचन बिचारे ॥
जिन्ह कृत महामोह मद पाना । तिन्हकर कहा करिअ नहिं काना ॥

सगुन और निर्गुण ब्रह्म की समता

सगुनहिं अगुनहिं नहिं कछु भेदा । गावहिं मुनि पुरान बुधि बेदा ॥
अगुन अरूप अलख अज जोई । भगत प्रेम बस सगुन सो होई ॥
जो गुनरहित सगुन सोइ कैसे । जलु हिम उपल बिलग नहिं जैसे ॥
जासु नाम भ्रम तिमिर पतंगा । तेहि किमि कहिअ बिमोह प्रसंगा ॥
राम सच्चिदानन्द दिनेसा । नहिं तहँ मोहनिसा लवलेसा ॥
सहज प्रकासरूप भगवाना । नहिं तहँ पुनि बिग्यान बिहाना ॥
हरष विषाद ग्यान अज्ञाना । जीव धर्म अहमिति अभिमाना ॥
राम ब्रह्म व्यापक जग जाना । परमानंद परेस पुराना ॥

पुरुष प्रसिद्ध प्रकास निधि, प्रगट परावरनाथ ।
रघुकुलमनि मम स्वामि सोइ, कहि सिवँ नायउ माथ ॥

निज भ्रम नहिं समुझहिं अग्यानी । प्रभु पर मोह धरहिं जड़ प्रानी ॥
जथा गगन घनपटल निहारी । झाँपेउ भानु कहहिं कुबिचारी ॥
चितव जो लोचन अंगुलि लाएँ । प्रगट जुगल ससि तेहि के भाएँ ॥
उमा रामविषइक अस मोहा । नभ तम धूम धूरि जिमि सोहा ॥
विषयकरन सुर जीव समेता । सकल एक तें एक सचेता ॥
सब कर परम प्रकासक जोई । राम अनादि अवधिपति सोई ॥
जगति प्रकास्य प्रकासक रामू । मायाधीस ग्यान गुन धामू ॥
जासु सत्यता तें जड़ माया । भास सत्य इव मोह सहाया ॥

रजत सीप महुँ भास जिमि, जथा भानुकर बारि।
जदपि मृषा तिहुँ काल सोइ, भ्रम न सकइ कोउ टारि॥

जासु कृपा अस भ्रम मिटि जाई। गिरिजा सोइ कृपाल रघुराई॥
आदि अंत कोउ जासु न पावा। मति अनुमानि निगम अस गावा॥
बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना। कर बिनु करम करइ बिधि नाना॥
आनन रहित सकल रस भोगी। बिनु बानी बकता बड़ जोगी॥
तन बिनु परस नयन बिनु देखा। ग्रहइ घ्रान बिनु बास असेषा॥
असि सब भाँति अलौकिक करनी। महिमा जासु जाइ नहिं बरनी॥

जेहि इमि गावहिं बेद बुध, जाहि धरहिं मुनि ध्यान।
सोइ दसरथसुन भगत हित, कोसलपति भगवान॥

ईश्वर अवतार कब लेते हैं ?

जब जब होइ धरम कै हानी। बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी॥
करहिं अनीति जाइ नहीं बरनी। सीदहीं बिप्र धेनु सुर धरनी॥
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा॥

असुर मारि थापहिं सुरन्ह, राखहिं निज श्रुति सेतु।
जग बिस्तारहिं बिसद जस, रामजन्म कर हेतु॥

बसंत ऋतु का वर्णन

कुसुमित बिबिध बिटप बहुरङ्गा। कूजहिं कोकिल गुंजहिं भृङ्गा॥
चली सुहावनि त्रिबिध बयारी। काम कृसानु बढ़ावनिहारी॥
रम्भादिक सुरनारि नवीना। सकल असमसर कला प्रबीना॥
करहिं गान बहु तान तरङ्गा। बहुबिधि क्रीड़हिं पानि पतङ्गा॥

स्वयंभू मनु और सतरूपा को भगवद्दर्शन

नील सरोरुह नील मनि, नील नीरधर स्याम।
लाजहिं तनु सोभा निरखि, कोटि कोटि सत काम॥

सरद मयंक बदन छबि सींवा। चारु कपोल चिबुक दर ग्रीवा ॥
अधर अरुन रद सुन्दर नासा। बिधुकर निकर बिनिंदक हासा॥
नव अंबुज अंबक छबि नीकी। चितवनि ललित भावँति जीकी॥
भृकुटि मनोज चाप छबि हारी। तिलक ललाट पटल दुतिकारी ॥
कुंडल मकर मुकुट सिर भ्राजा। कुटिल केस जनु मधुप समाजा॥
उर श्रीबत्स रुचिर बनमाला। पदिक हार भूषन मनिजाला ॥
केहरि कंधर चारु जनेऊ। बाहु बिभूषन सुन्दर तेऊ ॥
करि कर सरिस सुभग भुजदंडा। कटि निषङ्ग कर सर कोदंडा ॥

तड़ित बिनिंदक पीतपट, उदर रेख बर तीनि।
नाभि मनोहर लेति जनु, जमुन भँवर छबि छीनि ॥

पद राजीव बरनि नहीं जाहीं। मुनि मन मधुप बसहीं जिन्ह माहीं॥
बाम भाग सोभति अनुकूला। आदि सक्ति छबि निधि जगमूला॥
जासु अंस उपजहिं गुनखानी। अगनित लच्छि उमा ब्रह्मानी ॥
भृकुटि बिलास जासु जग होई। राम बाम दिसि सीता सोई ॥

बड़े सहज ही कृपालु होते हैं

बड़े सनेह लघुन्ह पर करहीं। गिरि निज सिरनि सदा तृन धरहीं॥
जलधि अगाध मौलि बह फेनू। संतत धरनि धरत सिर रेनू ॥

ईश्वर प्रेम से पैदा होते हैं

हरि व्यापक सर्वत्र समाना। प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना ॥
देस काल दिसि बिदिसिहु माहीं। कहहु सो कहाँ जहाँ प्रभु नाहीं॥
अग जगमय सब रहित बिरागी। प्रेम तें प्रभु प्रगटइ जिमि आगी॥

राम-जन्म और उनका स्वरूप

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनिमनहारी अदभुत रूप बिचारी ॥

लोचन अभिरामा तनु घनश्यामा निजआयुध भुजचारी।
भूषन बनमाला नयन बिसाला सोभासिंधु खरारी॥

कह दुइ कर जोरी अस्तुति तोरी केहि बिधि करौं अनंता।
माया गुनग्यानातीत अमाना वेद पुरान भनंता॥
करुना सुखसागर सब गुन आगर जेहि गावहिं श्रुति संता।
सो मम हित लागी जन अनुरागी भयउ प्रकट श्रीकंता॥

ब्रह्मांड निकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति बेद कहै।
मम उर सो बासी यह उपहासी सुनत धीरमति थिर न रहै॥
उपजा जब ज्ञाना प्रभु मुसकाना चरित बहुत बिधि कीन्ह चहै।
कहि कथा सुहाई मातु बुझाई जेहिं प्रकार सुति प्रेम लहै॥

माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा।
कीजै सिसुलीला अति प्रियसीला यह सुख परम अनूपा॥
सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना होइ बालक सुरभूपा।
यह चरित जे गावहिं हरिपद पावहिं ते न परहिं भवकूपा॥

बिप्र धेनु सुर संत हित, लीन्ह मनुज अवतार।
निज इच्छा निर्मित तनु, माया गुन गोपार॥

रामचन्द्रजी का बाल-स्वरूप

ब्यापक ब्रह्म निरंजन, निर्गुन बिगत बिनोद।
सो अज प्रेम भगतिबस, कौसल्या कें गोद॥
काम कोटि छबि स्याम सरीरा। नील कंज बारिद गंभीरा॥
अरुन चरन पंकज नख जोती। कमल दलन्हि बैठे जनु मोती॥

रेख कुलिस ध्वज अंकुस सोहे । नूपुर धुनि सुनि मुनि मन मोहे ॥
कटि किंकिनी उदय त्रय रेखा । नाभि गभीर जानि जेहिं देखा ॥
भुज बिसाल भूषन जुत भूरी । हियँ हरि नख अति सोभा रूरी ॥
उर मनिहार पदिक की सोभा । बिप्र चरन देखत मन लोभा ॥
कंबु कंठ अति चिबुक सुहाई । आनन अमित मदन छबि छाई ॥
दुइ दुइ दसन अधर अरुनारे । नासा तिलक को बरनै पारे ॥
सुंदर श्रवण सुचारु कपोला । अति प्रिय मधुर तोतरे बोला ॥
(नील कमल दोउ नयन बिसाला । बिकट भृकुटि लटकन बरभाला ॥)
चिक्कन कच कुंचित गभुआरे । बहु प्रकार रचि मातु सँवारे ॥
पीत झगुलिया तनु पहिराई । जानु पानि बिचरनि मोहि भाई ॥
रूप सकहिं नहिं कहि श्रुति सेषा । सो जानइ सपनेहुँ जेहि देखा ॥

सुख सन्दोह मोहपर, ग्यान गिरा गोतीत ।
दंपति परम प्रेमबस, कर सिसु चरित पुनीत ॥

चारों भाइयों का नामकरण

नाम करन कर अवसरु जानी । भूप बोलि पठए मुनि ग्यानी ॥
करि पूजा भूपति अस भाषा । धरिय नाम जो मुनि गुनि राखा ॥
इन्ह के नाम अनेक अनूपा । मैं नृप कहब स्वमति अनुरूपा ॥
जो आनन्द सिन्धु सुख रासी । सीकर तें त्रैलोक सुपासी ॥
सो सुख धाम राम अस नामा । अखिल लोक दायक बिश्रामा ॥
बिस्व भरन पोषन कर जोई । ताकर नाम भरत अस होई ॥
जाके सुमिरन तें रिपु नासा । नाम सत्रुहन वेद प्रकासा ॥

लच्छन धाम राम प्रिय, सकल जगत आधार ।
गुरु बसिष्ठ तेहि राखा, लछिमन नाम उदार ॥

धरे नाम गुरु हृदयँ बिचारी । बेद तत्व नृप तव सुत चारी ॥
मुनि धन जन सरबस सिव प्राना । बाल केलि रस तेहिं सुख माना ॥

जनकपुर की शोभा

पुर रम्यता राम जब देखी । हरषे अनुज समेत बिसेखी ॥
बापी कूप सरित सर नाना । सलिल सुधासम मनिसोपाना ॥
गुंजत मंजु मत्त रस भृंगा । कूजत कल बहुबरन बिहंगा ॥
बरन बरन बिकसे बनजाता । त्रिबिध समीर सदा सुखदाता ॥

सुमनबाटिका बाग बन, बिपुल बिहंग निवास ।
फूलत फलत सुपल्लवंत, सोहत पुर चहुँ पास ॥

बनइ न बरनत नगर निकाई । जहाँ जाइ मन तहँइँ लोभाई ॥
चारु बजारु बिचित्र अँबारी । मनिमय बिधि जनु स्वकर सँवारी ॥
धनिक बनिक बर धनद समाना । बैठे सकल बस्तु लै नाना ॥
चौहट सुंदर गलीं सुहाई । संतत रहहिं सुगंध सिंचाई ॥
मंगलमय मंदिर सब केरें । चित्रित जनु रतिनाथ चितेरें ॥
पुर नर नारि सुभग सुचि संता । धरमसील ग्यानी गुनवंता ॥
अति अनूप जहँ जनकनिवासू । बिथकहिं बिबुध बिलोकि बिलासू ॥
होत चकित चित कोट बिलोकी । सकल भुवन सोभा जनु रोकी ॥

धवल धाम मनि पुरट पट, सुघटित नाना भाँति ।
सियनिवास सुंदर सदन, सोभा किमि कहि जाति ॥

भूप बागु बर देखेउ जाई । जहँ बसंत रितु रही लोभाई ॥
लागे बिटप मनोहर नाना । बरन बरन बर बेलि बिताना ॥
नव पल्लव फल सुमन सुहाए । निज संपति सुर रूख लजाए ॥
चातक कोकिल कीर चकोरा । कूजत बिहग नटत कल मोरा ॥

मध्य बाग सरु सोह सुहावा। मनिसोपान बिचित्र बनावा॥
बिमल सलिलु सरसिज बहुरंगा। जलखग कूजत गुंजत भृंगा॥

बागु तड़ागु बिलोकि प्रभु, हरषे बंधु समेत।
परम रम्य आरामु यहु, जो रामहिं सुख देत॥

पार्वती जी की प्रार्थना

जय जय गिरिबरराज किसोरी। जय महेस मुख चंद चकोरी॥
जय गजबदन षडानन माता। जगत जननि दामिनि दुति गाता॥
नहिं तव आदि मध्य अवसाना। अमित प्रभाउ बेदु नहिं जाना॥
भव भव बिभव पराभव कारिनि। बिस्व बिमोहनि स्वबस बिहारिनि॥

पतिदेवता सुतीय महुँ, मातु प्रथम तव रेख।
महिमा अमित न सकहिं कहि, सहस सारदा सेष॥

सेवत तोहिं सुलभ फल चारी। बरदायनी पुरारि पिआरी॥
देवि पूजि पदकमल तुम्हारे। सुर नर मुनि सब होहिं सुखारे॥
मोर मनोरथु जानहु नीकें। बसहु सदा उर पुर सबही कें॥
कीन्हेउँ प्रगट न कारन तेहीं। अस कहि चरन गहे बैदेहीं॥

श्रीचरण-महिमा

जे पदसरोज मनोज अरि उर सर सदैव बिराजहीं।
जे सुकृत सुमिरत बिमलता मन सकल कलिमल भाजहीं॥
जे परसि मुनिबनिता लही गति रही जो पातकमई।
मकरंदु जिन्ह को संभु सिर सुचिता अवधि सुर बरनई॥
करि मधुप मन मुनि जोगिजन जे सेइ अभिमत गति लहैं।
ते पद पखारत भाग्यभाजनु जनकु जय जय सब कहैं॥

राम का विराट-स्वरूप

जिन्ह कें रही भावना जैसी। प्रभुमूरति तिन्ह देखी तैसी ॥
देखहिं रूप महा रनधीरा। मनहुँ बीररसु धरें शरीरा ॥
डरे कुटिल नृप प्रभुहिं निहारी। मनहुँ भयानक मूरति भारी ॥
रहे असुर छल छोनिपबेषा। तिन्ह प्रभु प्रकट कालसम देखा ॥
पुरबासिन्ह देखे दोउ भाई। नरभूषन लोचन सुखदाई ॥

नारि बिलोकहिं हरषि हियं, निज निज रुचि अनुरूप।
जनु सोहत सिंगार धरि, मूरति परम अनूप ॥

बिदुषन प्रभु बिराट मय दीसा। बहु मुख कर पग लोचन सीसा ॥
जनक जाति अवलोकहिं कैसें। सजन सगे प्रिय लागहिं जैसें ॥
सहित विदेह बिलोकहिं रानी। सिसु सम प्रीति न जाति बखानी ॥
जोगिन्ह परम तत्त्वमय भासा। सांत सुद्ध सम सहज प्रकासा ॥
हरि भगतन्ह देखे दोउ भ्राता। इष्टदेव इव सब सुखदाता ॥
रामहिं चितव भायँ जेहि सीया। सो सनेह सुखु नहिं कथनीया ॥

सीता जी की अपार सुन्दरता

जो पटतरिय तीय सम सीया। जग असि जुबति कहाँ कमनीया ॥
गिरा मुखर तन अरध भवानी। रति अति दुखित अतनु पति जानी ॥
बिष बारुनी बंधु प्रिय जेही। कहिअ रमासम किमि बैदेही ॥
जो छबि सुधा पयोनिधि होई। परम रूपमय कच्छपु सोई ॥
सोभा रजु मंदरु सिंगारू। मथै पानिपंकज निज मारू ॥

एहि बिधि उपजै लच्छि जब, सुंदरता सुख मूल।
तदपि सकोच समेत कबि, कहहिं सीय समतूल ॥

छोटी वस्तुओं के चमत्कार

कहँ कुम्भज कहँ सिंधु अपारा। सोषेउ सुजसु सकल संसारा॥
रविमंडल देखत लघु लागा। उदय तासु त्रिभुवन तम भागा॥
मंत्र परम लघु जासु बस, बिधि हरि हर सुर सर्ब।
महामत्त गजराज कहुँ, बस कर अंकुस खर्ब॥

समय चूकने से हानि

तृषित बारि बिनु जो तनु त्यागा। मुएँ करइ का सुधातड़ागा॥
का बरषा जब कृषी सुखाने। समय चुके पुनि का पछिताने॥

शुभ सगुन के लक्षण

बनइ न बरनत बनी बराता। होहिं सगुन सुंदर सुभदाता॥
चारा चाषु बाम दिसि लेई। मनहुँ सकल मंगल कहि देई॥
दाहिन काग सुखेत सुहावा। नकुलदरसु सब काहूँ पावा॥
सानुकूल बह त्रिबिध बयारी। सघट सबाल आव बरनारी॥

सूक्तियाँ

होइहि सोइ जो राम रचि राखा। को करि तर्क बढ़ावै साखा॥

जलु पय सरिस बिकाइ, देखहु प्रीति कि रीति भलि।
बिलग होइ रसु जाइ, कपट खटाई परत पुनि॥

नहिं कोउ अस जनमा जगमाहीं। प्रभुता पाइ जाहि मद नाहीं॥

जदपि मित्र प्रभु पितु गुरु गेहा। जाइअ बिनु बोलेहुँ न सँदेहा॥
तदपि बिरोध मान जहँ कोई। तहाँ गएँ कल्यानु न होई॥

जद्यपि जग दारुन दुख नाना। सब तें कठिन जाति अवमाना॥

मातु पिता गुर प्रभु कै बानी। बिनहिं बिचार करिअ सुभ जानी॥
गुर के बचन प्रतीति न जेही। सपनेहुँ सुगम न सुख सिधि तेही॥

महादेव अवगुन भवन, बिष्नु सकल गुन धाम।
जेहिं कर मनु रम जाहि सन, तेहि तेही सन काम॥

परहित लागि तजइ जो देही। संतत सन्त प्रसंसहिं तेही॥

जे कामी लोलुप जग माहीं। कुटिल काक इव सबहिं डेराहीं॥

राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई। करै अन्यथा अस नहिं कोई॥

अति प्रचंड रघुपति कै माया। जेहि न मोह अस को जग जाया॥

सुर नर मुनि कोउ नाहिं, जेहि न मोह माया प्रबल।
अस बिचारि मन माहिं, भजिअ महामाया पतिहि॥

तुलसी जस भवतव्यता, तैसी मिलइ सहाइ।
आपुनु आवइ ताहि पहिं, ताहि तहाँ लै जाइ॥

तुलसी देखि सुबेषु, भूलहिं मूढ़ न चतुर नर।
सुन्दर केकिहि पेखु, बचन सुधासम असन अहि॥

रिपु तेजसी अकेल अपि, लघु करि गनिअ न ताहु।
अजहुँ देत दुख रबि ससिहि, सिर अवसेषित राहु॥

भरद्वाज सुनु जाहि जब, होइ बिधाता बाम।
धूरि मेरु सम जनक जम, ताहि ब्याल सम दाम॥

अस प्रभु दीन बन्धु हरि, कारन रहित दयाल।
तुलसिदास सठ तेहि भजु, छाड़ि कपट जंजाल॥

जिन्ह कै लहहिं न रिपु रन पीठी। नहि पावहिं परतिय मनु डीठी॥
मंगन लहहिं न जिन्ह कै नाहीं। ते नर बर थोरे जग माहीं॥

जेहि कै जेहि पर सत्य सनेहू। सो तेहि मिलइ न कछु संदेहू॥

सूर समर करनी करहिं, कहि न जनावहिं आपु।
विद्यमान रन पाइ रिपु, कायर कथहिं प्रतापु॥

जो लरिका कछु अचगरि करहीं। गुर पितु मातु मोद मन भरहीं॥

टेढ़ जानि सब बंदइ काहू। बक्र चन्द्रमहि ग्रसइ न राहू॥

भइ जग बिदित दच्छ गति सोई। जस कछु संभु बिमुख की होई॥

कबहूँ जोग बियोग न जाकें। देखा प्रगट बिरह दुख ताकें॥

अति बिचित्र रघुपति चरित, जानहिं परम सुजान।
जे मतिमन्द बिमोह बस, हृदयँ धरहिं कछु आन॥

सीम कि चापि सकै कोउ तासू। बड़ रखवार रमापति जासू॥

सुमिरत जाहि मिटै अज्ञाना। सोइ सर्बग्य राम भगवाना॥

जासु कथा कुंभज रिषि गाई। भगति जासु मैं मुनिहिं सुनाई ॥
सोइ मम इष्टदेव रघुबीरा। सेवत जाहि सदा मुनि धीरा ॥

संत संभु श्रीपति अपबादा। सुनिय जहाँ तहँ असि मरजादा ॥
काटिय तासु जीभ जो बसाई। श्रवन मूँदि न त चलिअ पराई ॥

फुटकर

निगम नेति सिव अंत न पावा। ताहि धरै जननी हठि धावा ॥

जिन्ह करम न इन्द्र सन नहिं राता। ते जन बंचित किये बिधाता ॥

जाकी सहज स्वास श्रुति चारी। सो हरि पढ़ यह कौतुक भारी ॥

व्यापक अकल अनीह अज, निर्गुन नाम न रूप।
भगत हेतु नाना बिधि, करत चरित्र अनूप ॥

ग्यान बिराग सकल गुन अयना। सो प्रभु मैं देखब भरि नयना ॥

प्रभु ब्रह्मन्य देव मैं जाना। मोहि निति पिता तजेउ भगवाना ॥

तब रिषि निज नाथहिं जिय चीन्ही। बिद्यानिधि कहुँ बिद्या दीन्ही ॥

सुन्दर स्याम गौर दोउ भ्राता। आनँद हू के आनँद दाता ॥
इन्ह कै प्रीति परस्पर पावनि। कहि न जाइ मन भाव सुहावनि ॥

धाये धाम काम सब त्यागी। मनहुँ रंक निधि लूटन लागी ॥

सिव सम को रघुपति व्रतधारी । बिनु अघ तजो सती असि नारी ॥
पनु करि रघुपति भगति देखाई । को सिव सम रामहिं प्रिय भाई ॥

ईच्छित फल बिनु सिव अवराधे । लहइ न कोटि जोग जप साधे ॥

बिबसहुँ जासु नाम नर कहहीं । जन्म अनेक रचित अघ दहहीं ॥
सादर सुमिरन जे नर करहीं । भव बारिधि गोपद इव तरहीं ॥

भायँ कुभायँ अनख आलसहूँ । नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ ॥

बोले बिहँसि महेस तब, ग्यानी मूढ़ न कोइ ।
जेहि जस रघुपति करहिं जब, सो तस तेहि छन होइ ॥

सुनु मुनि मोह होइ मन ताके । ग्यान बिराग हृदय नहिं जाके ॥

हरि अनन्त हरिकथा अनन्ता । कहहिं सुनहिं बहु बिधि सब संता ॥

सुत बिषयक तव पद रति होऊ । मोहिं बरु मूढ़ कहै किन कोऊ ॥
मणिबिनु फणि जिमि जल बिनु मीना । मम जीवन तिमि तुमहिं अधीना ॥

प्रभु जानत सब बिनहिं जनाये । कहहु कवन सिधि लोक रिझाये ॥

योग युक्ति तप मंत्र प्रभाऊ । फलै तबहिं जब करिय दुराऊ ॥

जाकर नाम सुनत सुभ होई । मोरे गृह आवा प्रभु सोई ॥

यह सब चरित जानं पै सोई । कृपा राम की जापर होई ॥

जिन्ह रघुनाथ चरन रति मानी। तिन्ह की यह गति प्रगट भवानी।

रघुपति बिमुख जतन कर कोरी। कवन सकै भव बन्धन छोरी॥

मन क्रम बचन अगोचर जोई। दसरथ अजिर बिचर प्रभु सोई॥

वय किसोर सुखमा सदन, स्याम गौर सुख धाम।
अंग अंग पर बारिअहिं, कोटि कोटि सत काम॥

कहहु सखी अस को तनुधारी। जो न मोह यह रूप निहारी॥

सखि हमरें आरति अति ताते। कबहुँक ए आवहिं एहि नाते॥

नाहिं त हम कहुँ सुनहु सखि, इन्ह कर दरसनु दूरि।
यह संघटु तब होइ जब, पुन्य पुराकृत भूरि॥

लव निमेष महँ भुवन निकाया। रचै जासु अनुसासन माया॥

भगति हेतु सोइ दीनदयाला। चितवत चकित धनुष मखसाला॥

जिन्ह के चरन सरोरुह लागी। करत बिबिध जप जोग बिरागी॥
तेइ दोउ बंधु प्रेम जनु जीते। गुरु पद कमल पलोटत प्रीते॥

जासु त्रास डर कहुँ डर होई। भजन प्रभाव दिखावत सोई॥

स्याम गौर किमि कहौं बखानी। गिरा अनयन नयन बिनु बानी॥

बरनत छबि जहँ तहँ सब लोगू। अवसि देखिये देखन जोगू॥

लखन कहा जस भाजनु सोई। नाथ कृपा तब जापर होई॥

करहु जाइ जा कहुँ जोइ भावा। हम तौ आजु जनम फलु पावा॥

डगइ न संभु सरासन कैसे। कामी बचन सती मनु जैसे॥

सब नृप भये जोग उपहासी। जैसे बिनु बिराग संन्यासी॥

सोहति सीय राम कै जोरी। छबि सिंगारु मनहुँ एक ठौरी॥

हमहिं तुमहिं सरवरि कसि नाथा। कहहु न कहाँ चरन कहँ माथा॥

बिप्र बंस कै असि प्रभुताई। अभय होइ जो तुमहिं डेराई॥

जिन्ह के जस प्रताप के आगे। ससि मलीन रबि सीतल लागे॥
तिन्ह कहँ कहिअ नाथ किमि चीन्हे। देखिय रबि कि दीप कर लीन्हे॥

जिमि सरिता सागर महुँ जाहीं। जद्यपि ताहि कामना नाहीं॥
तिमि सुख संपति बिनहिं बुलाये। धर्म सील पहिं जाहिं सुभाये॥

मंगल सगुन सुगम सब ताकें। सगुन ब्रह्म सुन्दर सुत जाकें॥

जिन्ह कर नाम लेत जग माहीं। सकल अमंगल मूल नसाहीं॥
करतल होहिं पदारथ चारी। ते सिय रामु कहेउ कामारी॥

मैं कछु कहउँ एक बल मोरें। तुम रीझहु सनेह सुठि थोरें॥

बार बार मागउँ कर जोरे। मनु परिहरै चरन जनि भोरे॥

जेहि बिधि नाथ होइ हित मोरा। करहु सो बेगि दास मैं तोरा॥

———

मोरि सुधारिहि सो सब भाँती। जासु कृपा नहिं कृपा अघाती॥

———

मोरे हित हरि सम नहि कोऊ। यहि अवसर सहाय सो होऊ॥

———

जो अनाथ हित हम पर नेहू। तौ प्रसन्न होइ यह बर देहू॥
जो सरूप बस सिव मन माहीं। जेहि कारन मुनि जतन कराहीं॥
जो भुसुण्डि मन मानस हंसा। सगुन अगुन जेहि निगम प्रसंसा॥
देखहिं हम सो रूप भरि लोचन। कृपा करहु प्रनतारति मोचन॥

———

अयोध्याकाण्ड

भक्त की इच्छा

जेहि जेहि जोनि कर मबस भ्रमहीं। तहँ तहँ ईसु देउ यह हमहीं॥
सेवक हम स्वामी सियनाहू। होउ नात यह ओर निबाहू॥

कामदेव की शक्ति

सुरपति बसइ बाँहबल जाके। नरपति सकल रहहिं रुख ताकें॥
सो सुनि तियरिस गयउ सुखाई। देखहु काम प्रताप बड़ाई॥
सूल कुलिस असि अँगवनिहारे। ते रतिनाथ सुमन सर मारे॥

पितृभक्त पुत्र की अवस्था

धन्य जनमु जगतीतल तासू। पितहि प्रमोदु चरित सुनि जासू॥
चारि पदारथ करतल ताकें। प्रिय पितु मातु प्रान सम जाके॥

स्त्री की प्रबलता

सत्य कहहिं कबि नारिसुभाऊ। सब बिधि अगहु अगाध दुराऊ॥
निज प्रतिबिंबु बरुकु गहि जाई। जानि न जाइ नारिगति भाई॥

काह न पावकु जारि सक, का न समुद्र समाइ।
का न करै अबला प्रबल, केहि जग कालु न खाइ॥

पुरनारियों का कैकई को समझाना

बिप्रबधू कुलमान्य जठेरी। जे प्रिय परम केकई केरी॥
लगीं देन सिख सीलु सराही। बचन बान सम लागहिं ताही॥

भरतु न मोहिं प्रिय राम समाना। सदा कहहु यहु सबु जगु जाना॥
करहु राम पर सहज सनेहू। केहि अपराध आज बन देहू॥
कबहुँ न कियहु सवति आरेसू। प्रीति प्रतीति जान सबु देसू॥
कौसल्याँ अब काह बिगारा। तुम्ह जेहि लागि बज्र पुर पारा॥

सीय की पिय सँग परिहरिहि, लखनु कि रहिहहिं धाम।
राज कि भूजब भरत पुर, नृपु कि जियहिं बिनु राम॥

अस बिचारि उर छाड़हु कोहू। सोक कलंक कोटि जनि होहू॥
भरतहि अवसि देहु जुवराजू। कानन काह राम कर काजू॥
नाहिन रामु राज के भूखे। धर्म धुरीन बिषय रस रूखे॥
गुरुगृह बसहु राम तजि गेहू। नृप सन अस बरु दूसर लेहू॥
जौं नहिं लगिहहु कहें हमारे। नहिं लागिहि कछु हाथ तुम्हारे॥
जौं परिहास किन्ह कछु होई। तौ कहि प्रगट जनावहु सोई॥
राम सरिस सुत कानन जोगू। काह कहिहिं सुनि तुम्ह कहुँ लोगू॥
उठहु बेगि सोइ करहु उपाई। जेहि बिधि सोकु कलंकु नसाई॥

जेहि भाँति सोकु कलंकु जाइ उपाय करि कुल पालही।
हठि फेरि रामहिं जात बन जनि बात दूसरि चालही॥
जिमि भानु बिनु दिनु प्रान बिनु तनु चन्द्र बिनु जिमि जामिनी।
तिमि अवध तुलसीदास प्रभु बिनु समुझ धौं जिय भामिनी॥

सास का पुत्रबधू पर प्रेम

मैं पुनि पुत्रबधू प्रिय पाई। रूप रास गुन शील सुहाई॥
नयन पुतरि करि प्रीति बढ़ाई। राखेउँ प्रान जानकिहिं लाई॥
कलपबेलि जिमि बहुबिधि लाली। सींचि सनेह सलिल प्रतिपाली॥
फूलत फलत भयउ बिधि बामा। जानि न जाइ काह परिनामा॥

पलंग पीठि तजि गोद हिंडोरा । सियं न दीन्ह पगु अवनि कठोरा ॥
जिअनमूरि जिमि जोगवत रहऊँ । दीप बाति नहिं टारन कहऊँ ॥

बन के लिए कौन स्त्रियाँ चाहिए

बन हित कोल किरात किसोरी । रचीं बिरंचि बिषयसुख भोरी ॥
पाहनकृमि जिमि कठिन सुभाऊ । तिन्हहि कलेसु न कानन काऊ ॥
कै तापस तिय कानन जोगू । जिन्ह तप हेतु तजा सब भोगू ॥
सिय बन बसिहि तात केहि भाँती । चित्रलिखित कपि देखि डराती ॥
सुरसर सुभग बनज बनचारी । डाबर जोगु कि हंसकुमारी ॥

राम जी की सीता जी को शिक्षा

राजकुमारि सिखावनु सुनहू । आन भाँति जियँ जनि कछु गुनहू ॥
आपन मोर नीक जौं चहहू । बचनु हमार मानि गृह रहहू ।
आयसु मोर सासु सेवकाई । सब बिधि भामिनि भवन भलाई ॥
एहि ते अधिक धरमु नहिं दूजा । सादर सासु ससुर पद पूजा ॥
जब जब मातु करिहि सुधि मोरी । होइहि प्रेम बिकल मति भोरी ॥
तब तब तुम्ह कहि कथा पुरानी । सुंदर समझायहु मृदुबानी ॥
कहउँ सुभायँ सपथ सत मोहीं । सुमुखि मातु हित राखउँ तोहीं ॥

गुर श्रुति संमत धरम फलु, पाइअ बिनहिं कलेस ।
हठ बस सब संकट सहे, गालव नहुष नरेस ॥

मैं पुनि करि प्रवान पितु बानी । बेगि फिरब सुनु सुमुखि सयानी ॥
दिवस जात नहिं लागिहि बारा । सुंदरि सिखवनु सुनहु हमारा ॥
जौं हठ करहु प्रेम बस बामा । तौ तुम्ह दुखु पाउब परिनामा ॥
काननु कठिन भयंकरु भारी । घोर घामु हिम बारि बयारी ।
कुस कंटक मग काँकर नाना । चलब पयादेहिं बिनु पदत्राना ॥
चरनकमल मृदु मंजु तुम्हारे । मारग अगम भूमिधर भारे ॥

कंदर खोह नदी नद नारे । अगम अगाध न जाहिं निहारे ॥
भालु बाघ बृक केहरि नागा । करहिं नाद सुनि धीरजु भागा ॥

भूमि सयन बलकल बसन, असनु कन्द फल मूल ।
ते कि सदा सब दिन मिलहिं, सबुइ समय अनुकूल ॥

नर अहार रजनीचर चरहीं । कपटबेष बिधि कोटिक करहीं ॥
लागइ अति पहार कर पानी । बिपिन बिपति नहिं जाइ बखानी ॥
ब्याल कराल बिहग बन घोरा । निसिचर निकर नारि नर चोरा ॥
डरपहिं धीर गहन सुधि आएँ । मृगलोचनि तुम्ह भीरु सुभाएँ ॥
हंसगवनि तुम्ह नहिं बन जोगू । सुनि अपजसु मोहि देइहि लोगू ॥
मानस सलिल सुधाँ प्रतिपाली । जिअइ कि लवनपयोधि मराली ॥
नव रसाल बन बिहरनसीला । सोह कि कोकिल बिपिन करीला ॥
रहहु भवन अस हृदयँ बिचारी । चंदबदनि दुखु कानन भारी ॥

सहज सुहृद गुर स्वामि सिख, जो न करइ सिर मानि ।
सो पछिताइ अघाइ उर, अवसि होइ हित हानि ॥

पति ही स्त्री का सर्वस्व है

प्राननाथ करुनायतन, सुन्दर सुखद सुजान ।
तुम्ह बिनु रघुकुल कुमुद बिधु, सुरपुर नरक समान ॥

मातु पिता भगिनी प्रिय भाई । प्रिय परिवारु सुहृद समुदाई ॥
सासु ससुर गुर सजन सहाई । सुत सुंदर सुसील सुखदाई ॥
जहँ लगि नाथ नेह अरु नाते । पिय बिनु तियहि तरनि तें ताते ॥
तनु धनु धामु धरनि पुर राजू । पति बिहीन सबु सोक समाजू ॥
भोग रोगसम भूषन भारू । जम जातना सरिस संसारू ॥
प्राननाथ तुम्ह बिनु जगमाहीं । मो कहुँ सुखद कतहुँ कछु नाहीं ॥

जिय बिनु देह नदी बिनु बारी। तैसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी ॥
नाथ सकल सुख साथ तुम्हारे। सरद बिमल बिधु बदनु निहारें ॥

खग मृग परिजन नगरु बनु. बलकल बिमल दुकूल।
नाथ साथ सुर सदन सम, परनसाल सुखमूल ॥

बनदेवी बनदेव उदारा। करिहहिं सासु ससुर सम सारा ॥
कुस किसलय साथरी सुहाई। प्रभु सँग मंजु मनोज तुराई ॥
कंद मूल फल अमिअ अहारू। अवध सौंध सत सरिस पहारू ॥
छिनुछिनुप्रभु पदकमलबिलोकी। रहिहउँमुदितदिवसजिमिकोकी ॥
बन दुख नाथ कहे बहुतेरे। भय बिषाद परिताप घनेरे ॥
प्रभु बियोग लवलेस समाना। सबमिलि होहिं न कृपा निधाना ॥
असजियँजानिसुजानसिरोमनि। लेइअ संग मोहि छाड़िअ जनि ॥
बिनती बहुत करौं का स्वामी। करुनामय उर अंतरजामी ॥

राखिअ अवध जो अवधि लगि, रहत न जनिअहिं प्रान।
दीनबन्धु सुंदर सुखद, सील सनेह निधान ॥

मोहिं मग चलत न होइहिहारी। छिनुछिनु चरनसरोज निहारी ॥
सबहिं भाँति पिय सेवा करिहौं। मारग जनित सकल श्रम हरिहौं ॥
पाय पखारि बैठि तरु छाहीं। करिहउँ बाउ मुदित मन माहीं ॥
श्रमकन सहित स्याम तनु देखें। कहँ दुख समउ प्रानपति पेखें ॥
सम महि तृन तरु पल्लव डासी। पाय पलोटिहिसबनिसि दासी ॥
बार बार मृदु मूरति जोही। लागिहि तात बयारि न मोही ॥
को प्रभु संगमोहि चितवनहारा। सिंघबधुहिजिमिससकसियारा ॥

राम जी का लक्ष्मण को उपदेश

तात प्रेमबस जनि कदराहू। समुझि हृदयँ परिनाम उछाहू ॥

मातु पिता गुरु स्वामि सिख, सिर धरि करहिं सुभायँ।
लहेउ लाभु तिन्ह जनम कर, नतरु जनमु जग जायँ॥

अस जिय जानि सुनहु सिख भाई। करहु मातु पितु पद सेवकाई॥
भवन भरत रिपुसूदन नाहीं। राउ वृद्ध मम दुखु मन माहीं॥
मैं बन जाउँ तुम्हहि लेइ साथा। होइ सबहि बिधि अवध अनाथा॥
गुरु पितु मातु प्रजा परिवारू। सब कहुँ परइ दुसह दुखभारू॥
रहहु करहु सब कर परितोषू। नतरु तात होइहि बड़ दोषू॥
जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी। सो नृपु अवसि नरक अधिकारी॥

सुमित्रा का लक्ष्मण जी को उपदेश

धीरजु धरेउ कुअवसर जानी। सहज सुहृद बोली मृदुबानी॥
तात तुम्हारि मातु बैदेही। पिता रामु सब भाँति सनेही॥
अवध तहाँ जहँ राम निवासू। तहँइँ दिवसु जहँ भानुप्रकासू॥
जौं पै सीय रामु बन जाहीं। अवध तुम्हार काजु कछु नाहीं॥
गुरु पितु मातु बंधु सुर साईं। सेइअहिं सकल प्रान की नाईं॥
रामु प्रानप्रिय जीवन जी के। स्वारथ रहित सखा सबही के॥
पूजनीय प्रिय परम जहाँ तें। सब मानिअहिं राम के नातें॥
अस जिय जानि संग बन जाहू। लेहु तात जग जीवन लाहू॥

भूरि भाग भाजनु भयहु, मोहि समेत बलि जाउँ।
जौं तुम्हरें मन छाड़ि छलु, कीन्ह रामपद ठाउँ॥

पुत्रवती जुबती जग सोई। रघुपति भगतु जासु सुतु होई॥
नतरु बाँझ भलि बादि बिआनी। राम बिमुख सुत तें हित जानी॥
तुम्हरेहिं भाग रामु बन जाहीं। दूसर हेतु तात कछु नाहीं॥
सकल सुकृत कर बड़ फलु एहू। राम सीय पद सहज सनेहू॥

रागु रोषु इरिषा मदु मोहू। जनि सपनेहुँ इन्ह के बस होहू॥
सकल प्रकार बिकार बिहाई। मन क्रम बचन करेहु सेवकाई॥
तुम्ह कहुँ बन सब भाँति सुपासू। सँग पितु मातु रामु सिय जासू॥
जेहिं न रामु बन लहहि कलेसू। सुत सोइ करेहु इहइ उपदेसू॥

उपदेसु यहु जेहिं तात तुम्हरें राम सिय सुख पावहीं।
पितु मातु प्रिय परिवार पुर सुख सुरति बन बिसरावहीं॥
तुलसी प्रभुहि सिख देइ आयसु दीन्ह पुनि आसिस दई।
रति होउ अबिरल अमल सिय रघुबीर पद नित नित नई॥

राम का माता-पिता के प्रति प्रेम

सोइ सब भाँति मोर हितकारी। जेहि तें रहै भुआल सुखारी॥

मातु सकल मोरे बिरहँ, जेहिं न होहिं दुखदीन॥
सोइ उपाय तुम्ह करहु सब, पुरजन परम प्रबीन॥

संसार की निर्मूलता

काहु न कोउ सुख दुखकर दाता। निज कृत करम भोग सबु भ्राता॥
जोग बियोग भोग भल मंदा। हित अनहित मध्यम भ्रमफंदा॥
जनमु मरनु जहँ लगि जगजालू। संपति बिपति करमु अरु कालू॥
धरनि धामु धनु पुर परिवारू। सरगु नरकु जहँ लगि ब्यवहारू॥
देखिअ सुनिअ गुनिअ मन माहीं। मोह मूल परमारथु नाहीं॥

सपने होइ भिखारि नृपु, रंकु नाकपति होइ।
जागें लाभु न हानि कछु, तिमि प्रपंच जियँ जोइ॥

अस बिचारि नहिं कीजिअ रोसू। काहुहि बादि न देइअ दोसू॥
मोह निसा सब सोवनिहारा। देखिय सपन अनेक प्रकारा॥
एहिं जग जामिनि जागहिं जोगी। परमारथी प्रपंच बियोगी॥
जानिअ तबहिं जीव जग जागा। जब सब बिषय बिलास बिरागा॥

होइ बिबेकु मोह भ्रम भागा। तब रघुनाथ चरन अनुरागा॥
सखा परम परमारथु एहू। मन क्रम बचन राम पद नेहू॥

धर्म के लिए संकट सहना

सिबि दधीच हरिचंद नरेसा। सहे धरम हित कोटि कलेसा॥
रतिदेव बलि भूप सुजाना। धरम धरेउ सहि संकट नाना॥
संभाबित कहुँ अपजस लाहू। मरन कोटि सम दारुन दाहू॥

बिना पति के सब ऐश्वर्य्य निरर्थक है

पितु वैभव बिलास मैं डीठा। नृप मनि मुकुट मिलित पद पीठा॥
सुखनिधान अस पितु गृह मोरें। पिय बिहीन मन भाव न भोरें॥
ससुर चक्कवइ कोसलराऊ। भुवन चारिदस प्रगट प्रभाऊ॥
आगें होइ जेहि सुरपति लेई। अरध सिंघासन आसनु देई॥
ससुर एतादृस अवध निवासू। प्रिय परिवारु मातु सम सासू॥
बिनु रघुपति पद पदुम परागा। मोहि केउ सपनेहुँ सुखद न लागा॥
अगम पंथ बनभूमि पहारा। करि केहरि सर सरित अपारा॥
कोल किरात कुरंग बिहंगा। मोहि सब सुखद प्रानपति संगा॥

केवट का श्रीराम के चरण धोने का विनोद

मागी नाव न केवटु आना। कहइ तुम्हार मरमु मैं जाना॥
चरन कमल रज कहुँ सबु कहई। मानुष करनि मूरि कछु अहई॥
छुअत सिला भइ नारि सुहाई। पाहन तें न काठ कठिनाई॥
तरनिउ मुनिघरिनी होइ जाई। बाट परइ मोरि नाव उड़ाई॥
एहिं प्रतिपालउँ सबु परिवारू। नहिं जानउँ कछु अउर कबारू॥
जौं प्रभु पार अवसि गा चहहू। मोहि पदपदुम पखारन कहहू॥

केवट का सौभाग्य

जासु नाम सुमिरत एक बारा। उतरहिं नर भवसिंधु अपारा॥
सोइ कृपालु केवटहि निहोरा। जेहिं जगु किय तिहुँ पगहु ते थोरा॥
बरसि सुमन सुर सकल सिहाहीं। एहि सम पुन्यपुंज कोउ नाहीं॥

पद पखारि जल पान करि, आपु सहित परिवार।
पितर पारु करि प्रभुहिं पुनि, मुदित गयउ लेइ पार॥

उतरि ठाढ़ भये सुरसरि रेता। सीय रामु गुह लखन समेता॥
केवट उतरि दंडवत कीन्हा। प्रभुहि सकुच याहि नहिं कुछ दीन्हा॥
पिय हिय की सिय जाननिहारी। मन मुदरी मन मुदित उतारी॥
कहेउ कृपाल लेहि उतराई। केवट चरन गहे अकुलाई॥
नाथ आज मैं काह न पावा। मिटे दोस दुख दारिद दावा॥
बहुत काल मैं कीन्ह मजूरी। आजु दीन्ह बिधि बनि भलि भूरी॥
अब कछु नाथ न चाहिय मोरें। दीन दयाल अनुग्रह तोरें॥
फिरती बार मोहिं जो देबा। सो प्रसादु मैं सिर धरि लेबा॥

बहुत कीन्ह प्रभु लखन सियँ, नहिं कछु केवटु लेइ।
बिदा कीन्ह करुनायतन, भगति बिमल बर देइ॥

तीरथराज प्रयाग का वर्णन

सचिव सत्य श्रद्धा प्रिय नारी। माधव सरिस मीतु हितकारी॥
चारि पदारथ भरा भँडारू। पुन्य प्रदेस देस अति चारू॥
छेत्रु अगम गढ़ु गाढ़ सुहावा। सपनेहुँ नहिं प्रतिपच्छिन्ह पावा॥
सेन सकल तीरथ बर बीरा। कलुष अनीक दलन रनधीरा॥
संगमु सिंहासनु सुठि सोहा। छत्रु अखयबटु मुनि मनु मोहा॥
चवँर जमुन अरु गंग तरंगा। देखि होहिं दुख दारिद भंगा॥

सेवहिं सुकृती साधु सुचि, पावहिं सब मनकाम।
बन्दी बेद पुरान गन, कहहिं बिमल गुनग्राम॥

को कहि सकइ प्रयाग प्रभाऊ। कलुष पुञ्ज कुञ्जर मृगराऊ॥

भरद्वाज का राम जी के प्रभाव का वर्णन

आजु सुफल तपु तीरथ त्यागू। आजु सुफल जप जोग बिरागू॥
सफल सकल सुभ साधन साजू। राम तुम्हहिं अवलोकत आजू॥
लाभ अवधि सुख अवधि न दूजी। तुम्हरे दरस आस सब पूजी॥
अब करि कृपा देहु बर एहू। निज पद सरसिज सहज सनेहू॥

करम बचन मन छाड़ि छलु, जब लगि जनु न तुम्हार।
तब लगि सुखु सपनेहुँ नहीं, किएँ कोटि उपचार॥

भगवान् के रहने का स्थान

बालमीकि हँसि कहहिं बहोरी। बानी मधुर अमिय रस बोरी॥
सुनहु राम अब कहउँ निकेता। जहाँ बसहु सिय लखन समेता॥
जिन्ह के श्रवन समुद्र समाना। कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना॥
भरहिं निरन्तर होहिं न पूरे। तिन्ह के हिय तुम्ह कहुँ गृह रूरे॥
लोचन चातक जिन्ह करि राखे। रहहिं दरस जलधर अभिलाषे॥
निदरहिं सरित सिंधु सर भारी। रूप बिंदु जल होहिं सुखारी॥
तिन्ह कें हृदय सदन सुखदायक। बसहु बन्धु सिय सह रघुनायक॥

जसु तुम्हार मानस बिमल, हंसिनि जीहा जासु।
मुकताहल गुनगन चुनइ, राम बसहु हियँ तासु॥

प्रभु प्रसाद सुचि सुभग सुबासा। सादर जासु लहइ नित नासा।
तुम्हहि निबेदित भोजन करहीं। प्रभु प्रसाद पट भूषन धरहीं॥

सीस नवहिं सुर गुरु द्विज देखी । प्रीति सहित करि बिनय बिसेखी ॥
कर नित करहिं राम पद पूजा । राम भरोस हृदयँ नहिं दूजा ॥
चरन राम तीरथ चलि जाहीं । राम बसहु तिन्ह के मन माहीं ॥
मन्त्रराजु नित जपहिं तुम्हारा । पूजहिं तुम्हहि सहित परिवारा ॥
तरपन होम करहि बिधि नाना । बिप्र जेंवाइ देहिं बहु दाना ॥
तुम्ह तें अधिक गुरहिं जियँ जानी । सकल भायँ सेवहिं सनमानी ॥

सबु करि मागहिं एक फल, रामचरन रति होउ ।
तिन्ह के मन मन्दिर बसहु, सिय रघुनंदन दोउ ॥

काम कोह मद मान न मोहा । लोभ न छोभ न राग न द्रोहा ॥
जिन्ह के कपट दंभ नहिं माया । तिन्ह के हृदय बसहु रघुराया ॥
सब के प्रिय सब के हितकारी । दुख सुख सरिस प्रसंसा गारी ॥
कहहिं सत्य प्रिय बचन बिचारी । जागत सोवत सरन तुम्हारी ॥
तुम्हहिं छाड़ि गति दूसरि नाहीं । राम बसहु तिन्ह के मन माहीं ॥
जननी सम जानहिं पर नारी । धनु पराव बिष ते बिष भारी ॥
जे हरषहिं पर संपति देखी । दुखित होहिं पर बिपत बिसेखी ॥
जिन्हहिं राम तुम प्रान पियारे । तिन्ह के मन सुभ सदन तुम्हारे ॥

स्वामि सखा पितु मातु गुर, जिन्ह के सब तुम्ह तात ।
मन मन्दिर तिन्ह के बसहु, सीय सहित दोउ भ्रात ॥

अवगुन तजि सब के गुन गहहीं । बिप्र धेनु हित संकट सहहीं ॥
नीति निपुन जिन्ह कइ जग लीका । घर तुम्हार तिन्हकर मनु नीका ॥
गुन तुम्हार समुझइ निज दोसा । जेहि सब भाँति तुम्हार भरोसा ॥
राम भगत प्रिय लागहिं जेही । तेहि उर बसहु सहित बैदेही ॥
जाति पाँति धनु धरमु बड़ाई । प्रिय परिवार सदन सुखदाई ॥
सब तजि तुम्हहि रहइ उर लाई । तेहि कें हृदय रहहु रघुराई ॥

सरगु नरकु अपबरगु समाना। जहँ तहँ देख धरें धनु बाना॥
करम बचन मन राउर चेरा। राम करहु तेहि कें उर डेरा॥

जाहि न चाहिअ कबहुँ कछु, तुम्ह सन सहज सनेहु।
बसहु निरन्तर तासु मन, सो राउर निज गेहु॥

चित्रकूट का वर्णन

चित्रकूट गिरि करहु निवासू। तहँ तुम्हार सब भाँति सुपासू॥
सैलु सुहावन कानन चारू। करि केहरि मृग बिहग बिहारू॥
नदी पुनीत पुरान बखानी। अत्रि प्रिया निज तप बल आनी॥
सुरसरिधार नाउँ मंदाकिनि। जो सब पातक पोतक डाकिनि॥
अत्रि आदि मुनिवर बहु बसहीं। करहिं जोग जप तप तन कसहीं॥
चलहु सफल श्रम सब कर करहू। राम देहु गौरव गिरिबरहू॥

राम के वियोग में घोड़ों को दुख

चरफराहिं मग चलहिं न घोरे। बन मृग मनहुँ आनि रथ जोरे॥
अढुकि परहिं फिरि हेरहिं पीछें। राम बियोगि बिकल दुख तीछें॥
जो कह रामु लखनु बैदेही। हिंकरि हिंकरि हित हेरहिं तेही॥
बाजि बिरह गति कहि किमि जाती। बिनु मनि फनिक बिकल जेहि भाँती॥
(जासु बियोग बिकल पशु ऐसे। प्रजा मातु पितु जीवहिं कैसे॥)

धीर पुरुष का लक्षण

जनम मरन सब दुख सुख भोगा। हानि लाभु प्रिय मिलन बियोगा॥
काल करम बस होहिं गुसाँई। बरबस रात दिवस की नाईं॥
सुख हरषहिं जड़ दुख बिलखाहीं। दोउ सम धीर धरहिं मन माहीं॥

भरत जी का कैकई को धिक्कारना

जो पै कुरुचि रही अति तोही। जनमत काहे न मारे मोहीं॥
पेड़ काटि तैं पालउ सींचा। मीन जिअन निति बारि उलीचा॥

हंसबंसु दसरथु जनक, राम लखन से भाइ।
जननी तूँ जननी भई, बिधि सन कछु न बसाइ॥

जब तैं कुमति कुमत जिय ठयऊ। खंड खंड होइ हृदय न गयऊ॥
बर माँगत मन भइ नहिं पीरा। गरि न जीह मुँह परेउ न कीरा॥
भूपँ प्रतीत तोरि किमि कीन्हीं। मरनकाल बिधि मति हरि लीन्हीं॥
बिधिहुँ न नारि हृदय गति जानी। सकल कपट अघ अवगुन खानी॥

भरत जी कौशिल्या जी को सफाई देते हैं

जे अघ मातु पिता सुत मारें। गाइ गोठ महि सुरपुर जारें॥
जे अघ तिय बालक बध कीन्हें। मीत महीपति माहुर दीन्हें॥
जे पातक उपपातक अहहीं। करम बचन मन भव कबि कहहीं॥
ते पातक मोहि होहुँ बिधाता। जौं यहु होइ मोर मत माता॥

जे परिहरि हरि हर चरन, भजहिं भूतगन घोर।
तेहि कइ गति मोहि देउ बिधि, जौं जननी मत मोर॥

बेचहिं बेदु धरमु दुहि लेहीं। पिसुन पराय पाप कहि देहीं॥
कपटी कुटिल कलह प्रिय क्रोधी। बेद बिदूषक बिस्व बिरोधी॥
लोभी लम्पट लोलुप चारा। जे ताकहिं पर धनु पर दारा॥
पावौं मैं तिन्ह कै गति घोरा। जौं जननी यहु संमत मोरा॥
जे नहिं साधु संग अनुरागे। परमारथ पथ बिमुख अभागे॥
जे न भजहिं हरि नर तनु पाई। जिन्हहि न हरिहर सुजसु सोहाई॥
तजि श्रुति पंथु बाम पथ चलहीं। बंचक बिरचि बेष जगु छलहीं॥
तिन्ह कै गति मोहि संकर देऊ। जननी जौं यहु जानौं भेऊ॥

सोचने योग्य कौन है

सुनहु भरत भावी प्रबल, बिलख कहेहु मुनि नाथ ।
हानि लाभु जीवनु मरनु, जसु अपजसु बिधि हाथ ॥

अस बिचारि केहि देइअ दोसू । ब्यरथ काहि पर कीजिअ रोसू ॥
तात बिचारु करहु मन माहीं । सोच जोगु दशरथु नृपु नाहीं ॥
सोचिअ बिप्र जो बेद बिहीना । तजि निज धरमु बिषय लयलीना ॥
सोचिअ नृपति जो नीति न जाना । जेहि न प्रजा प्रिय प्रान समाना ॥
सोचिअ बयसु कृपन धनवानू । जो न अतिथि सिव भगति सुजानू ॥
सोचिअ सूद्र बिप्र अवमानी । मुखर मान प्रिय ग्यान गुमानी ॥
सोचिअ पुनि पति बंचक नारी । कुटिल कलह प्रिय इच्छा चारी ॥
सोचिअ बटु निज ब्रतु परिहरई । जो नहिं गुरु आयसु अनुसरई ॥

सोचिअ गृही जो मोह बस, करइ करम पथ त्याग ।
सोचिअ जती प्रपंचरत, बिगत बिबेक बिराग ॥

बैखानस सोइ सोचै जोगू । तपु बिहाइ जेहि भावहि भोगू ॥
सोचिअ पिसुन अकारन क्रोधी । जननि जनक गुर बंधु बिरोधी ॥
सब बिधि सोचिय पर अपकारी । निज तनु पोषक निरदय भारी ॥
सोचनीय सबहीं बिधि सोई । जो न छाँड़ि छलु हरिजन होई ॥

पिता के वचनों को पालन करना

परसुराम पितु अग्या राखी । मारी मातु लोक सब साखी ॥
तनय जजातिहि जौबनु दयऊ । पितु अग्या अघ अजसु न भयऊ ॥

अनुचित उचित बिचारु तजि, जे पालहिं पितु बैन ।
ते भाजन सुख सुजस के, बसहिं अमरपति ऐन ॥

भरत का राम के प्रति प्रेम व संसार को रामभक्ति की शिक्षा

मोहि उपदेसु दीन्ह गुर नीका। प्रजा सचिव संमत सबही का॥
मातु उचित धरि आयसु दीन्हा। अवसि सीस धरि चाहउँ कीन्हा॥
गुर पितु मातु स्वामि हित बानी। सुनि मन मुदित करिअ भलि जानी॥
उचित कि अनुचित किएँ बिचारू। धरमु जाइ सिर पातक भारू॥
तुम्ह तौ देहु सरल सिख सोई। जो आचरत मोर भल होई॥
जद्यपि यह समुझत हउँ नीकें। तदपि होत परितोषु न जी कें॥
अब तुम्ह बिनय मोरि सुनि लेहू। मोहि अनुहरत सिखावन देहू॥
ऊतरु देउँ छमब अपराधू। दुखित दोष गुन गनहिं न साधू॥

पितु सुरपुर सियरामु बन, करन कहहु मोहि राजु।
एहि तें जानहु, मोर हित, कै आपन बड़ काजु॥

हित हमार सियपति सेवकाई। सो हरि लीन्ह मातु कुटिलाई॥
मैं अनुमानि दीख मन माहीं। आन उपायँ मोर हित नाहीं॥
सोक समाजु राजु केहि लेखें। लखन राम सिय बिनु पद देखें॥
बादि बसन बिनु भूषन भारू। बादि बिरति बिनु ब्रह्म बिचारू॥
सरुज सरीर बादि बहु भोगा। बिनु हरिभगति जायँ जप जोगा॥
जायँ जीव बिनु देह सुहाई। बादि मोर सबु बिनु रघुराई॥
जाउँ राम पहिं आयसु देहू। एकहिं आँक मोर हित एहू॥
मोहि नृप करि भल आपन चहहू। सोउ सनेह जड़ता बस कहहू॥

कैकेई सुअ कुटिल मति, राम बिमुख गत लाज।
तुम्ह चाहत सुखु मोह बस, मोहि से अधम के राज॥

कहउँ साँचु सब सुनि पतिआहू। चाहिअ धरमसील नरनाहू॥
मोहि राजु हठि देइहहु जबहीं। रसा रसातल जाइहि तबहीं॥

मोहि समान को पाप निवासू। जेहि लगि सीय राम बनबासू॥
रायँ राम कहुँ काननु दीन्हा। बिछुरत गमनु अमरपुर कीन्हा॥
मैं सठु सब अनरथ कर हेतू। बैठ बात सब सुनउँ सचेतू॥
बिनु रघुबीर बिलोकि अबासू। रहे प्रान सहि जग उपहासू॥
राम पुनीत बिषय रस रूखे। लोलुप भूमि भोग के भूखे॥
कहँ लगि कहौं हृदय कठिनाई। निदरि कुलिसु जेहिं लही बड़ाई॥

कारन तें कारजु कठिन, होइ दोसु नहिं मोर।
कुलिस अस्थि तें उपल तें, लोह कराल कठोर॥

कैकेई भव तनु अनुरागे। पावँर प्रान अघाइ अभागे॥
जौं प्रिय बिरहँ प्रान प्रिय लागे। देखब सुनब बहुत अब आगे॥
लखन राम सिय कहुँ बनु दीन्हा। पठइ अमरपुर पति हित कीन्हा॥
लीन्ह बिधवपन अपजसु आपू। दीन्हेउ प्रजहि सोक संतापू॥
मोहि दीन्ह सुखु सुजसु सुराजू। कीन्ह कैकेई सब कर काजू॥
एहि तें मोर काह अब नीका। तेहि पर देन कहहु तुम्ह टीका॥
कैकइ जठर जनमि जग माहीं। यह मोहि कहुँ कछु अनुचित नाहीं॥
मोरि बात सब बिधिहिं बनाई। प्रजा पाँच कत करहु सहाई॥

ग्रह ग्रहीत पुनि बात बस, तेहि पुनि बीछी मार।
तेहि पिआइअ बारुनी, कहहु काह उपचार॥

सत्संगति का फल

करमनास जलु सुरसरि परई। तेहि को कहहु सीस नहिं धरई॥
उलटा नाम जपत जगु जाना। बालमीकि भए ब्रह्म समाना॥
स्वपच सबर खस जमन जड़, पाँवर कोल किरात।
रामु कहत पावन परम, होत भुवन बिख्यात॥

भरत की भक्ति की महिमा

किये जाहिं छाया जलद, सुखद बहइ बर बात।
तसु मगु भयउ न राम कहँ, जस भा भरतहि जात॥
जड़ चेतन मग जीव घनेरे। जे चितये प्रभु जिन्ह प्रभु हेरे॥
ते सब भये परम पद जोगू। भरत दरस मेटा भव रोगू॥
यह बड़ि बात भरत कइ नाहीं। सुमिरत जिनहिं राम मन माहीं॥
बारक राम कहत जग जेऊ। होत तरन तारन नर तेऊ॥
भरत राम प्रिय पुनि लघु भ्राता। कस न होइ मगु मंगल दाता॥

रामचन्द्र जी का स्वभाव

सुनु सुरेस रघुनाथ सुभाऊ। निज अपराध रिसाहिं न काऊ॥
जो अपराधु भगत कर करई। राम रोष पावक सो जरई॥
लोकहुँ बेद बिदित इतिहासा। यह महिमा जानहिं दुरबासा॥
जद्यपि सम नहिं राग न रोषू। गहहिं न पाप पूनु गुन दोषू॥
करम प्रधान बिश्व करि राखा। जो जस करइ सो तस फलु चाखा॥
राम सदा सेवक रुचि राखी। बेद पुरान साधु सुर साखी॥
अस जियँ जानि तजहु कुटिलाई। करहु भरत पद प्रीति सुहाई॥
राम भगत परहित निरत, पर दुख दुखी दयाल।
भगत-सिरोमनि भरत तें, जनि डरपहु सुरपाल॥

राजमद का नशा

भरतहि दोसु देइ को जाएँ। जग बौराइ राजपदु पाएँ॥
ससि गुर तियगामी नहुषु, चढ़ेउ भूमिसुर जान।
लोक बेद तें बिमुख भा, अधम न बेन समान॥
सहसबाहु सुरनाथु त्रिसंकू। केहि न राजमद दीन्ह कलंकू॥

काम में जल्दी न करना चाहिए

अनुचित उचित काजु किछु होऊ। समुझि करिअ भल कह सबु कोऊ॥
सहसा करि पाछें पछिताहीं। कहहिं बेद बुध ते बुध नाहीं॥
कही तात तुम्ह नीति सुहाई। सब तें कठिन राजमदु भाई॥
जो अचवँत नृप मातहिं तेई। नाहिन सासु सभा जेहिं सेई॥

भरतहि होइ न राजमदु, बिधि हरिहर पद पाइ।
कबहुँ कि काँजी सीकरनि, छीर सिंधु बिनसाइ॥

भरत की प्रशंसा

सगुनु खीरु अवगुन जलु ताता। मिलइ रचइ परपंचु बिधाता॥
भरतु हंस रबिबंस तड़ागा। जनमि कीन्ह गुन दोष बिभागा॥
गहि गुन पय तजि अवगुन बारी। निज जस जगत कीन्ह उजियारी॥

राम शैल की शोभा

भरत दीख बन सैल समाजू। मुदित छुधित जनु पाइ सुनाजू॥
ईति भीति जनु प्रजा दुखारी। त्रिबिध ताप पीड़ित ग्रह मारी॥
जाइ सुराज सुदेस सुखारी। होहिं भरत गति तेहिं अनुहारी॥
रामबास बन संपति भ्राजा। सुखी प्रजा जनु पाइ सुराजा॥
सचिव बिरागु बिबेकु नरेसू। बिपिन सुहावन पावन देसू॥
भट जम नियम सैल रजधानी। सांति सुमति सुचि सुन्दर रानी॥
सकल अंग संपन्न सुराऊ। राम चरन आश्रित चित चाऊ॥

जीति मोह महिपालु दल, सहित बिबेक भुआलु।
करत अकंटक राजु पुरँ, सुख सम्पदा सुकालु॥

बन प्रदेस मुनि बास घनेरे। जनु पुर नगर गाउँ गन खेरे॥
बिपुल बिचित्र बिहग मृग नाना। प्रजा समाजु न जाइ बखाना॥

खगहा करि हरि बाघ बराहा। देखि महिष वृष साजु सराहा ॥
बयरु बिहाइ चरहिं एक संगा। जहँ तहँ मनहुँ सेन चतुरंगा ॥
झरना झरहिं मत्त गज गाजहिं। मानहुँ निसान बिबिध बिधि बाजहिं ॥
चक चकोर चातक सुक पिक गन। कूजत मंजु मराल मुदित मन ॥
अलिगन गावत नाचत मोरा। जनु सुराज्य मङ्गल चहुँ ओरा ॥
बेलि बिटप तृन सफल सफूला। सब समाज मुद मङ्गल मूला ॥

राम सैल सोभा निरखि, भरत हृदयँ अति प्रेमु।
तापस तप फलु पाइ जिमि, सुखी सिरानें नेमु ॥

लक्ष्मण जी की कर्तव्यनिष्ठा

बचन सपेम लखन पहिचाने। करत प्रनामु भरत जियँ जाने ॥
बन्धु सनेह सरस एहिं ओरा। उत साहिब सेवा बस जोरा ॥
मिलि न जाइ नहिं गुदरत बनई। सुकबि लखन मन की गति भनई ॥
रहे राखि सेवा पर भारू। चढ़ी चङ्ग जनु खैंच खेलारू ॥

राम जी की सर्वव्यापकता

सानुज मिलि पल महुँ सब काहू। कीन्ह दूरि दुख दारुन दाहू ॥
यह बड़ि बात राम कै नाहीं। जिमि घट कोटि एक रबि छाहीं ॥

भरत जी की प्रशंसा

नाथ सपथ पितु चरन दुहाई। भयउ न भुवन भरत सम भाई ॥
जे गुरु पद अंबुज अनुरागी। ते लोकहुँ बेदहुँ बड़ भागी ॥
राउर जा पर अस अनुरागू। को कहि सकइ भरत कर भागू ॥

भरत का पश्चात्ताप

जिनहिं निरखि मग साँपिनि बीछी। तजहिं बिषम बिषु तामस तीछी ॥

तेइ रघुनन्दनु लखनु सिय, अनहित लागे जाहि।
तासु तनय तजि दुसह दुख, दैउ सहावै काहि॥

राम का भरत को आश्वासन

तात जायँ जियँ करहु गलानी। ईस अधीन जीव गति जानी॥
तीनि काल त्रिभुअन मत मोरें। पुन्यसिलोक तात तर तोरें॥
उर आनत तुम्ह पर कुटिलाई। जाइ लोकु परलोकु नसाई॥
दोसु देहिं जननिहि जड़ तेई। जिन्ह गुर साधु सभा नहिं सेई॥

मिटिहहिं पाप प्रपंच सब, अखिल अमङ्गल भार।
लोक सुजसु परलोक सुखु, सुमिरत नाम तुम्हार॥

प्रेम और बैर सब जानते हैं

मुनिगन निकट बिहग मृग जाहीं। बाधक बधिक बिलोकि पराहीं॥
हित अनहित पसु पच्छिउ जाना। मानुष तनु गुन ग्यान निधाना॥

सेवक का कर्तव्य

जो सेवकु साहिबहि संकोची। निज हित चहइ तासु मति पोची॥
सेवक हित साहिब सेवकाई। करै सकल सुख लोभ बिहाई॥
उतरु देइ सुनि स्वामि रजाई। सो सेवकु लखि लाज लजाई॥

बिना राम प्रेम के सब व्यर्थ है

सो सुखु करमु धरमु जरि जाऊ। जहँ न राम पद पङ्कज भाऊ॥
जोगु कुजोगु ग्यान अग्यानू। जहँ नहिं राम पेम परधामू॥

किसका जीवन व्यर्थ है ?

साधु समाज न जाकर लेखा। राम भगत महुँ जासु न रेखा॥
जायेँ जियत जग सो महि भारू। जननी जौवन बिटप कुठारू।

भगवत्प्रेम की महिमा

जासु ग्यानु रबि भवनिसि नासा। बचन किरन मुनि कमल बिकासा ॥
तेहि कि मोह ममता निअराई। यह प्रिय राम सनेह बड़ाई ॥
बिषई साधक सिद्ध सयाने। त्रिबिध जीव जब बेद बखाने ॥
राम सनेहँ सरस मन जासू। साधु सभाँ बड़ आदर तासू ॥
सोह न राम पेम बिनु ग्यानू। करनधार बिनु जिमि जल जानू ॥

मुखिया कैसा होना चाहिए

मुखिया मुख सो चाहिये, खान पान कहुँ एक।
पालइ पोषइ सकल अँग, तुलसी सहित बिबेक।

रामचन्द्र जी की चरण-पादुका

चरन पीठ करुना निधान के। जनु जुग जामिक प्रजा प्रान के ॥
संपुट भरत सनेह रतन के। आखर जुग जनु जीव जतन के ॥
कुल कपाट कर कुसल करम के। बिमल नयन सेवा सुधरम के ॥
भरत मुदित अवलंब लहे तें। अस सुख जस सिय रामु रहे तें ॥

भरत जी की तपस्या

तेहिं पुर बसत भरत बिनु रागा। चंचरीक जिमि चंपक बागा।
रमा बिलासु राम अनुरागी। तजत बमन जिमि जन बड़ भागी ॥

राम पेम भाजन भरतु, बड़े न एहिं करतूति।
चातक हंस सराहिअत, टेंक बिबेक बिभूति ॥

देह दिनहुँ दिन दूबरि होई। घटइ तेजु बलु मुख छबि सोई ॥
नित नव राम प्रेम पनु पीना। बढ़त धरम दलु मनु न मलीना ॥
जिमि जलु निघटत सरद प्रकासे। बिलसत बेतस बनज बिकासे ॥
सम दम संजम नियम उपासा। नखत भरत हिय बिमल अकासा ॥

ध्रुव बिस्वासु अवधि राका सी। स्वामि सुरति सुरबीथि बिकासी ॥
रामपेम बिधु अचल अदोषा। सहित समाज सोह नित चोखा ॥
भरत रहनि समुझनि करतूती। भगति बिरति गुन बिमल बिभूती ॥
बरतन सकल सुकबि सकुचाहीं। सेस गनेस गिरा गमु नाहीं ॥
नित पूजत प्रभु पाँवरी, प्रीति न हृदय समाति।
मागि मागि आयसु करति, राजकाज बहु भाँति ॥

भरत जी का आचरण

परम पुनीत भरत आचरनू। मधुर मंजु मुद मंगल करनू ॥
हरन कठिन कलि कलुष कलेसू। महामोह निसि दलन दिनेसू ॥
पाप पुज कुंजर मृगराजू। समन सकल संताप समाजू ॥
जन रंजन भंजन भवभारू। रामसनेह सुधाकर सारू ॥
सिय राम प्रेम पियूष पूरन होत जनमु न भरत को।
मुनिमन अगम जम नियम सम दम विषम ब्रत आचरत को ॥
दुख दाह दारिद दंभ दूषन सुजसु मिस अपहरत को।
कलिकाल तुलसी से सठन्हि हठि राम सनमुख करत को ॥

सूक्तियाँ

ऊँच निवासु नीचि करतूती। देखि न सकहिं पराइ बिभूती ॥

हमहुँ कहबि अब ठकुर सोहाती। नाहिं त मौन रहब दिनु राती ॥

कोउ नृप होउ हमहि का हानी। चेरि छाड़ि अब होब कि रानी ॥

रहा प्रथम अब ते दिन बीते। समय फिरें रिपु होहिं पिरीते ॥

अरिबस दैउ जिआवत जाही। मरनु नीक तेहि जीवन चाही॥

को न कुसंगति पाइ नसाई। रहइ न नीच मतें चतुराई॥

रघुकुल रीति सदा चलि आई। प्रान जाहुँ बरु बचनु न जाई॥

नहिं असत्य सम पातक पुंजा। गिरि सम होहिं कि कोटिक गुंजा॥

कहइ करहु किन कोटि उपाया। इहाँ न लागिहि राउरि माया॥

दुइ कि होइ एक समय भुआला। हँसब ठठाइ फुलाउब गाला॥

तनु तिय तनय धामु धनु धरनी। सत्यसंध कहुँ तृन सम बरनी॥

सुभ अरु असुभ करम अनुहारी। ईसु देइ फलु हृदयँ बिचारी॥

करइ जो करम पाव फल सोई। निगम नीति असि कह सबु कोई॥

और करै अपराधु कोउ, और पाव फल भोगु।
अति बिचित्र भगवंत गति, को जग जानै जोगु॥

जहाँ रामु तहँ सबुइ समाजू। बिनु रघुबीर अवध नहिं काजू॥

रामचरन पंकज प्रिय जिन्हही। बिषय भोग बस करहिं कि तिन्हही॥

मुनि तापस जिन्ह तें दुख लहहीं। ते नरेस बिनु पावक दहहीं॥

मंगल मूल बिप्र परितोषू। दहइ कोटि कुल भूसुर रोषू॥

सोइ जानइ जेहि देहु जनाई। जानत तुम्हहि तुम्हइ होइ जाई ॥

रामहिं केवल प्रेमु पिआरा। जानि लेउ जो जाननिहारा ॥

अहि अघ अवगुन नहिं मनि गहई। हरइ गरल दुख दारिद दहई ॥

जरउ सो संपति सदन सुख, सुहृद मातु पितु भाइ।
सनमुख होत जो रामपद, करइ न सहस सहाइ ॥

संपति चकई भरत चक, मुनि आयसु खेलवार।
तेहि निसि आश्रम पींजरा, राखे भा भिनुसार ॥

बिषई जीव पाइ प्रभुताई। मूढ़ मोह बस होहिं जनाई ॥

छत्रि जाति रघुकुल जनमु, राम अनुग जगु जान।
लातहुँ मारे चढ़ति सिर, नीच को धूरि समान ॥

फरइ कि कोदव बालि सुसाली। मुकता प्रसव कि संबुक साली ॥

सुनिअ सुधा देखिअहि गरल, सब करतूति कराल।
जहँ तहँ काक उलूक बक, मानस सकृत मराल ॥

ईस रजाइ सीस सबही के। उतपति थिति लय बिषहु अमीके ॥
जग भल पोच ऊँच अरु नीचू। अमिय अमरपद माहुरु मीचू ॥
राम रजाइ मेट मन माहीं। देखा सुना कतहुँ कोउ नाहीं ॥

लखि हिय हँसि कह कृपानिधानू। सरिस स्वान मघवान जुबानू॥
जे गुरचरन रेनु सिर धरहीं। ते जनु सकल बिभव बस करहीं॥
को रघुबीर सरिस संसारा। सीलु सनेहु निबाहनिहारा॥

धरमु न दूसर सत्य समाना। आगम निगम पुरान बखाना॥

कसें कनकु मनि पारिखि पाये। पुरुष परिखियहिं समयँ सुभाये॥

प्रभु अपने नीचहुँ आदरहीं। अगिनि धूम गिरि सिर तिनु धरहीं॥

सो सुख करम धरम जरि जाऊ। जहँ न रामपद पंकज भाऊ॥

फुटकर

मंगलमूल रामु सुत जासू। जो कछु कहिअ थोर सब तासू॥

सुनु नृपु जासु बिमुख पछिताहीं। जासु भजन बिनु जरनि न जाहीं॥
भयउ तुम्हार तनय सोइ स्वामी। रामु पुनीत प्रेम अनुगामी॥

सेवक सदन स्वामि आगमनू। मंगलमूल अमंगल दमनू॥

भानु कमल कुल पोषनिहारा। बिनु जल जारि करइ सोइ छारा॥

सेवहिं अरंडु कल्पतरु त्यागी। परिहरि अमृत लेहिं बिषु माँगी॥
तेउ न पाइ अस समउ चुकाहीं। देखु बिचारि मातु मनमाहीं॥

रामहिं मातु बचन सब भाए। जिमि सुरसरि गत सलिल सुहाए॥

चंदु चवै बरु अनलकन, सुधा होइ बिष तूल।
सपनेहुँ कबहुँ न करहिं किछु, भरतु राम प्रतिकूल॥

ते पितु मातु धन्य जिन्ह जाए। धन्य सो नगरु जहाँ तें आए॥
धन्य सो देसु सैल बन गाऊँ। जहँ जहँ जाहिं धन्य सोइ ठाऊँ॥

धन्य भूमि बन पंथ पहारा। जहँ जहँ नाथ पाँव तुम धारा॥
धन्य बिहँग मृग काननचारी। सफल जनम भये तुम्हहिं निहारी॥
हम सब धन्य सहित परिवारा। दीख दरस भरि नयन तुम्हारा॥

लोकप होहिं बिलोकत जासू। तेहि कि मोहि सक बिषय बिलासू॥

अरथ न धरम न काम रुचि, गति न चहौं निर्बान।
जनम जनम रति रामपद, यह बरदानु न आन॥

भरत सरिस को राम सनेही। जगु जप रामु रामु जप जेही॥

सुनि सिय सपन भरे जल लोचन। भये सोचबस सोच बिमोचन॥

जो परिहरहिं मलिन मन जानी। जो सनमानहिं सेवकु मानी॥
मोरे सरन राम की पनहीं। राम सुस्वामि दोष सब जनहीं॥

तात जाय जनि करहु गलानी। ईस अधीन जीव गति जानी॥

बहुरि बिचारि परस्पर कहहीं। रघुपति भगत भगति बस अहहीं॥

सीतापति सेवक सेवकाई। कामधेनु सय सरिस सुहाई॥

कहउँ बचन सब स्वारथ हेतू। रहत न आरत के चित चेतू॥

परिहरि लखन राम बैदेही। जेहि घर भाव बाम बिधि तेही॥

दाहिन दैउ होइ जब सबहीं। राम समीप बसिय बन तबहीं॥

तोरे अंग जोग जग को है। दीप सहाय कि दिनकर सो है॥
तुम बिनु राम सकल सुख साजा। नरक सरिस दोउ राज समाजा॥

प्रान प्रान के जीव के, जिव सुख के सुख राम।
तुम्ह तजि तात सुहात गृह, जिन्हहिं तिन्हहिं बिधि बाम॥

सीता राम चरन रति मोरे। अनुदिन बढ़ै अनुग्रह तोरे॥

जोरि पानि बर मागउँ एहू। सीय राम पद सहज सनेहू॥

अबिनय बिनय जथा रुचि बानी। छमिय देव अति आरत जानी॥

महाराज अब कीजिय सोई। सब कर धर्म सहित हित होई॥

अरण्यकाण्ड

राम जी के विमुख होने से हानि

काहूँ बैठन कहा न ओही। राखि को सकइ राम कर द्रोही॥
मातु मृत्यु पितु समन समाना। सुधा होइ बिष सुनु हरि जाना॥
मित्र करइ सत रिपु कै करनी। ता कहँ बिबुध नदी बैतरनी॥
सब जगु ताहि अनलहु ते ताता। जो रघुबीर बिमुख सुनु भ्राता॥

स्त्रीधर्म

मातु पिता भ्राता हितकारी। मितप्रद सब सुनु राजकुमारी॥
अमित दानि भर्ता बैदेही। अधम सो नारि जो सेव न तेही॥
धीरज धरम मित्र अरु नारी। आपद काल परिखिअहिं चारी॥
वृद्ध रोगबस जड़ धनहीना। अंध बधिर क्रोधी अति दीना॥
ऐसेहु पति कर किएँ अपमाना। नारि पाव जमपुर दुख नाना॥
एकइ धर्म एक व्रत नेमा। कायँ बचन मन पतिपद प्रेमा॥
जग पतिव्रता चारि बिधि अहहीं। बेद पुरान संत सब कहहीं॥
उत्तम के अस बस मन माहीं। सपनेहुँ आन पुरुष जग नाहीं॥
मध्यम परपति देखइ कैसें। भ्राता पिता पुत्र निज जैसें॥
धर्म बिचारि समुझि कुल रहई। सो निकिष्ट त्रिय श्रुति अस कहई॥
बिनु अवसर भय तें रह जोई। जानेहु अधम नारि जग सोई॥
पति बंचक परपति रति करई। रौरव नरक कल्प संत परई॥
छन सुख लागि जनम सत कोटी। दुख न समुझ तेहि सम को खोटी॥
बिनु श्रम नारि परम गति लहई। पतिव्रत धर्म छाँड़ि छल गहई॥
पति प्रतिकूल जनम जहँ जाई। बिधवा होइ पाइ तरुनाई॥

सहज अपावनि नारि, पति सेवत सुभ गति लहइ।
जसु गावत श्रुति चारि, अजहुँ तुलसिका हरिहि प्रिय ॥

राम जी के निवास से वन की शोभा

जब ते राम कीन्ह तहँ बासा। सुखी भए मुनि बीती त्रासा ॥
गिरि बन नदी ताल छबि छाए। दिन दिन प्रति अति होहिं सुहाए ॥
खग मृग बृंद अनंदित रहहीं। मधुप मधुर गुंजत छबि लहहीं ॥
सो बन बरनि न सक अहिराजा। जहाँ प्रगट रघुबीर बिराजा ॥

भक्तियोग

मैं अरु मोर तोर तैं माया। जेहिं बस कीन्हे जीव निकाया ॥
गो गोचर जहँ लगि मन जाई। सो सब माया जानेहु भाई ॥
तेहि कर भेद सुनहु तुम्ह सोऊ। बिद्या अपर अबिद्या दोऊ ॥
एक दुष्ट अतिसय दुख रूपा। जा बस जीव परा भवकूपा ॥
एक रचइ जग गुन बस जाकें। प्रभु प्रेरित नहिं निज बल ताकें ॥
ग्यान मान जहँ एकउ नाहीं। देख ब्रह्म समान सब माहीं ॥
कहिअ तात सो परम बिरागी। तृन सम सिद्धि तीनि गुन त्यागी ॥

माया ईस न आपु कहुँ, जान कहिअ सो जीव।
बन्ध मोच्छप्रद सर्ब पर, माया प्रेरक सीव ॥

धर्म तें बिरति जोग तें ग्याना। ग्यान मोच्छप्रद बेद बखाना ॥
जातें बेगि द्रवउँ मैं भाई। सो मैं भगति भगत सुखदाई ॥
सो सुमंत्र अवलम्ब न आना। तेहि आधीन ग्यान बिग्याना ॥
भगति तात अनुपम सुखमूला। मिलइ जो संत होइँ अनुकूला ॥
भगति कि साधन कहउँ बखानी। सुगम पंथ मोहिं पावहिं प्रानी ॥
प्रथमहिं बिप्र चरन अति प्रीती। निज निज कर्म निरत श्रुति रीती ॥

एहि कर फल पुनि बिषय बिरागा। तब मम धर्म उपज अनुरागा॥
श्रवनादिक नव भक्ति दृढ़ाहीं। मम लीला रति अति मन माहीं॥
संत चरन पंकज अति प्रेमा। मन क्रम बचन भजन दृढ़ नेमा॥
गुरु पितु मातु बंधु पति देवा। सब मोहि कहँ जानइ दृढ़ सेवा॥
मन गुन गावत पुलक सरीरा। गदगद गिरा नयन बह नीरा॥
काम आदि मन दंभ न जाकें। तात निरंतर बस मैं ताकें॥

बचन कर्म मन मोरि गति, भजन करहिं निःकाम।
तिन्ह के हृदयकमल महुँ, करउँ सदा बिश्राम॥

क्षत्रियों के कर्त्तव्य

हम छत्री मृगया बन करहीं। तुम्ह से खल मृग खोजत फिरहीं॥
रिपु बलवन्त देखि नहिं डरहीं। एक बार कालहु सन लरहीं॥

कौन जल्दी से नष्ट होते हैं

राजनीति बिनु धन बिनु धर्मा। हरिहिं समर्पे बिनु सतकर्मा॥
बिद्या बिनु बिबेक उपजाएँ। श्रम फल पढ़ें किएँ अरु पाएँ॥
संग तें जती कुमंत्र ते राजा। मान तें ग्यान पान तें लाजा॥
प्रीति प्रनय बिनु मद ते गुनी। नासहिं बेगि नीति अस सुनी॥

रावण की अपनी धारणा

सुर नर असुर नाग खग माहीं। मोरे अनुचर कहँ कोउ नाहीं॥
खर दूषन मोहि सम बलवन्ता। तिन्हहिं को मारइ बिनु भगवन्ता॥
सुर रंजन भंजन महिभारा। जौं भगवन्त लीन्ह अवतारा॥
तौ मैं जाइ बैरु हठि करऊँ। प्रभु सर प्रान तजें भव तरऊँ॥
होइहि भजनु न तामस देहा। मन क्रम बचन मंत्र दृढ़ एहा॥

दुष्टों की कृपा अच्छी नहीं होती

नवनि नीच कै अति दुखदाई। जिमि अंकुस धनु उरग बिलाई॥
भयदायक खल कै प्रिय बानी। जिमि अकाल के कुसुम भवानी॥

नव व्यक्तियों से विरोध न करना चाहिए

तब मारीच हृदयँ अनुमाना। नवहि बिरोधें नहिं कल्याना॥
सस्त्री मर्मी प्रभु सठ धनी। बैद बंदि कबि मानस गुनी॥

प्रभु की दयालुता

कोमल चित अति दीन दयाला। कारन बिनु रघुनाथ कृपाला॥
गीध अधम खग आमिषभोगी। गति दीन्ही जो जाचत जोगी॥

नवधा भक्ति

प्रथम भगति संतन्ह कर संगा। दूसरि रति मम कथा प्रसंगा॥

गुर पद पंकज सेवा, तीसरि भगति अमान।
चौथि भगति मम गुनगन, करइ कपट तजि गान॥

मंत्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा। पंचम भजन सो बेद प्रकासा॥
छठ दम सील बिरति बहु करमा। निरत निरंतर सज्जन धरमा॥
सातवँ सम मोहिमय जग देखा। मोतें संत अधिक करि लेखा॥
आठवँ जथालाभ संतोषा। सपनेहुँ नहिं देखइ पर दोषा॥
नवम सरल सब सन छल हीना। मम भरोस हियँ हरष न दीना॥
नवमहुँ एकउ जिन्ह कें होई। नारि पुरुष सचराचर कोई॥
सोइ अतिसय प्रिय भामिनि मोरें। सकल प्रकार भगति दृढ़ तोरें॥
जोगि बृन्द दुरलभ गति जोई। तो कहुँ आज सुलभ भइ सोई॥
मम दरसन फल परम अनूपा। जीव पाव निज सहज सरूपा॥

वन की शोभा पर एक श्लेष

लछिमन देखु बिपिन कइ सोभा। देखत केहि कर मन नहिं छोभा॥
नारि सहित सब खग मृग बृंदा। मानहुँ मोरि करत हहिं निंदा॥
हमहिं देखि मृग निकर पराहीं। मृगीं कहहिं तुम्ह कहँ भय नाहीं॥
तुम्ह आनन्द करहु मृग जाए। कंचन मृग खोजन ए आए॥
संग लाइ करिनी करि लेहीं। मानहुँ मोहि सिखावन देहीं॥

बसंत ऋतु

देखहु तात बसंत सुहावा। प्रियाहीन मोहि भय उपजावा॥
बिटप बिसाल लता अरुझानी। बिबिध बितान दिए जनु तानी॥
कदलि ताल बर धुजा पताका। देखि न मोह धीर मन जाका॥
बिबिध भाँति फूले तरु नाना। जनु बानैत बने बहु बाना॥
कहुँ कहुँ सुन्दर बिटप सुहाए। जनु भट बिलग बिलग होइ छाए॥
कूजत पिक मानहुँ गजमाते। ढेक महोख ऊँट बिसराते॥
मोर चकोर कीर बर बाजी। पारावत मराल सब ताजी॥
तीतिर लावक पदचर जूथा। बरनि न जाइ मनोज बरूथा॥
रथ गिरि सिला दुंदुभी झरना। चातक बन्दी गुन गन बरना॥
मधुकर मुखर भेरि सहनाई। त्रिबिध बयारि बसीठीं आई॥
चतुरंगिनी सेन सँग लीन्हे। बिचरत सबहि चुनौती दीन्हे॥

सुन्दर उपमायें और शिक्षा

संत हृदय जस निर्मल बारी। बाँधे घाट मनोहर चारी॥
जहँ तहँ पिअहिं बिबिध मृग नीरा। जनु उदार गृह जाचक भीरा॥

पुरइन सघन ओट जल, बेगि न पाइअ मर्म।
मायाछन्न न देखिऐ, जैसें निर्गुन ब्रह्म॥

सुखी मीन सब एक रस, अति अगाध जल माहिं ।
जथा धर्मसीलन्ह के, दिन सुख संजुत जाहिं ॥

बिकसे सरसिज नाना रंगा । मधुर मुखर गुंजत बहु भृङ्गा ॥
बोलत जलकुक्कुट कलहंसा । प्रभु बिलोकि जनु करत प्रसंसा ॥
चक्रबाक बक खग समुदाई । देखत बनइ बरनि नहिं जाई ॥
सुंदर खगगन गिरा सुहाई । जात पथिक जनु लेत बोलाई ॥
ताल समीप मुनिन्ह गृह छाए । चहुँ दिसि कानन बिटप सुहाए ॥
चंपक बकुल कदंब तमाला । पाटल पनस परास रसाला ॥
नव पल्लव कुसुमित तरु नाना । चंचरीक पटली कर गाना ॥
सीतल मंद सुगंध सुभाऊ । संतत बहइ मनोहर बाऊ ॥
कुहू कहू कोकिल धुनि करहीं । सुनि रव सरस ध्यान मुनि टरहीं ॥

फल भारन नमि बिटप सब, रहे भूमि निअराइ ।
पर उपकारी पुरुष जिमि, नवहिं सुसपति पाइ ॥

राम नाम की प्रधानता

जद्यपि प्रभु के नाम अनेका । श्रुति कह अधिक एक तें एका ॥
राम सकल नामन्ह ते अधिका । होउ नाथ अघ खग गन बधिका ॥

राका रजनी भगति तव, राम नाम सोइ सोम ।
अपर नाम उडगन बिमल, बसहुँ भगत उर ब्योम ॥

राम भक्त की रक्षा करते हैं

करउँ सदा तिन्ह कै रखवारी । जिमि बालक राखइ महतारी ॥
गह सिसु बच्छ अनल अहि धाई । तहँ राखइ जननी अरगाई ॥
प्रौढ़ भएँ तेहि सुत पर माता । प्रीति करइ नहिं पाछिलि बाता ॥
मोरें प्रौढ़ तनय सम ग्यानी । बालक सुत सम दास अमानी ॥

जनहि मोर बल निज बल ताही। दुहु कहँ काम क्रोध रिपु आही॥
यह बिचारि पंडित मोहि भजहीं। पाएहुँ ग्यान भगति नहिं तजहीं॥

स्त्री सबसे दुखदाई है

काम क्रोध लोभादि मद, प्रबल मोह कै धारि।
तिन्ह महँ अति दारुन दुखद, मायारूपी नारि॥

सुनु मुनि कह पुरान श्रुति संता। मोह बिपिन कहुँ नारि बसंता॥
जप तप नेम जलाश्रय झारी। होइ ग्रीषम सोषइ सब नारी॥
काम क्रोध मद मत्सर भेका। इन्हहि हरषप्रद बरषा एका॥
दुर्बासना कुमुद समुदाई। तिन्ह कहँ सरद सदा सुखदाई॥
धर्म सकल सरसीरुह बृंदा। होइ हिम तिन्हहि दहइ सुख मंदा॥
पुनि ममता जवास बहुताई। पलुहइ नारि सिसिर रितु पाई॥
पाप उलूक निकर सुखकारी। नारि निबिड़ रजनी अँधियारी॥
बुधि बल सील सत्य सब मीना। बनसी सम प्रिय कहहिं प्रबीना॥

अवगुन मूल सूल प्रद, प्रमदा सब दुख खानि।
ताते कीन्ह निवारन, मुनि मैं यह जियँ जानि॥

सन्तों के गुण

षट विकार जित अनघ अकामा। अचल अकिंचन सुचि सुखधामा॥
अमित बोध अनीह मित भोगी। सत्य सार कबि कोबिद जोगी॥
सावधान मानद मदहीना। धीर धर्मगति परम प्रबीना॥

गुनागार संसार दुख, रहित बिगत संदेह।
तजि मम चरन सरोज प्रिय, तिन्ह कहुँ देह न गेह॥

निज गुन श्रवन सुनत सकुचाहीं। पर गुन सुनत अधिक हरषाहीं॥
सम सीतल नहिं त्यागहिं नीती। सरल सुभाउ सबहि सन प्रीती॥

जप तप ब्रत दम संजम नेमा । गुरु गोबिंद बिप्रपद प्रेमा ॥
श्रद्धा छमा मयत्री दाया । मुदिता मम पद प्रीति अमाया ॥
बिरति बिबेक बिनय बिनयाना । बोध जथारथ बेद पुराना ॥
दंभ मान मद करहिं न काऊ । भूलि न देहिं कुमारग पाऊ ॥
गावहिं सुनहिं सदा मम लीला । हेतु रहित परहित रत सीला ॥
मुनि सुनु साधुन्ह के गुन जेते । कहि न सकहिं सारद श्रुति तेते ॥

सूक्तियाँ

उमा राम गुन गूढ़, पंडित मुनि पावहिं बिरति ।
पावहिं मोह बिमूढ़, जे हरि बिमुख न धर्म रति ॥

कलिमल समन दमन मन, राम सुजस सुख मूल ।
सादर सुनहिं जे तिन्ह पर, राम रहहिं अनुकूल ॥

कठिन काल मल कोस, धर्म न ग्यान जोग जप ।
परिहरि सकल भरोस, रामहिं भजहिं ते चतुर नर ॥

भ्राता पिता पुत्र उरगारी । पुरुष मनोहर निरखत नारी ॥
होइ बिकल सक मनहि न रोकी । जिमि रबिमनि द्रव रबिहि बिलोकी ॥

सेवक सुख चह मान भिखारी । ब्यसनी धन सुभगति बिभिचारी ॥
लोभी जसु चह चार गुमानी । नभ दुहि दूध चहत ए प्रानी ॥

रन चढ़ि करिअ कपट चतुराई । रिपु पर कृपा परम कदराई ॥

इमि कुपंथ पग देत खगेसा । रह न तेज तन बुधि बल लेसा ॥

पर हित बस जिन्ह के मनमाहीं । तिन्ह कहुँ जग दुर्लभ कछु नाहीं ॥
जाति पाँति कुल धर्म बड़ाई । धन बल परिजन गुन चतुराई ॥
भगतिहीन नर सोहइ कैसा । बिनु जल बारिद देखिअ जैसा ॥

———

सास्त्र सुचिंतित पुनि पुनि देखिअ । भूप सुसेवित बस नहिं लेखिअ ॥
राखिअ नारि जदपि उर माहीं । जुबती सास्त्र नृपति बस नाहीं ॥

———

तात तीनि अति प्रबल खल, काम क्रोध अरु लोभ ।
मुनि बिग्यान धाम मन, करहिं निमिष महुँ छोभ ॥

———

लोभ कें इच्छा दम्भ बल, काम कें केवल नारि ।
क्रोध के परुष बचन बल, मुनिवर कहहिं बिचारि ॥

———

उमा कहौं मैं अनुभव अपना । सत हरि भजन जगत सब सपना ॥
सुनहु उमा ते लोग अभागी । हरि तजि होहिं बिषय अनुरागी ॥

———

क्रोध मनोज लोभ मद माया । छूटहिं सकल राम की दाया ॥
सो नर इन्द्रजाल नहिं भूला । जापर होइ सो नट अनुकूला ॥

———

दीप सिखा सम जुबति तन, मन जन होसि पतंग ।
भजहि राम तजि काम मद, करहि सदा सतसंग ॥

———

फुटकर

नाथ सकल साधन मैं हीना । कीन्ही कृपा जानि जन दीना ॥

———

हे विधि दीनबन्धु रघुराया। मो से सठ पर करिहहिं दाया ॥

जो कोसलपति राजिवनयना। करहु सो राम हृदयँ मम अयना॥

अस अभिमान जाइ जनि भोरे। मैं सेवक रघुपति पति मोरे ॥

यह बर माँगउँ कृपा-निकेता। बसहु हृदयँ श्री अनुज समेता ॥
(जन्म जन्म तव पद सुखकन्दा। बढ़ै प्रेम चकोर जिमि चन्दा ॥)

किष्किन्धाकाण्ड

काशी की महिमा

मुक्ति जन्म महि जानि, ज्ञान खानि अघ हानि कर।
जहँ बस संभु भवानि, सो कासी सेइअ कस न ॥

शंकर जी की महिमा

जरत सकल सुर बृंद, बिषम गरल जेहि पान किय।
तेहि न भजसि मन मंद, को कृपालु संकर सरिस ॥

सच्ची मित्रता

जे न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिन्हहि बिलोकत पातक भारी ॥
निज दुख गिरि सम रज करि जाना। मित्र क दुख रज मेरु समाना ॥
जिन्ह कें असि मति सहज न आई। ते सठ कत हठि करत मिताई ॥
कुपथ निवारि सुपंथ चलावा। गुन प्रगटै अवगुनन्हि दुरावा ॥
देत लेत मन संक न धरई। बल अनुमान सदा हित करई ॥
बिपति काल कर सतगुन नेहा। श्रुति कह संत मित्र गुन एहा ॥
जाकर चित अहिगति सम भाई। अस कुमित्र परिहरेहि भलाई ॥

कन्या के समान कौन हैं

अनुजबधू भगिनी सुत नारी। सुनु सठ कन्या सम ए चारी ॥
इन्हहि कुदृष्टि बिलोकइ जोई। ताहि बधें कछु पाप न होई ॥

बालि की अन्तिम अभिलाषा

जन्म जन्म मुनि जतनु कराहीं। अन्त राम कहि आवत नाहीं॥
जासु नाम बल संकर कासी। देत सबहि सम गति अबिनासी॥
मम लोचन गोचर सोइ आवा। बहुरि कि प्रभु अस बनिहि बनावा॥

सो नयन गोचर जासु गुन नित नेति कहि श्रुति गावहीं।
जिति पवन मन गो निरस करि मुनि ध्यान कबहुँक पावहीं॥
मोहिं जानि अति अभिमान बस प्रभु कहेउ राखु सरीर ही।
अस कवन सठ हठि काटि सुरतरु बारि करहि बबूर ही॥
अब नाथ करि करुना बिलोकहु देहु जो बर मागऊँ।
जेहि जोनि जन्मौं कर्म बस तहँ राम पद अनुरागऊँ॥
यह तनय मम सम बिनय बल कल्यानप्रद प्रभु लीजिये।
गहि बाँह सुर नर नाह आपन दास अंगद कीजिये॥

शरीर की रचना

छिति जल पावक गगन समीरा। पंचरचित यह अधम सरीरा॥
प्रगट सो तनु तव आगें सोवा। जीव नित्य केहि लगि तुम्ह रोवा॥

वर्षावर्णन

बरषाकाल मेघ नभ छाए। गरजत लागत परम सुहाए॥
लछिमन देखु मोरगन, नाचत बारिद पेखि।
गृही बिरति रत हरष जस, बिष्नुभगत कहुँ देखि॥

घन घमंड नभ गरजत घोरा। प्रियाहीन डरपत मन मोरा॥
दामिनि दमक रह न घन माहीं। खल कै प्रीति जथा थिर नाहीं॥
बरषहिं जलद भूमि निअराएँ। जथा नवहिं बुध बिद्या पाएँ॥
बूँद अघात सहहिं गिरि कैसें। खल के बचन संत सह जैसें॥
छुद्र नदी भरि चलीं तोराई। जस थोरेहुँ धन खल इतराई॥

भूमि परत भा ढाबर पानी। जनु जीवहि माया लपटानी॥
समिटिसमिटि जलभरहिं तलावा। जिमि सद्गुन सज्जन पहिं आवा॥
सरिता जल जलनिधि महुँ जाई। होइ अचल जिमि जिव हरि पाई॥

हरित भूमि तृन संकुल, समुझि परहिं नहिं पंथ।
जिमि पाखंड बाद तें, गुप्त होहिं सद्ग्रन्थ।

दादुर धुनि चहुँ दिसा सुहाई। बेद पढ़हिं जनु बटु समुदाई॥
नव पल्लव भए बिटप अनेका। साधक मन जस मिलें बिबेका॥
अर्क जवास पात बिनु भयऊ। जस सुराज खल उद्यम गयऊ॥
खोजत कतहुँ मिलइ नहिं धूरी। करइ क्रोध जिमि धरमहि दूरी॥
ससि संपन्न सोह महि कैसी। उपकारी कै संपति जैसी॥
निसि तम घन खद्योत बिराजा। जनु दंभिन्ह कर मिला समाजा॥
महावृष्टि चलि फूटि किआरीं। जिमि सुतंत्र भएँ बिगरहिं नारीं॥
कृषी निरावहिं चतुर किसाना। जिमि बुध तजहिं मोह मद माना॥
देखिअत चक्रबाक खग नाहीं। कलिहि पाइ जिमि धर्म पराहीं॥
ऊसर बरषइ तृन नहिं जामा। जिमि हरजन हियँ उपज न कामा॥
बिबिध जंतु संकुल महि भ्राजा। प्रजा बाढ़ जिमि पाइ सुराजा॥
जहँ तहँ रहे पथिक थकि नाना। जिमि इंद्रियगन उपजें ग्याना॥

कबहुँ प्रबल बह मारुत, जहँ तहँ मेघ बिलाहिं।
जिमि कपूत के ऊपजें, कुल सद्धर्म नसाहिं॥
कबहुँ दिवस महँ निबिड़ तम, कबहुँक प्रकट पतंग।
बिनसइ।उपजइ ग्यान जिमि, पाइ कुसंग सुसंग॥

शरद् ऋतु का वर्णन

बरषा बिगत सरद रितु आई। लछिमन देखहु परम सुहाई॥
फूले कास सकल महि छाई। जनु बरषाँ कृत प्रकट बुढ़ाई॥

उदित अगस्ति पंथ जल सोषा । जिमि लोभहि सोषइ संतोषा ॥
सरिता सर निर्मल जल सोहा । संत हृदय जस गत मद मोहा ॥
रस रस सूख सरित सर पानी । ममता त्याग करहिं जिमि ग्यानी॥
जानि सरद रितु खंजन आए । पाइ समय जिमि सुकृत सुहाए॥
पंक न रेनु सोह असि धरनी । नीति निपुन नृप कै जसि करनी॥
जल संकोच बिकल भईं मीना । अबुध कुटुंबी जिमि धनहीना ॥
बिनु घन निर्मल सोह अकासा । हरिजन इव परिहरि सब आसा॥
कहुँ कहुँ बृष्टि सारदी थोरी । कोउ एक पाव भगति जिमि मोरी॥

चले हरषि तजि नगर नृप, तापस बनिक भिखारि ।
जिमि हरि भगति पाइ श्रम, तजहिं आश्रमी चारि ॥

सुखी मीन जे नीर अगाधा । जिमि हरि सरन न एकउ बाधा ॥
फूलें कमल सोह सर कैसा । निर्गुन ब्रह्म सगुन भएँ जैसा ॥
गुंजत मधुकर मुखर अनूपा । सुन्दर खग रव नाना रूपा ॥
चक्रबाक मन दुख निसि पेखी । जिमि दुर्जन पर संपति देखी ॥
चातक रटत तृषा अति ओही । जिमि सुख लहइ न संकर द्रोही ॥
सरदातप निसि ससि अपहरई । संत दरस जिमि पातक टरई ॥
देखि इंदु चकोर समुदाई । चितवहिं जिमि हरिजन हरि पाई॥
मसक दंस बीते हिम त्रासा । जिमि द्विजद्रोह किएँ कुल नासा ॥

भूमि जीव संकुल रहे, गए सरद रितु पाइ ।
सदगुर मिलें जाहि जिमि, संसय भ्रम समुदाइ ॥

माया बड़ी प्रबल है

नाइ चरन सिरु कह कर जोरी । नाथ मोहि कछु नाहि न खोरी ॥
अतिसय प्रबल देव तव माया । छूटइ राम करहु जौं दाया ॥
बिषय बस्य सुर नर मुनि स्वामी । मैं पाँवर पसु कपि अति कामी ॥

नारि नयन सर जाहि न लागा। घोर क्रोध तम निसि जो जागा॥
लोभ पाँस जेहि गर न बँधाया। सो नर तुम्ह समान रघुराया॥
यह गुन साधन ते नहिं होई। तुम्हरी कृपा पाव कोउ कोई॥

सूक्तियाँ

सत्रु मित्र सुख दुख जग माहीं। मायाकृत परमारथ नाहीं॥

नट मरकट इव सबहि नचावत। रामु खगेस बेद अस गावत॥

उमा दारु जोषित की नाईं। सबहि नचावत रामु गोसाईं॥

सुर नर मुनि सब कै यह रीती। स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती॥

नाथ बिषय सम मद कछु नाहीं। मुनि मन मोह करइ छन माहीं॥

भानु पीठि सेइअ उर आगी। स्वामिहि सर्ब भाव छल त्यागी॥

तजि माया सेइअ परलोका। मिटहिं सकल भव संभव सोका॥

देह धरे कर यह फलु भाई। भजिअ राम सब काम बिहाई॥

सोइ गुनग्य सोई बड़भागी। जो रघुबीर चरन अनुरागी॥

हम सब सेवक अति बड़भागी। संतत सगुन ब्रह्म अनुरागी॥

निज इच्छा प्रभु अवतरइ, सुर महि गो द्विज लागि।
सगुन उपासक संग तहँ, रहहिं मोच्छ सब त्यागि॥

नीलोत्पल तनु स्याम, काम कोटि सोभा अधिक।
सुनिय तासु गुन ग्राम, जासु नाम अघ खग बधिक॥

फुटकर

समदर्सी मोहि कह सब कोऊ। सेवक प्रिय अनन्य गति सोऊ॥

सुनि सेवक दुख दीन दयाला। फरकि उठीं द्वै भुजा बिसाला॥

सेवक सठ नृप कृपन कुनारी। कपटी मित्र सूल सम चारी॥

अब प्रभु कृपा करहु यहि भाँती। सब तजि भजन करहुँ दिनराती॥

सुख संपति परिवार बड़ाई। सब परिहरि करिहौं सेवकाई॥
ए सब रामभक्ति के बाधक। कहहिं संत तव पद अवराधक॥

स्याम गात सिर जटा बनाएँ। अरुन नयन सर चाप चढ़ाएँ॥
पुनि पुनि चितै चरन चित दीन्हा। सुफल जन्म माना प्रभु चीन्हा॥

उमा राम सम हित जग माहीं। गुरु पितु मातु बन्धु प्रभु नाहीं॥

जानत हूँ अस प्रभु परिहरहीं। काहे न बिपति जाल नर परहीं॥

सुखी मीन जे नीर अगाधा। जिमि हरि सरन न एकौ बाधा॥

जासु कृपाँ लूटइ मद मोहा। ता कहँ उमा कि सपनेहुँ कोहा॥

तात राम कहँ नर जनि मानहु। निर्गुन ब्रह्म अजित अज जानहु॥

पापिउ जाकर नाम सुमिरहीं। अति अपार भवसागर तरहीं॥

सुन्दरकाण्ड

सत्सङ्ग की महिमा

तातस्वर्ग अपबर्ग सुख, धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि, जो सुख लव सतसंग॥

राम जी का स्मरण कर काम करिये

प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा॥
गरल सुधा रिपु करहिं मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई॥
गरुड़ सुमेरु रेनुसम ताही। रामकृपा करि चितवा जाही॥

विभीषण की दीनता

सुनहु पवन सुत रहनि हमारी। जिमि दसनन्हि महुँ जीभ बिचारी॥
तात कबहुँ मोहिं जानि अनाथा। करिहहिं कृपा भानुकुलनाथा॥
तामसु तनु कछु साधन नाहीं। प्रीति न पद सरोज मन माहीं॥
अब मोहिं भा भरोस हनुमन्ता। बिनु हरिकृपा मिलहिं नहिं संता॥
जौ रघुबीर अनुग्रह कीन्हा। तौ तुम मोहिं दरसु हठि दीन्हा॥

हनुमान् जी का आश्वासन

सुनहु बिभीषण प्रभु कइ रीती। करहिं सदा सेवक पर प्रीती॥
कहहु कवन मैं परम कुलीना। कपि चंचल सबहीं बिधि हीना॥
प्रात लेइ जो नाम हमारा। तेहि दिन ताहि न मिलइ अहारा॥
अस मैं अधम सखा सुनु, मोहू पर रघुबीर।
कीन्ही कृपा सुमिरि गुन, भरे बिलोचन नीर॥
जानत हूँ अस स्वामि बिसारी। फिरहिं ते काहे न होहिं दुखारी॥

सीता जी की वियोगावस्था

कृसतनु सीस जटा एक बेनी। जपति हृदयँ रघुपति गुनश्रेनी॥

निज पद नयन दिएँ मन, राम कमल पद लीन।
परमदुखी भा पवनसुत, देखि जानकी दीन॥

सीता जी का सतीत्व

स्याम सरोज दाम सम सुंदर। प्रभु भुज करि कर सम दसकंधर॥
सो भुज कंठ कि तव असि घोरा। सुनु सठ अस प्रवान पन मोरा॥
चंद्रहास हरु मम परितापं। रघुपति बिरह अनल संजातं॥
सीतल निसित बहसि बर धारा। कह सीता हरु मम दुख भारा॥

सीता जी की व्याकुलता

कह सीता बिधि भा प्रतिकूला। मिलिहि न पावक मिटिहि न सूला॥
देखिअत प्रगट गगन अंगारा। अवनि न आवत एकउ तारा॥
पावकमय ससि स्रवत न आगी। मानहुँ मोहि जानि हतभागी॥
सुनहि बिनय मम बिटप असोका। सत्य नाम करु हरु मम सोका॥
नूतन किसलय अनल समाना। देहि अगिनि जनि करहि निदाना॥

राम जी की वियोगावस्था

कहेउ राम बियोग तव सीता। मो कहुँ सकल भए बिपरीता॥
नव तरु किसलय मनहुँ कुसानू। काल निसा सम निसि ससि भानू॥
कुबलय बिपिन कुंतबन सरिसा। बारिद तपत तेल जनु बरिसा॥
जे हित रहे करत तेइ पीरा। उरग स्वास सम त्रिबिध समीरा॥
कहेहू तें कछु दुख घटि होई। काहि कहौं यह जान न कोई॥
तत्त्व प्रेम कर मम अरु तोरा। जानत प्रिया एकु मनु मोरा॥
सो मनु सदा रहत तोहि पाहीं। जानु प्रीति रसु एतनेहिं माहीं॥

सुनि सीता दुख प्रभु सुख अयना। भरि आए जल राजिव नयना ॥
बचन कायँ मन मम गति जाही। सपनेहु बूझिय बिपति किताही ॥

हनुमान् जी को रावण का उपदेश

सुनु रावण ब्रह्मांड निकाया। पाइ जासु बल बिरचति माया ॥
जाकें बल बिरंचि हरि ईसा। पालत सृजत हरत दससीसा ॥
जा बल सीस धरत सहसानन। अंडकोस समेत गिरिकानन ॥
धरइ जो बिबिध देह सुरत्राता। तुमसे सठन्ह सिखावनु दाता ॥
हरकोदंड कठिन जेहिं भंजा। तेहि समेत नृप दल मद गंजा ॥
खर दूषन त्रिसिरा अरु बाली। बधे सकल अतुलित बलसाली ॥

जाके बल लवलेस तें, जितेहु चराचर झारि।
तासु दूत मैं जाकरि, हरि आनेहु प्रिय नारि ॥

राम जी के बिना हानि

राम नाम बिनु गिरा न सोहा। देखु बिचारि त्यागि मद मोहा ॥
बसन हीन नहिं सोह सुरारी। सब भूषन भूषित बर नारी ॥
राम बिमुखि संपति प्रभुताई। जाइ रही पाई बिनु पाई ॥
सजल मूल जिन्ह सरितन्ह नाहीं। बरषि गएँ पुनि तबहिं सुखाहीं ॥

राम जी की कृपा से सब होता है

जामवंत कह सुनु रघुराया। जापर नाथ करहु तुम्ह दाया ॥
ताहि सदा सुभ कुशल निरंतर। सुर नर मुनि प्रसन्न ता ऊपर ॥
सोइ बिजई बिनई गुन सागर। तासु सुजसु त्रैलोक उजागर ॥

सीता जी की विकलता

नाम पाहरू दिवस निसि, ध्यान तुम्हार कपाट।
लोचन निज पद जंत्रित, जाहिं प्रान केहिं बाट ॥

हनुमान् जी का निहोरा

साखा मृग कै बड़ि मनुसाई। साखा तें साखा पर जाई॥
नाघि सिंधु हाटक पुर जारा। निसिचरगन बिधि बिपिन उजारा॥
सो सब तव प्रताप रघुराई। नाथ न कछु मोरि प्रभुताई॥
ता कहुँ प्रभु कछु अगम नहिं, जापर तुम्ह अनुकूल।
तव प्रभाव बड़वानलहि, जारि सकइ खलु तूल॥

राम ही ईश्वर हैं

तात राम नहिं नर भूपाला। भुवनेश्वर कालहु कर काला॥
ब्रह्म अनामय अज भगवंता। ब्यापक अजित अनादि अनंता॥
गो द्विज धेनु देव हितकारी। कृपासिंधु मानुष तनुधारी॥
जन रंजन भंजन खल ब्राता। बेद धर्म रच्छक सुनु भ्राता॥

राम शरणागत प्रतिपालक हैं

सरनागत कहुँ जे तजहिं, निज अनहित अनुमानि।
ते नर पावँर पापमय, तिन्हहि बिलोकत हानि॥
कोटि बिप्र बध लागहिं जाहू। आएँ सरन तजउँ नहिं ताहू॥
सनमुख होइ जीव मोहि जबहीं। जन्म कोटि अघ नासहिं तबहीं॥
पापवंत कर सहज सुभाऊ। भजन मोर तेहि भाव न काऊ॥
जौं पै दुष्ट हृदय सोइ होई। मोरें सनमुख आव कि सोई॥
निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा॥

कुछ ज्ञान की बातें

तब लगि हृदयँ बसत खल नाना। लोभ मोह मच्छर मद माना॥
जब लगि उर न बसत रघुनाथा। धरें चाप सायक कटि भाथा॥
ममता तरुन तमी अँधियारी। राग द्वेष उलूक सुखकारी॥
तब लगि बसति जीव मन माहीं। जब लगि प्रभु प्रताप रबि नाहीं॥

अब मैं कुसल मिटे भय भारे। देखि राम पद कमल तुम्हारे ॥
तुम कृपाल जापर अनुकूला। ताहि न ब्याप त्रिबिध भव सूला ॥

विभीषण-द्वारा राम का दर्शन

मैंनिसिचर अति अधम सुभाऊ। सुभ आचरनु कीन्ह नहिं काऊ ॥
जासु रूप मुनि ध्यान न आवा। तेहि प्रभु हरषि हृदय मोहि लावा ॥
अहोभाग्य मम अमित अति, राम कृपा सुख पुंज
देखेउँ नयन बिरंचि सिव, सेब्य जुगल पद कंज ॥

राम जी किसको अपनाते हैं

जौं नर होइ चराचर द्रोही। आवै सभय सरन तकि मोही ॥
तजि मद मोह कपट छल नाना। करउँ सद्य तेहि साधु समाना ॥
जननी जनक बंधु सुत दारा। तनु धनु भवन सुहृद परिवारा ॥
सब कै ममता ताग बटोरी। मम पद मनहिं बाँध बरि डोरी ॥
समदरसी इच्छा कछु नाहीं। हरष सोक भय नहिं मन माहीं ॥
अस सज्जन मम उर बस कैसें। लोभी हृदयँ बसइ धनु जैसें ॥
सगुन उपासक परहित, निरत नीति दृढ़ नेम।
ते नर प्रान समान मम, जिन्ह कें द्विजपद प्रेम ॥

अनधिकारी को उपदेश निष्फल है

सठ सन बिनय कुटिल सन प्रीती। सहज कृपन सन सुन्दर नीती ॥
ममता रत सन ज्ञान कहानी। अति लोभी सन बिरति बखानी ॥
क्रोधिहि सम कामिहि हरिकथा। ऊसर बीज बयें फल जथा ॥

सूक्तियाँ

लंका निसिचर निकर निवासा। इहाँ कहाँ सज्जन कर बासा ॥

रहि सन हठि करिहउँ पहिचानी। साधु ते होइ न कारज हानी ॥

सुनु माता साखा मृग, नहिं बल बुद्धि बिसाल।
प्रभु प्रताप तें गरुड़हि, खाइ परम लघु ब्याल॥

——

सचिव बैद गुर तीनि जौं, प्रिय बोलहिं भय आस।
राजधर्म तन तीनि कर, होइ बेगिहीं नास॥

——

काम क्रोध मद लोभ सब, नाथ नरक के पंथ।
सब परिहरि रघुबीरहि, भजहु भजहिं जेहि संत॥

——

जौ आपन चाहै कल्याना। सुजसु सुमति सुभ गति सुख नाना॥
सो परनारि लिलारु गोसाईं। तजउ चउथि के चंद कि नाईं॥

——

जहाँ सुमति तहँ संपति नाना। जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना॥

——

साधु अवग्या तुरत भवानी। कर कल्यान अखिल कै हानी॥

——

बरु भल बास नरक कर ताता। दुष्ट संग जनि देइ बिधाता॥

——

तब लगि कुसल न जीव कहुँ, सपनेहुँ मन बिश्राम।
जब लगि भजत न राम कहुँ, सोक धाम तजि काम॥

——

जो संपति सिव रावनहि, दीन्हि दिएँ दस माथ।
सोइ संपदा बिभीषनहि, सकुचि दीन्हि रघुनाथ॥

——

कादर मन कहुँ एक अधारा। दैव दैव आलसी पुकारा॥

——

काटेहिं पइ कदरी फरइ, कोटि जतन कोउ सींच।
बिनय न मान खगेस सुनु, डाटेहिं पइ नव नीच॥

——

ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी ॥

फुटकर

जासु नाम जपि सुनहुँ भवानी। भवबन्धन काटहि नर ग्यानी ॥
तासु दूत कि बन्ध तर आवा। प्रभु कारज लगि कपिहि बँधावा ॥

राम बिमुख संपति प्रभुताई। जाय रही पाई बिनु पाई ॥

प्रभु कर पंकज कपि कर सीसा। सुमिरि सो दसा मगन गौरीसा ॥

उमा राम सुभाउ जिन जाना। ताहि भजन तजि भाव न आना ॥

जासु सकल मंगलमय कीती। तासु पयान सगुन यह नीती ॥

चौदह भुवन एक पति होई। भूत द्रोह तिष्ठइ नहिं सोई ॥

गुन सागर नागर नर जोऊ। अलप लोभ भल कहइ न कोऊ ॥

सरन गए प्रभु ताहु न त्यागा। बिस्वद्रोह कृत अघ जेहि लागा।
जासु माम त्रयताप नसावन। सोइ प्रभु प्रगट समुझ जिय रावन।

उमा संत कै इहै बड़ाई। मंद करत जो करइ भलाई।

जिन पायन कर पादुका, भरत रहे मन लाय।
ते पद आज बिलोकिहौं, इन नयननि अब जाय ॥

अति कोमल रघुबीर सुभाऊ। जद्यपि अखिल लोक कर राऊ।

लंकाकाण्ड

राम और शिव की एकता

लिंग थापि बिधिवत करि पूजा। सिव समान प्रिय मोहिं न दूजा॥
सिव द्रोही मम भगत कहावा। सो नर सपनेहुँ मोहिं न भावा॥
संकर बिमुख भगति चह मोरी। सो नारकी मूढ़ मति थोरी॥

संकर प्रिय मम द्रोही, सिव द्रोही मम दास।
ते नर करहिं कलप भर, घोर नरक महुँ बास॥

रामेश्वरधाम का दर्शन

जे रामेश्वर दर्शन करिहहिं। ते तनु तजि मम लोक सिधरिहहिं॥
जो गंगाजलु आनि चढ़ाइहिं। सो साजुज्य मुक्ति नर पाइहिं॥
होइ अकाम जो छलतजि सेइहिं। भगति मोरि तेहि शंकर देइहिं॥
मम कृत सेतु जो दरसनु करिहीं। सो बिनु श्रम भवसागर तरिहीं॥

महान् की क्षुद्र से तुलना नहीं हो सकती

जासु परसु सागर खर धारा। बूड़े नृप अगनित बहु बारा॥
तासु गर्ब जेहि देखत भागा। सो नर क्यों दससीस अभागा॥
राम मनुज कस रे सठ बंगा। धन्वी कामु नदी पुनि गंगा॥
पशु सुरधेनु कलपतरु रूखा। अन्नदान अरु रस पीयूषा॥
बैनतेय खग अहि सहसानन। चिन्तामनि पुनि उपल दसानन॥
सुनु मतिमन्द लोक बैकुण्ठा। लाभ कि रघुपति भगति अकुण्ठा॥

सेनसहित तव मान मथि, बन उजारि पुर जारि।
कस रे सठ हनुमान कपि, गयउ जो तव सुत मारि॥

चन्द्रमा पर अनेक उक्तियाँ

पूरब दिसा बिलोकि प्रभु, देखा उदित मयंक।
कहत सबहि देखहु ससिहि, मृगपति सरिस असंक ॥

पूरब दिसि गिरिगुहा निवासी। परम प्रताप तेज बल रासी ॥
मत्त नाग तम कुम्भ बिदारी। ससि केसरी गगन बनचारी ॥
बिथुरे नभ मुकताहल तारा। निसि सुंदरी केर सिंगारा ॥
कह प्रभु ससि महुँ मेचकताई। कहहु काह निज निज मति भाई ॥
कह सुग्रीव सुनहु रघुराई। ससि महुँ प्रगट भूमि कै झाँई ॥
मारेहु राहु ससिहि कह कोई। उर महँ परी स्यामता सोई ॥
कोउ कह जब बिधि रति मुख कीन्हा। सार भाग ससिकर हर लीन्हा ॥
छिद्र सो प्रगट इंदु उर माहीं। तेहि मग देखिय नभ परिछाहीं ॥
प्रभु कह गरल बन्धु ससि केरा। अति प्रिय निज उर दीन्ह बसेरा ॥
बिष संजुत कर निकर पसारी। जारत बिरहवंत नर नारी ॥

कह हनुमन्त सुनहु प्रभु, ससि तुम्हार प्रिय दास।
तव मूरति बिधु उर बसति, सोइ स्यामता भास ॥

राम जी का विराट् स्वरूप

बिस्वरूप रघुबंस मनि, करहु बचन बिस्वासु।
लोक कल्पना बेद कर, अंग अंग प्रति जासु ॥

पद पाताल सीस अज धामा। अपर लोक अँग अँग बिश्रामा ॥
भृकुटि बिलास भयंकर काला। नयन दिवाकर कच घनमाला ॥
जासु घ्रान अस्विनीकुमारा। निसि अरु दिवस निमेष अपारा ॥
श्रवन दिसा दस बेद बखानी। मारुत स्वास निगम निज बानी ॥
अधर लोभ जम दसन कराला। माया हास बाहु दिगपाला ॥
आनन अनल अंबुपति जीहा। उतपति पालन प्रलय समीहा ॥

रोम राजि अष्टादस भारा। अस्थि सैल सरिता नस जारा॥
उदर उदधि अधगो जातना। जगमय प्रभु का बहु कलपना॥

अहंकार सिव बुद्धि अज, मन ससि चित्त महान।
मनुज बास सचराचर, रूप राम भगवान॥

मन्दोदरी की शिक्षा

अहह कंत कृत राम बिरोधा। काल बिबस मन उपज न बोधा॥
कालदंड गहि काहु न मारा। हरइ धर्म बल बुद्धि बिचारा॥
निकट काल जेहि आवत साईं। तेहि भ्रम होइ तुम्हारिहि नाईं॥

स्त्रियों में आठ अवगुण

नारि स्वभाव सत्य सब कहहीं। अवगुन आठ सदा उर रहहीं॥
साहस अनृत चपलता माया। भय अबिबेक असौच अदाया॥

बैर से भी मोक्ष

खल मनुजाद द्विजामिषभोगी। पावहिं गति जो जाचत जोगी॥
उमा राम मृदुचित करुनाकर। बयरभाव सुमिरत मोहिं निसिचर॥
देहि परम गति सो जियँ जानी। अस कृपालु को कहहु भवानी॥
अस प्रभु सुनि न भजहिं भ्रमत्यागी। नर मतिमंद ते परम अभागी॥

सगुण चरित्र की दुर्गमता

चरित राम के सगुन भवानी। तर्कि न जाइ बुद्धि बलबानी॥
असि बिचारि जे तग्य बिरागी। रामहिं भजहिं तर्क सब त्यागी॥

शस्त्ररहित की विजय

राम न रथी बिरथ रघुबीरा। देखि बिभीषन भयउ अधीरा॥
अधिक प्रीति मन भा संदेहा। बंदि चरन कह सहित सनेहा॥
नाथ न रथ नहिं तन पद त्राना। केहि बिधि जितब बीर बलवाना॥

सुनहु सखा कह कृपानिधाना। जेहिं जय होइ सो स्यंदन आना॥
सौरज धीरज तेहि रथचाका। सत्य सील दृढ़ ध्वजापताका॥
बल बिबेक दम परहित घोरे। छमा कृपा समता रजु जोरे॥
ईस भजनु सारथी सुजाना। बिरति चर्म संतोष कृपाना॥
दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा। बर बिग्यान कठिन कोदंडा॥
अमल अचल मन त्रोन समाना। सम जम नियम सिलीमुख नाना॥
कवच अभेद बिप्र गुरपूजा। एहि सम बिजय उपाय न दूजा॥

महा अजय संसार रिपु, जीति सकइ सो बीर।
जाकें अस रथ होइ दृढ़, सुनहु सखा मति धीर॥

अशुभ सूचनायें

असुभ होन लागे तब नाना। रोवहिं खर सृगाल बहु स्वाना॥
बोलहिं खग जग आरति हेतू। प्रगट भए नभ जहँ तहँ केतू॥
दस दिस दाह होन अति लागा। भयउ परब बिनु रबि उपरागा॥
मंदोदरि उर कंपति भारी। प्रतिमा स्रवहिं नयन मग बारी॥

पाप का अन्तिम परिणाम

तव बल नाथ डोल नित धरनी। तेजहीन पावक ससि तरनी॥
सेष कमठ सहि सकहिं न भारा। सो तनु भूमि परेउ भरि छारा॥
बरुन कुबेर सुरेस समीरा। रन सन्मुख धरि काहुँ न धीरा॥
भुजबल जितेहु काल जम साईं। आजु परेहु अनाथ की नाईं॥
जगत बिदित तुम्हारि प्रभुताई। सुत परिजन बल बरनि न जाई॥
रामबिमुख अस हाल तुम्हारा। रहा न कोउ कुल रोवनिहारा॥
तव बस बिधि प्रपंच सब नाथा। सभय दिसिप नित नावहिं माथा॥
अब तव सिर भुज जंबुक खाहीं। राम बिमुख यह अनुचित नाहीं॥

सूक्तियाँ

लव निमेष परमानु जुग, बरष कलप सर चंड।
भजसि न मन तेहि राम कहँ, कालु जासु कोदंड॥

———

श्री रघुबीर प्रताप ते, सिंधु तरे पाषान।
ते मतिमंद जे राम तजि, भजहिं जाइ प्रभु आन॥

———

नाथ बयरु कीजे ताही सों। बुधि बल सकिअ जीति जाही सों॥

———

प्रिय बानी जे सुनहिं जे कहहीं। ऐसे नर निकाय जग अहहीं॥

———

बचन परमहित सुनत कठोरे। सुनहिं जे कहहिं ते नर प्रभु थोरे॥

———

फूलइ फरइ न बेत, जदपि सुधा बरषहिं जलद।
मूरख हृदयँ न चेत, जौं गुर मिलहिं बिरंचिसम॥

———

बहुत बुझाइ तुम्हहि का कहऊँ। परम चतुर मैं जानत अहऊँ॥

———

प्रीति बिरोध समान सन, करि अनीत असि जाहि।
जौं मृगपति बध मेडुकन्हि, भल कि कहइ कोउ ताहि॥

———

कौल कामबस कृपिन बिमूढ़ा। अति दरिद्र अजसी अति बूढ़ा॥
सदा रोगबस संतत क्रोधी। बिष्नु बिमुख श्रुति संत बिरोधी॥
तनु पोषक निंदक अघ खानी। जीवत सब सम चौदह प्रानी॥

———

हरिहर निंदा सुनइ जे काना। होइ पाप गोघात समाना॥

———

फुटकर

सुनु गिरिजा क्रोधानल जासू। जारइ भुवन चारि दस आसू॥
सक संग्राम जीति को ताही। सेवहिं सुर नर अग जग जाही॥

———

काल ब्याल कर भच्छक जोई। सपनेहुँ समर कि जीतिय सोई॥

———

अहह दैव मैं कत जग जायउँ। प्रभु के एकहु काज न आयउँ॥

———

बहुबिधि सोचत सोच बिमोचन। स्रवत सलिल राजिवदल लोचन॥
उमा अखंड एक रघुराई। नर गति भगत कृपाल देखाई॥

———

हैं दससीस मनुज रघुनायक। जाके हनूमान से पायक॥

———

कीन्हेउ प्रभु बिरोध तेहि देवक। सिव बिरंचि सुर जाके सेवक॥

———

धन्य धन्य तें धन्य बिभीषन। भयहु तात निसिचर कुल भूषन॥

———

छीजहिं निसिचर दिन अरु राती। निज मुख कहें सुकृत जेहि भाँती॥

———

ब्याल पास बस भये खरारी। स्वबस अनन्त एक अबिकारी॥

———

गिरिजा जाकर नाम जपि, मुनि काटहिं भव पास।
सो कि बंधतर आवइ, ब्यापक बिस्व निवास॥

———

जय अनन्त जय जगदाधारा। प्रभु तुम सब देवन्ह निस्तारा॥

———

ताहि कि संपति सगुन सुभ, सपनेहुँ मन बिश्राम।
भूत द्रोह रत मोह बस, राम बिमुख रत काम॥

निफल होहिं रावण सर कैसें। खल के सकल मनोरथ जैसें॥

बिफल होहिं सब उद्यम ताके। जिमि परद्रोह निरत मनसा के॥

जिमि जिमि प्रभु हर तासु सिर, तिमि तिमि होहिं अपार।
सेवत बिषय बिवर्ध जिमि, नित नित नूतन मार॥

प्रभु अग्या धरि सीस, चरन बन्दि अंगद उठेउ।
सोइ गुनसागर ईस, रामकृपा जापर करहु॥

सुनु सठ भेद होइ मन ताकें। श्री रघुबीर हृदय नहिं जाकें॥

राम मनुज बोलत असि बानी। गिरहिं न तव रसना अभिमानी॥
गिरिहहिं रसना संसय नाहीं। सिरन्ह समेत समर महि माँहीं॥

पुरुष कुजोगी जिमि उरगारी। मोह बिटप नहिं सकहिं उपारी॥

भूमि न छाँड़त कपि चरन, देखत रिपु मद भाग।
कोटि बिघ्न ते संत कर, मन जिमि नीति न त्याग॥

जगदातमा प्रानपति रामा। तासु बिमुख किमि लह बिश्रामा॥
उमा राम की भृकुटि बिलासा। होइ बिस्व पुनि पावइ नासा॥
तृन ते कुलिस कुलिस तृन करई। तासु दूतपन कहु किमि टरई॥

प्रिय तुम ताहि जितब संग्रामा । जाके दूत केर यह कामा ॥

——

तेहि कहँ पिय पुनि पुनि नर कहहू । मुधा मान ममता मद बहहू ॥

——

भयउ प्रकास कतहुँ तम नाहीं । ग्यान उदय जिमि संसय जाहीं ॥

——

बेद पुरान जासु जस गायो । राम बिमुख काहुँ न सुख पायो ॥

——

जासु प्रबल माया बस, सिव बिरंचि बड़ छोट ।
ताहि दिखावै निसिचर, निज माया मति खोट ॥

——

सगुनोपासक मोच्छ न लेहीं । तिन्ह कहुँ राम भगति निज देहीं ॥

——

अहह नाथ रघुनाथ सम, कृपासिन्धु नहिं आन ।
जोगि बृन्द दुर्लभ गति, तोहि दीन्ह भगवान ॥

——

प्रभु सक त्रिभुअन मारि जिआई । केवल सक्रहिं दीन्हि बड़ाई ।

——

खल मल धाम काम रत रावन । गति पाई जो मुनिवर पाव न ॥

——

बीते अवधि जाउँ जौ, जियत न पावउँ बीर ।
सुमिरत अनुज प्रीति प्रभु, पुनि पुनि पुलक समीर ॥

——

मुनि जेहि ध्यान न पावहिं, नेति नेति कह बेद ।
कृपासिंधु सोइ कपिन्ह सन, करत अनेक बिनोद ॥

——

उमा जोग जप दान तप, नाना मख ब्रत नेम।
रामकृपा नहिं करहिं तसि, जसि निष्केवल प्रेम॥

सुनि प्रभु बचन लाज हम मरहीं। मसक कहूँ खगपति हित करहीं॥

अब सोइ जतन करहु तुम ताता। देखहुँ नयन स्याम मृदु गाता॥

सर्बसु खाइ भोग करि नाना। समर भूमि भए बल्लभ प्राना॥

सुत बित नारि भवन परिवारा। होहिं जाहिं जग बारहिं बारा॥
अस बिचारि जियँ जागहु ताता। मिलइ न जगत सहोदर भ्राता॥

जनि जल्पना करि सुजसु नासहि नीति सुनहि करहि छमा।
संसार महँ पूरुष त्रिबिध पाटल रसाल पनस समा॥
एक सुमनप्रद एक सुमनफल एक फलइ केवल लागही॥
एक कहहिं कहहिं करहिं अपर एक करहिं कहत न बागही॥

यह कलिकाल मलायतन, मन करि देखु बिचार।
श्री रघुनाथ नाम तजि, नाहिन आन अधार॥

तब रघुपति रावन के, सीस भुजा सर चाप।
काटे बहुत बढ़े पुनि, जिमि तीरथ के पाप॥

काटत बढ़हिं सीस समुदाई। जिमि प्रति लाभ लोभ अधिकाई॥

उमा काल मरु जाकी ईछा। सो प्रभु जन कर प्रीति परीछा॥

उत्तरकाण्ड

मातृभूमि अवधपुरी की शोभा

जद्यपि सब बैकुंठ बखाना। बेद पुरान बिदित जगु जाना॥
अवधपुरी सम प्रिय नहिं सोऊ। यह प्रसंग जानइ कोउ कोऊ॥
जन्मभूमि मम पुरी सोहावनि। उत्तर दिसि बह सरजू पावनि॥
जा मज्जन ते बिनहिं प्रयासा। मम समीप नर पावहिं बासा॥
अति प्रिय मोहि इहाँ के बासी। मम धामदा पुरी सुखरासी॥

राम जी की स्तुति

जय राम रमा रमनं समनं। भव ताप भयाकुल पाहि जनं॥
अवधेस सुरेस रमेस बिभो। सरनागत माँगत पाहि प्रभो॥
दससीस बिनासन बीस भुजा। कृत दूरि महा महि भूरि रुजा॥
रजनीचर बृन्द पतंग रहे। सर पावक तेज प्रचंड दहे॥
महि मंडल मंडन चारुतरं। धृत सायक चाप निषंग बरं॥
मद मोह महा ममता रजनी। तम पुंज दिवाकर तेज अनी॥
मन जात किरात निपात किए। मृग लोग कुभोग सरेन हिए॥
हरि नाथ अनाथनि पाहि हरे। बिषया बन पाँवर भूलि परे॥
बहु रोग बियोगन्हि लोग हए। भवदंघ्रि निरादर के फल ए॥
भवसिंधु अगाध परे नर ते। पद पंकज प्रेम न जे करते॥
अति दीन मलीन दुखी नितहीं। जिन्ह कें पद पंकज प्रीति नहीं॥
अवलंब भवंत कथा जिन्ह के। प्रिय संत अनंत सदा तिन्ह के॥
नहिं राग न लोभ न मान मदा। तिन्ह कें सम बैभव वा बिपदा॥
एहि ते तव सेवक होत मुदा। मुनि त्यागत जोग भरोस सदा॥

करि प्रेम निरंतर नेम लिए। पद पंकज सेवत सुद्ध हिएँ ॥
सम मानि निरादर आदरही। सब संत सुखी बिचरंत मही ॥
मुनि मानस पंकज भृंग भजे। रघुबीर महा रनधीर अजे ॥
तव नाम जपामि नमामि हरी। भव रोग महामद मान अरी ॥
गुन सील कृपा परमायतनं। प्रनमामि निरंतर श्रीरमनं ॥
रघुनंद निकन्दय द्वंद घनं। महिपाल बिलोकय दीन जनं ॥

बार बार बर माँगउँ, हरषि देहु श्रीरंग।
पदसरोज अनपायनी, भगति सदा सतसंग।

रामराज

बरनाश्रम निज निज धरम, निरत बेद पथ लोग।
चलहिं सदा पावहिं सुखहिं, नहिं भयसोक न रोग ॥

दैहिक दैविद भौतिक तापा। रामराज नहिं काहुहि ब्यापा ॥
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती ॥
चारिउ चरन धर्म जग माहीं। पूरि रहा सपनेहुँ अघ नाहीं ॥
राम भगति रत नर अरु नारी। सकल परमगति के अधिकारी ॥
अल्प मृत्यु नहिं कवनिउ पीरा। सब सुंदर सब बिरुज सरीरा ॥
नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना। नहिं कोउ अबुध न लच्छनहीना ॥
सब निर्दंभ धर्मरत पुनी। नर अरु नारि चतुर सब गुनी ॥
सब गुनग्य पंडित सब ग्यानी। सब कृतग्य नहि कपट सयानी ॥

रामराज नभगेस सुनु, सचराचर जग माहिं।
काल कर्म सुभाव गुन, कृत दुख काहुहि नाहिं ॥

भूमि सप्त सागर मेखला। एक भूप रघुपति कोसला ॥
भुअन अनेक रोम प्रति जासू। यह प्रभुता कछु बहुत न तासू ॥
सो महिमा समुझत प्रभु केरी। यह बरनत हीनता घनेरी ॥
सोउ महिमा खगेस जिन्ह जानी। फिरि एहिं चरित तिन्हहु रति मानी ॥

सोउ जाने कर फल यह लीला। कहहिं महा मुनिबर दम सीला॥
रामराज कर सुख संपदा। बरनि न सकइ फनीस सारदा॥
सब उदार सब पर उपकारी। बिप्रचरन सेवक नर नारी॥
एक नारि ब्रत रत सब झारी। ते मन बच क्रम पति हितकारी॥

दंड जीतन्ह कर भेद जहँ, नर्तक नृत्य समाज।
जीतहु मनहि सुनिअ अस, रामचंद्र के राज॥

फूलहिं फरहिं सदा तरु कानन। रहहिं एक सँग गज पंचानन॥
खग मृग सहज बयरु बिसराई। सबन्हि परस्पर प्रीति बढ़ाई॥
कूजहिं खग मृग नाना बृंदा। अभय चरहिं बन करहिं अनंदा॥
सीतल सुरभि पवन बह मंदा। गुंजत अलि लै चलि मकरंदा॥
लता बिटप मागें मधु चवहीं। मन भावतो धेनु पय स्रवहीं॥
ससि संपन्न सदा रह धरनी। त्रेताँ भइ कृतजुग कै करनी॥
प्रगटीं गिरिन्ह बिबिध मनि खानी। जगदातमा भूप जग जानी॥
सरिता सकल बहहिं बर बारी। सीतल अमल स्वाद सुखकारी॥
सागर निज मरजादाँ रहहीं। डारहिं रत्न तटन्हि नर लहहीं॥
सरसिज संकुल सकल तड़ागा। अति प्रसन्न दस दिसा बिभागा॥

बिधु महि पूर मयूखन्हि, रबि तप जेतनेहि काज।
मागें बारिद देहिं जल, रामचन्द्र कें राज॥

सन्तों के लक्षण

संत असन्तन्हि कै असि करनी। जिमि कुठार चंदन आचरनी॥
काटइ परसु मलय सुनु भाई। निज गुन देइ सुगंध बसाई॥

ताते सुर सीसन्ह चढ़त, जग बल्लभ श्रीखंड।
अनल दाहि पीटत घनहिं, परसु बदन यह दंड॥

बिषय अलंपट सील गुनीकर। पर दुख दुख सुख सुख देखे पर॥
सम अभूत रिपु बिमद बिरागी। लोभामरष हरष भय त्यागी॥

कोमल चित दीनन्ह पर दाया । मन बच क्रम मम भगति अमाया ।।
सबहि मानप्रद आपु अमानी । भरत प्रान सम मम ते प्रानी ।।
बिगत काम मम नाम परायन । सांति बिरति बिनती मुदितायन ।।
सीतलता सरलता मयत्री । द्विज पद प्रीति धर्म जनयत्री ।।
ए सब लच्छन बसहिं जासु उर । जानेहु तात संत संतत फुर ।।
सम दम नियम नीति नहिं डोलहिं । परुष बचन कबहूँ नहिं बोलहिं ।।

निन्दा अस्तुति उभय सम, ममता मम पदकंज ।
ते सज्जन मम प्रानप्रिय, गुनमंदिर सुखपुंज ।।

असन्तों के लक्षण

सुनहु असंतन्ह केर सुभाऊ । भूलेहुँ संगति करिअ न काऊ ।।
तिन्ह कर संग सदा दुखदाई । जिमि कपिलहि घालइ हरहाई ।।
खलन्ह हृदय अति ताप बिसेषी । जरहिं सदा पर संपति देखी ।।
जहँ कहुँ निन्दा सुनहि पराई । हरषहिं मनहुँ परी निधि पाई ।।
काम क्रोध मद लोभ परायन । निर्दय कपटी कुटिल मलायन ।।
बयरु अकारन सब काहू सों । जो कर हित अनहित ताहू सों ।।
झूठइ लेना झूठइ देना । झूठइ भोजन झूठ चबेना ।।
बोलहिं मधुर बचन जिमि मोरा । खाइ महा अहि हृदय कठोरा ।।

परद्रोही पर दार रत, पर धन पर अपबाद ।
ते नर पाँवर पापमय, देह धरें मनुजाद ।।

लोभइ ओढ़न लोभइ डासन । सिस्नोदर पर जमपुर त्रासन ।।
काहू की जौं सुनहिं बड़ाई । स्वास लेहिं जनु जूड़ी आई ।।
जब काहू कै देखहिं बिपती । सुखी भए मानहुँ जग नृपती ।।
स्वारत रत परिवार बिरोधी । लंपट काम लोभ अति क्रोधी ।।
मातु पिता गुर बिप्र न मानहिं । आपु गए अरु घालहिं आनहिं ।।
करहिं मोहबस द्रोह परावा । संत संग हरिकथा न भावा ।।

अवगुन सिंधु मंदमति कामी। बेद बिदूषक परधन स्वामी॥
बिप्र द्रोह पर द्रोह बिसेषा। दंभ कपट जियँ धरें सुवेषा॥

ऐसे अधम मनुज खल, कृतजुग त्रेताँ नाहिं।
द्वापर कछुक बृंद बहु, होइहहिं कलिजुग माहिं॥

मनुष्य-शरीर की अज्ञानता

बड़े भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रन्थन्हि गावा॥
साधन धाम मोच्छ कर द्वारा। पाइ न जेहिं परलोक सँवारा॥

सो परत्र दुख पावइ, सिर धुनि धुनि पछिताइ।
कालहि कर्महि ईस्वरहि, मिथ्या दोस लगाइ॥

एहि तन कर फल बिषय न भाई। स्वर्गउ स्वल्प अंत दुखदाई॥
नर तनु पाइ बिषयँ मन देहीं। पलटि सुधा ते सठ बिष लेहीं॥
ताहि कबहुँ भल कहइ न कोई। गुंजा ग्रहइ परस मनि खोई॥
आकर चारि लच्छ चौरासी। जोनि भ्रमत यह जिव अबिनासी॥
फिरत सदा माया कर प्रेरा। काल कर्म सुभाव गुन घेरा॥
कबहुँक करि करुना नरदेही। देत ईस बिनु हेतु सनेही॥
नर तनु भव बारिधि कहुँ बेरो। सन्मुख मरुत अनुग्रह मेरो॥
करनधार सदगुर दृढ़ नावा। दुर्लभ साज सुलभ करि पावा॥

जो न तरै भवसागर, नर समाज अस पाइ।
सो कृत निन्दक मंदमति, आत्माहन गति जाइ॥

परलोक जाने का सुलभ मार्ग

जौं परलोक इहाँ सुख चहहू। सुनि मम बचन हृदयँ दृढ़ गहहू॥
सुलभ सुखद मारग यह भाई। भगति मोरि पुरान श्रुति गाई॥
ग्यान अगम प्रत्यूह अनेका। साधन कठिन न मन कहुँ टेका॥
करत कष्ट बहु पावइ कोऊ। भक्तिहीन मोहि प्रिय नहिं सोऊ॥

भक्ति सुतंत्र सकल सुखखानी। बिनु सतसंग न पावहिं प्रानी॥
पुन्यपुंज बिनु मिलहिं न संता। सतसंगति संसृति कर अंता॥
पुन्य एक जग महुँ नहिं दूजा। मन क्रम बचन बिप्र पदपूजा॥
सानुकूल तेहि पर मुनि देवा। जो तजि कपटु करइ द्विज सेवा॥
औरउ एक गुपुत मत, सबहि कहउँ कर जोरि।
संकरभजन बिना नर, भगति न पावइ मोरि॥

कहहु भगति पथ कवन प्रयासा। जोग न मख जप तप उपबासा॥
सरल सुभाव न मन कुटिलाई। जथा लाभ संतोष सदाई॥
मोर दास कहाइ नर आसा। करइ तौ कहहु कहा बिस्वासा॥
बहुत कहउँ का कथा बढ़ाई। एहि आचरन बस्य मैं भाई॥
बैर न बिग्रह आस न त्रासा। सुखमय ताहि सदा सब आसा॥
अनारंभ अनिकेत अमानी। अनघ अरोष दच्छ बिग्यानी॥
प्रीति सदा सज्जन संसर्गा। तृन सम बिषय स्वर्ग अपवर्गा॥
भगति पच्छ हठ नहिं सठताई। दुष्ट तर्क सब दूरि बहाई॥
मम गुन ग्राम नाम रत, गत ममता मद मोह।
ताकर सुख सोइ जानइ, परानंद संदोह॥

सब साधनों का मूल रामभक्ति

जप तप नियम जोग निज धर्मा। श्रुति संभव नाना सुभकर्मा॥
ग्यान दया दम तीरथ मज्जन। जहँ लगि धर्म कहत श्रुति सज्जन॥
आगम निगम पुरान अनेका। परे सुने कर फल प्रभु एका॥
तव पद पंकज प्रीति निरंतर। सब साधन कर यह फल सुन्दर॥
छूटइ मल कि मलहि के धोएँ। घृत कि पाव कोउ बारि बिलोएँ॥
प्रेम भगति जल बिनु रघुराई। अभिअंतर मल कबहुँ न जाई॥
सोइ सर्बग्य तग्य सोइ पंडित। सोइ गुनगृह बिग्यान अखंडित॥
दच्छ सकल लच्छन जुत सोई। जाकें पद सरोज रति होई॥

राम की अनन्त महिमा

राम अनन्त अनन्त गुनानी। जन्म कर्म अनंत नामानी॥
जल सीकर महि रज गनि जाहीं। रघुपति चरित न बरनि सिराहीं॥
रामचरित जे सुनत अघाहीं। रस बिसेष जाना तिन्ह नाहीं॥
जीवन मुक्त महामुनि जेऊ। हरिगुन सुनहिं निरंतर तेऊ॥
भवसागर चह पार जो पावा। रामकथा ता कहँ दृढ़ नावा॥
बिषइन्ह कहँ पुनि हरि गुन ग्रामा। श्रवन सुखद अरु मन अभिरामा॥
श्रवनवंत अस को जगमाहीं। जाहि न रघुपतचरित सोहाहीं॥
ते जड़ जीव निजात्मक घाती। जिन्हहि न रघुपति कथा सोहाती॥

रामभक्त दुर्लभ है

नर सहस्र महँ सुनहु पुरारी। कोउ एक होइ धर्म ब्रतधारी॥
धर्मसील कोटिक महँ कोई। बिषय बिमुख बिरागरत होई॥
कोटि बिरक्त मध्य श्रुति कहई। सम्यक ज्ञान सकृत कोउ लहई॥
ग्यानवंत कोटिक महँ कोऊ। जीवन मुक्त सकृत जग सोऊ।
तिन सहस्र महुँ सब सुखखानी। दुर्लभ ब्रह्मलीन बिग्यानी॥
धर्मसील बिरक्त अरु ग्यानी। जीवनमुक्त ब्रह्म पर प्रानी॥
सब ते सो दुर्लभ सुरराया। रामभगति रत गत मद माया॥

सतसंग की महिमा

बिनु सतसंग न हरि कथा, तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गएँ बिनु रामपद, होइ न दृढ़ अनुराग॥
मिलहिं न रघुपति बिनु अनुरागा। किएँ जोग तप ज्ञान बिरागा॥

शिक्षा

मोह न अंध कीन्ह केहि केही। को जग काम नचाव न जेही॥
तृस्ना केहि न कीन्ह बौराहा। केहि कर हृदय क्रोध नहिं दाहा॥

ग्यानी तापस सूर कबि, कोबिद गुन आगार।
केहि कै लोभ बिडंबना, कीन्हि न एहि संसार॥
श्रीमद बक्र न कीन्ह केहि, प्रभुता बधिर न काहि।
मृगलोचनि के नैन सर, को अस लाग न जाहि॥

गुन कृत सन्यपात नहिं केही। कोउ न मान मद तजेउ निबेही॥
जोबन ज्वर केहि नहिं बलकावा। ममता केहि कर जस नानसावा॥
मच्छर काहि कलंक न लावा। काहि न सोक समीर डोलावा॥
चिंता साँपिन को नहिं खाया। को जग जाहि न ब्यापी माया॥
कीट मनोरथ दारु सरीरा। जेहि न लाग घुन को अस धीरा॥
सुत बित लोक ईसना तीनी। केहि कै मति इन्ह कृत न मलीनी॥
यह सब माया कर परिवारा। प्रबल अमित को बरनै पारा॥
सिव चतुरानन जाहि डेराहीं। अपर जीव केहि लेखे माहीं॥

ब्यापि रहेउ संसार महुँ, माया कटक प्रचंड।
सेनापति कामादि भट, दंभ कपट पाषंड॥
सो दासी रघुबीर कै, समुझें मिथ्या सोपि।
छूट न रामकृपा बिनु, नाथ कहउँ पद रोपि॥

रामजी माया से परे हैं

जो माया सब जगहिं नचावा। जासु चरित लखि काहुँ न पावा॥
सोइ प्रभु भ्रू बिलास खगराजा। नाच नटी इव सहित समाजा॥

जथा अनेक बेष धरि, नृत्य करै नट कोइ।
सोइ सोइ भाव देखावै, आपु न होइ न सोइ॥

असि रघुपति लीला उरगारी। दनुज बिमोहनि जन सुखकारी॥

राम के भक्त उनको अत्यन्त प्यारे हैं

मम माया संभव संसारा। जीव चराचर बिबिध प्रकारा॥
सब मम प्रिय सब मम उपजाये। सब ते अधिक मनुज मोहि भाये॥

तिन्ह महँ द्विज द्विज कहँ श्रुतिधारी। तिन्ह महँ निगम धरम अनुसारी॥
तिन्ह महँ प्रिय बिरक्त पुनि ज्ञानी। ग्यानिहु ते अतिप्रिय बिग्यानी॥
तिन्ह ते पुनि मोहि प्रिय निज दासा। जेहि गति मोरि न दूसरि आसा॥
पुनि पुनि सत्य कहहुँ तोहि पाहीं। मोहि सेवक सम प्रिय कोउ नाहीं॥
भगतिहीन बिरंचि किन होई। सब जीवहु सम प्रिय मोहि सोई॥
भगतिवंत अति नीचउ प्रानी। मोहि प्रान प्रिय असि मम बानी॥

सुचि सुसील सेवक सुमति, प्रिय कहु काहि न लाग।
श्रुति पुरान कह नीति असि, सावधान सुनु काग॥

एक पिता के बिपुल कुमारा। होहिं पृथक गुन सील अचारा॥
कोउ पंडित कोउ तापस ग्याता। कोउ धनवंत सूर कोउ दाता॥
कोउ सर्बग्य धर्मरत कोई। सब पर पितहि प्रीति सम होई॥
कोउ पितु भगत बचन मन कर्मा। सपनेहु जान न दूसर धर्मा॥
सो सुत प्रिय पितु प्रान समाना। जद्यपि सो सब भाँति अयाना॥
एहि बिधि जीव चराचर जेते। त्रिजग देव नर असुर समेते॥
अखिल बिस्व यह मोर उपाया। सब पर मोहि बराबरि दाया॥
तिन्ह महँ जो परिहरि मद माया। भजै मोहिं मन बच अरु काया॥

पुरुष नपुंसक नारि वा, जीव चराचर कोइ।
सर्ब भाव भज कपट तजि, मोहि परम प्रिय सोइ॥

राम-कृपा से भक्ति की प्राप्ति

रामकृपा बिनु सुनु खगराई। जानि न जाइ राम प्रभुताई॥
जाने बिनु न होइ परतीती। बिनु परतीति होइ नहिं प्रीती॥
प्रीति बिना नहिं भक्ति दृढ़ाई। जिमि खगपति जल कै चिकनाई॥

शिक्षा

बिनु गुर होइ कि ग्यान, ग्यान कि होइ बिराग बिनु।
गावहिं बेद पुरान, सुख कि लहिअ हरिभगति बिनु॥

कोउ बिश्राम कि पाव, तात सहज संतोष बिनु।
चलै कि जलबिनु नाव, कोटि जतन पचिपचि मरिअ॥

बिनु संतोष न काम नसाहीं। काम अछत सुख सपनेहुँ नाहीं॥
राम भजनबिनु मिटहिं कि कामा। थल बिहीन तरु कबहुँ कि जामा॥
बिनु बिग्यान कि समता आवइ। कोउ अवकास कि नभ बिनु पावइ॥
श्रद्धा बिना धर्म नहिं होई। बिनु महि गंध कि पावइ कोई॥
बिनु तप तेज कि कर बिस्तारा। जल बिनु रस कि होइ संसारा॥
सील कि मिल बिनु बुध सेवकाई। जिमि बिनु तेज न रूप गोसाँई॥
निज सुख बिनु मन होइ कि धीरा। परस कि होइ बिहीन समीरा॥
कवनिउ सिद्धि कि बिनु बिस्वासा। बिनु हरि भजन न भवभय नासा॥

बिनु बिस्वास भगत नहिं, तेहि बिनु द्रवहिं न रामु।
राम कृपा बिनु सपनेहुँ, जीव न लह बिश्रामु॥
अस बिचारि मतिधीर, तजि कुतर्क संसय सकल।
भजहु राम रघुबीर, करुनाकर सुन्दर सुखद॥

कलियुग के धर्म

कलिमल ग्रसे धर्म सब, लुप्त भए सद्ग्रन्थ।
दंभिन्ह निज मति कल्पि करि, प्रगट किए बहु पन्थ॥

बरन धर्म नहिं आश्रम चारी। श्रुति बिरोध रत सब नर नारी॥
द्विज श्रुति बेचक भूप प्रजासन। कोउ नहिं मान निगम अनुसासन॥
मारग सोइ जा कहुँ जोइ भावा। पण्डित सोइ जो गाल बजावा॥
मिथ्यारंभ दंभ रत जोई। ताकहुँ संत कहइ सब कोई॥
सोइ सयान जो पर धन हारी। जो कर दंभ सो बड़ आचारी॥
जो कह झूठ मसखरी जाना। कलियुग सोइ गुनवंत बखाना॥

निराचार जो श्रुति पथ त्यागी। कलिजुग सोइ ग्यानी सो बिरागी ॥
जाकें नख अरु जटा बिसाला। सोइ तापस प्रसिद्ध कलिकाला ॥

असुभ बेष भूषन धरें, भच्छाभच्छ जे खाहिं।
तेइ जोगी तेइ सिद्ध नर, पूज्य ते कलिजुग माहिं ॥
जे अपकारी चार, तिन्हकर गौरव मान्य तेइ।
मन क्रम बचन लबार, तेइ बकता कलिकाल महुँ ॥

नारि बिबस नर सकल गोसाईं। नाचहिं नट मर्कट की नाईं ॥
सूद्र द्विजन्ह उपदेसहिं ग्याना। मेलि जनेऊ लेहिं कुदाना ॥
सब नर काम लोभ रत क्रोधी। देव बिप्र श्रुति संत बिरोधी ॥
गुन मंदिर सुंदर पति त्यागी। भजहि नारि परपुरुष अभागी ॥
सौभागिनी बिभूषन हीना। बिधवन्ह के सिंगार नवीना ॥
गुर सिष बधिर अंध का लेखा। एक न सुनइ एक नहिं देखा ॥
हरइ सिष्य धन सोक न हरई। सो गुर घोर नरक महुँ परई ॥
मातु पिता बालकन्हि बोलावहिं। उदर भरै सोइ धर्म सिखावहिं ॥

ब्रह्म ग्यान बिनु नारि नर, कहहिं न दूसरि बात।
कौड़ी लागि लोभ बस, करहिं बिप्र गुर घात ॥
बादहिं सूद्र द्विजन्ह सन, हम तुम्ह ते कछु घाटि।
जानइ ब्रह्म सो बिप्रवर, आँखि देखावहिं डाटि ॥

पर त्रिय लंपट कपट सयाने। मोह द्रोह ममता लपटाने ॥
तेइ अभेदवादी ग्यानी नर। देखा मैं चरित्र कलिजुग कर ॥
आपु गए अरु तिन्हहू घालहिं। जे कहुँ सत मारग प्रतिपालहिं ॥
कल्प कल्प भरि एक एक नरका। परहिं जे दूषहिं श्रुति करि तरका ॥
जे बरनाधम तेलि कुम्हारा। स्वपच किरात कोल कलवारा ॥
नारि मुई गृह सम्पति नासी। मूड़ मुड़ाइ होहिं संन्यासी ॥

ते बिप्रन्ह सन आपु पुजावहिं । उभय लोक निज हाथ नसावहिं ॥
बिप्र निरच्छर लोलुप कामी । निराचार सठ वृषली स्वामी ॥
सूद्र करहिं जप तप व्रत नाना । बैठि बरासन कहहिं पुराना ॥
सब नर कल्पित करहिं अचारा । जाइ न बरनि अनीति अपारा ॥

भए बरनसंकर कलि, भिन्न सेतु सब लोग ।
करहिं पाप पावहिं दुख, भय रुज सोक बियोग ॥
श्रुति संमत हरिभक्ति पथ, संजुत बिरति बिबेक ।
तेहिं न चलहि नर मोह बस, कल्पहिं पंथ अनेक ॥

बहु दाम सँवारहिं धाम जती । विषया हरि लीन्हि न रहि बिरती ॥
तपसी धनवंत दरिद्र गृही । कलि कौतुक तात न जात कही ॥
कुलवंत निकारहिं नारि सती । गृह आनहिं चेरि निबेरि गती ॥
सुत मानहिं मातु पिता तब लौं । अबलानन दीख नहीं जब लौं ॥
ससुरारि पिआरि लगी जब तें । रिपुरूप कुटुम्ब भये तब तें ॥
नृप पाप परायन धर्म नहीं । करि दंड बिडंब प्रजा नितहीं ॥
धनवंत कुलीन मलीन अपी । द्विज चिन्ह जनेउ उघार तपी ॥
नहिं मान पुरान न बेदहि जो । हरि सेवक संत सही कलि सो ॥
कविबृन्द उदार दुनी न सुनी । गुन दूषक ब्रात न कोपि गुनी ॥
कलि बारहिं बार दुकाल परै । बिनु अन्न दुखी सब लोग मरै ॥

सुनु खगेस कलि कपट हठ, दंभ द्वेस पाषंड ।
मान मोह मारादि मद, व्यापि रहे ब्रह्मण्ड ॥
तामस धर्म करहिं नर, जप तप व्रत मख दान ।
देव न बरषहिं धरनी, बए न जामहि धान ॥

अबला कच भूषन भूरि छुधा । धनहीन दुखी ममता बहुधा ॥
सुख चाहहिं मूढ़ न धर्मरता । मति थोरि कठोरि न कोमलता ॥

नर पीड़ित रोग न भोग कहीं। अभिमान बिरोध अकारन हीं॥
लघु जीवन संवतु पंच दसा। कलपांत न नास गुमानु असा॥
कलिकाल बिहाल किए मनुजा। नहिं मानत कोउ अनुजा तनुजा॥
नहिं तोष बिचारन सीतलता। सब जाति कुजाति भए मँगता॥
इरिषा परुषाच्छर लोलुपता। भरि पूरि रही समता बिगता॥
सब लोग बियोग बिसोक हए। बरनाश्रम धर्म अचार गए॥
दम दान दया नहिं जान पनी। जड़ता परबंचनताऽति घनी॥
तनु पोषक नारि नरा सगरे। परनिंदक जे जग मो बगरे॥

कलियुग के गुण

कृत जुग त्रेता द्वापर, पूजा मख अरु जोग।
जो गति होइ सो कलि, हरि नाम ते पावहिं लोग॥

कृतजुग सब जोगी बिग्यानी। करि हरिध्यानतरहिं भव प्रानी॥
त्रेता बिबिध जग्य नर करहीं। प्रभुहि समर्पि कर्म भव तरहीं॥
द्वापर करि रघुपति पदपूजा। नर भव तरहिं उपाय न दूजा॥
कलिजुग केवल हरिगुन गाहा। गावत नर पावहिं भव थाहा॥
कलिजुग जोग न जग्य न ग्याना। एक अधार राम गुन गाना॥
सब भरोस तजि जो भज रामहि। प्रेम समेत गाव गुनग्रामहि॥
सोइ भव तर कछु संसय नाहीं। नाम प्रताप प्रगट कलि माहीं॥
कलि कर एक पुनीत प्रतापा। मानस पुन्य होहिं नहिं पापा॥

कलिजुग सम जुग आन नहिं, जौ नर कर बिस्वास।
गाइ राम गुन गन बिमल, भवतर बिनहिं प्रयास॥
प्रगट चारि पद धर्म के, कलि महुँ एक प्रधान।
जेन केन बिधि दीन्हें, दान करइ कल्यान॥

नित जुग धर्म होहिं सब केरे । हृदयँ राम माया के प्रेरे ॥
सुद्ध सत्व समता बिग्याना । कृत प्रभाव प्रसन्न मन जाना ॥
सत्व बहुत रज कछु रति कर्मा । सब बिधिसुख त्रेता कर धर्मा ॥
बहु रज स्वल्प सत्व कछु तामस । द्वापर धर्म हरष भय मानस ॥
तामस बहुत रजोगुन थोरा । कलि प्रभाव बिरोध चहुँ ओरा ॥
बुध जुग धर्म जानि मनमाहीं । तजि अधर्म रति धर्म कराहीं ॥
काल धर्म नहिं ब्यापहिं ताही । रघुपति चरन प्रीति अति जाही ॥
नटकृत बिकट कपटु खगराया । नट सेवकहिं न ब्यापइ माया ॥

हरि मायाकृत दोष गुन, बिनु हरिभजन न जाहिं ।
भजिअ राम तजि काम सब, अस बिचारि मन माहिं ॥

गुरु से शत्रुता करने की हानियाँ

जे सठ गुर सन इरिषा करहीं । रौरव नरक कोटि जुग परहीं ॥
त्रिजग जोनि पुनि धरहिं सरीरा । अयुत जन्म भरि पावहिं पीरा ॥

शंकर जी की स्तुति

नमामीशमीशान निर्वाणरूपं । विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपं ॥
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं । चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहं ॥
निराकारमोंकारमूलं तुरीयं । गिराग्यान गोतीतमीशं गिरीशं ॥
करालं महाकालकालं कृपालं । गुणागारसंसारपारं नतोऽहं ॥
तुषाराद्रिसंकाशगौरं गभीरं । मनोभूतकोटिप्रभाश्री शरीरं ॥
स्फुरन्मौलिकल्लोलिनी चारुगंगा । लसद्भालबालेन्दु कंठे भुजंगा ॥
चलत्कुंडलं भ्रू सुनेत्रं विशालं । प्रसन्नाननं नीलकंठं दयालं ॥
मृगाधीशचर्माम्बरं मुण्डमालं । प्रियंशंकरं सर्वनाथं भजामि ॥
प्रचंडं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशं । अखंडं अजं भानुकोटिप्रकाशं ॥

त्रयः शूलनिर्मूलन शूलपाणिम् । भजेऽहं भवानीपतिं भावगम्यं ॥
कलातीतकल्याण कल्पान्तकारी । सदा सज्जनानन्ददाता पुरारी ॥
चिदानन्दसन्दोह मोहापहारी । प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी ॥
न यावद् उमानाथ पादारविन्दं । भजंतीह लोके परे वा नराणां ॥
न तावत्सुखं शान्तिसन्तापनाशं । प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवासं ॥
न जानामि योगं जपं नैव पूजां । नतोऽहं सदा सर्वदा शम्भु तुभ्यम् ॥
जरा जन्म दुःखौघतातप्यमानं । प्रभो पाहि आपन्नमामीश शंभो ॥

रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोषये ।
ये पठन्ति नरा भक्त्या तेषां शम्भुः प्रसीदति ॥

ब्रह्म का स्वरूप

लागे करन ब्रह्म उपदेसा । अज अद्वैत अवगुन हृदयेसा ॥
अकल अनीह अनाम अरूपा । अनुभव गम्य अखंड अनूपा ॥
मन गोतीत अमल अबिनासी । निर्बिकार निरवधि सुखरासी ॥
सो तैं ताहि तोहि नहिं भेदा । बारि बीचि इव गावहिं बेदा ॥

कुछ उपदेश

क्रोध कि द्वैत बुद्धि बिनु, द्वैत कि बिनु अग्यान ।
माया बस परिछिन्न जड़, जीव कि ईस समान ॥

कबहुँ कि दुख सब कर हित ताकें । तेहि कि दरिद्र परस मनि जाकें ॥
परद्रोही कि होहिं निःसंका । कामी पुनि कि रहहिं अकलंका ॥
बंस कि रह द्विज अनहित कीन्हें । कर्म कि होहिं स्वरूपहिं चीन्हें ॥
काहू सुमति कि खल सँग जामी । सुभगति पाव कि परत्रियगामी ॥
भव कि परहिं परमात्मा बिंदक । सुखी कि होहिं कबहुँ हरिनिंदक ॥
राजु कि रहइ नीति बिनु जानें । अघ कि रहहिं हरिचरित बखानें ॥
पावन जस कि पुन्य बिनु होई । बिनु अघ अजस कि पावइ कोई ॥

लाभु कि किछु हरिभगति समाना। जेहि गावहिं श्रुति संत पुराना ॥
हानि कि जग एहि सम किछु भाई। भजिअ न रामहि नर तनु पाई ॥
अघ कि पिसुनता सम कछु आना। धर्म कि दया सरिस हरि जाना ॥

उमा जे रामचरन रत, बिगत काम मद क्रोध।
निज प्रभुमय देखहिं जगत, केहि सन करहिं बिरोध ॥

भक्ति की महिमा

भगति पच्छ हठ करि रहउँ, दीन्हि महारिषि साप।
मुनि दुर्लभ बर पायउँ, देखहु भजन प्रताप ॥
जे असि भगति जानि परिहरहीं। केवल ज्ञान हेतु श्रम करहीं ॥
ते जड़ कामधेनु गृहँ त्यागी। खोजत आकु फिरहिं पय लागी ॥
सुनु खगेस हरिभगति बिहाई। जे सुख चाहहिं आन उपाई ॥
ते सठ महासिंधु बिनु तरनी। पैरि पार चाहहिं जड़ करनी ॥

ज्ञान और भक्ति का अन्तर

भगतिहि ज्ञानहि नहिं कछु भेदा। उभय हरहिं भव संभव खेदा ॥
नाथ मुनीस कहहिं कछु अंतर। सावधान सोउ सुनु बिहंगवर ॥
ग्यान बिराग जोग बिग्याना। ए सब पुरुष सुनहु हरि जाना ॥
पुरुष प्रताप प्रबल सब भाँती। अबला अबल सहज जड़ जाती ॥

पुरुष त्यागि सक नारिहि, जो बिरक्त मति धीर।
न तु कामी बिषयाबस, बिमुख जो पद रघुबीर ॥

माया भगति सुनहु तुम दोऊ। नारिबर्ग जानइ सब कोऊ ॥
पुनि रघुबीरहि भगति पिआरी। माया खलु नर्तकी बिचारी ॥
भगतिहि सानुकूल रघुराया। ताते तेहि डरपति अति माया ॥
राम भगति निरुपम निरुपाधी। बसइ जासु उर सदा अबाधी ॥

तेहि बिलोकि माया सकुचाई । करि न सकइ कछु निज प्रभुताई ॥
अस बिचारि जे मुनि बिज्ञानी । जाचहिं भगति सकल सुख खानी ॥

यह रहस्य रघुनाथ कर, बेगि न जानइ कोइ ।
जो जानइ रघुपति कृपाँ, सपनेहुँ मोह न होइ ॥
औरउ ग्यान भगति कर, भेद सुनहु सुप्रबीन ।
जो सुनि होइ रामपद, प्रीति सदा अबिछीन ॥

सुनहु तात यह अकथ कहानी । समुझत बनइ न जाइ बखानी ॥
ईश्वर अंस जीव अबिनासी । चेतन अमल सहज सुख रासी ॥
सो माया बस भयउ गोसाईं । बँध्यो कीर मरकट की नाईं ॥
जड़ चेतनहि ग्रंथि परि गई । जदपि मृषा छूटत कठिनई ॥
तब ते जीव भयउ संसारी । छूट न ग्रंथि न होइ सुखारी ॥
श्रुति पुरान बहु कहेउ उपाई । छूट न अधिक अधिक अरुझाई ॥
जीव हृदयं तम मोह बिसेषी । ग्रंथि छूट किमि परइ न देखी ॥
अस संजोग ईस जब करई । तबहुँ कदाचित सो निरुअरई ॥
सात्विक श्रद्धा धेनु सुहाई । जौं हरि कृपाँ हृदयँ बस आई ॥
जप तप ब्रत जम नियम अपारा । जे श्रुति कह सुभ धर्म अचारा ॥
तेहि तृन हरित चरै जब गाई । भाव बच्छ सिसु पाइ पेन्हाई ॥
नोइ निवृत्ति पात्र बिस्वासा । निर्मल मन अहीर निज दासा ॥
परम धर्ममय पय दुहि भाई । अवटै अनल अकाम बनाई ॥
तोष मरुत तब छमाँ जुड़ावै । धृति सम जावनु देइ जमावै ॥
मुदिताँ मथै बिचार मथानी । दम अधार रजु सत्य सुबानी ॥
तब मथि काढ़ि लेइ नवनीता । बिमल बिराग सुभग सुपुनीता ॥

जोग अगिनि करि प्रगट तब, कर्म सुभासुभ लाइ ।
बुद्धि सिरावै ग्यान घृत, ममता मल जरि जाइ ॥

तब बिग्यान रूपिनी, बुद्धि बिसद घृत पाइ।
चित्त दिआ भरि धरै दृढ़, समता दिअट बनाइ॥
तीनि अवस्था तीनि गुन, तेहि कपास तें काढ़ि।
तूल तुरीय सँवारि पुनि, बाती करै सुगाढ़ि॥
एहि बिधि लेसै दीप, तेज रासि बिज्ञान मय।
जातहिं जासु समीप, जरहिं मदादिक सलभ सब॥

सोहमस्मि इति बृत्ति अखंडा। दीपसिखा सोइ परम प्रचंडा॥
आतम अनुभव सुख सुप्रकासा। तब भवमूल भेद भ्रमनासा॥
प्रबल अबिद्या कर परिवारा। मोह आदि तम मिटइ अपारा॥
तब सोइ बुद्धि पाइ उँजिआरा। उर गृहँ बैठि ग्रंथि निरुआरा॥
छोरन ग्रंथि पाव जौं सोई। तब यह जीव कृतारथ होई॥
छोरत ग्रंथि जानि खगराया। बिघ्न अनेक करइ तब माया॥
रिद्धि सिद्धि प्रेरइ बहु भाई। बुद्धिहि लोभ दिखावहिं आई॥
कल बल छल करि जाहिं समीपा। अंचल बात बुझावहिं दीपा॥
होइ बुद्धि जौं परम सयानी। तिन्ह तन चितव न अनहित जानी॥
जौं तेहि बिघ्न बुद्धि नहिं बाधी। तौ बहोरि सुर करहिं उपाधी॥
इंद्री द्वार झरोखा नाना। तहँ तहँ सुर बैठे करि थाना॥
आवत देखहिं बिषय बयारी। ते हठि देहि कपाट उघारी॥
जब सो प्रभंजन उर गृहँ जाई। तबहिं दीप बिग्यान बुझाई॥
ग्रंथि न छूटि मिटा सो प्रकासा। बुद्धि बिकल भइ बिषय बतासा॥
इंद्रिन्ह सुरन्ह न ग्यान सोहाई। बिषय भोग पर प्रीति सदाई॥
बिषय समीर बुद्धि कृत भोरी। तेहि बिधि दीप को बार बहोरी॥

तब फिरि जीव बिबिध बिधि, पावइ संसृति क्लेस।
हरि माया अति दुस्तर, तरि न जाइ बिहगेस॥

कहत कठिन समुझत कठिन, साधत कठिन बिबेक।
होइ घुनाच्छरन्याय जौं, पुनि प्रत्यूह अनेक ॥

ग्यान पथ कृपान कै धारा। परत खगेस होइ नहिं बारा ॥
जो निर्बिघ्न पंथ निर्बहई। सो कैवल्य परमपद लहई ॥
अति दुर्लभ कैवल्य परमपद। संत पुरान निगम आगम बद ॥
राम भजत सोइ मुकुति गोसाईं। अन इच्छित आवइ बरिआईं ॥
जिमि थल बिनु जल रहि न सकाई। कोटि भाँति कोउ करै उपाई ॥
तथा मोच्छ सुख सुनु खगराई। रहि न सकइ हरिभगति बिहाई ॥
अस बिचारि हरि भगत सयाने। मुक्ति निरादर भगति लुभाने ॥
भगति करत बिनु ज़तन प्रयासा। संसृति मूल अबिद्या नासा ॥
भोजन करिअ तृपिति हित लागी। जिमि सो असन पचवै जठरागी ॥
असि हरिभगति सुगम सुखदाई। को अस मूढ़ न जाहि सोहाई ॥

सेवक सेव्य भाव बिनु, भव न तरिअ उरगारि।
भजहु रामपद पंकज, अस सिद्धान्त बिचारि ॥
जो चेतन कहँ जड़ करइ, जड़हि करइ चैतन्य।
अस समर्थ रघुनायकहिं, भजहिं जीव ते धन्य ॥

भक्ति की महिमा

राम भगति चिन्तामनि सुंदर। बसइ गरुड़ जाके उर अंतर ॥
परम प्रकाश रूप दिन राती। नहिं कछु चहिअ दिआ घृत बाती ॥
मोह दरिद्र निकट नहिं आवा। लोभ बात नहिं ताहि बुझावा ॥
प्रबल अबिद्यातम मिटि जाई। हारहिं सकल सलभ समुदाई ॥
खल कामादि निकट नहिं जाहीं। बसइ भगति जाके उर माहीं ॥
गरल सुधासम अरि हित होई। तेहि मनि बिनु सुख पाव न कोई ॥
ब्यापहिं मानस रोग न भारी। जिन्ह के बस सब जीव दुखारी ॥

राम भगति मनि बसि उर जाकें। दुख लवलेस न सपनेहुँ ताकें॥
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं। जे मनि लागि सुजतन कराहीं॥
सो मनि जदपि प्रगट जग अहई। रामकृपा बिनु नहिं कोउ लहई॥
सुगम उपाय पाइबे केरे। नर हतभाग्य देहिं भट भेरे॥
पावन पर्बत बेद पुराना। रामकथा रुचिरा कर नाना॥
मर्मी सज्जन सुमति कुदारी। ग्यान बिराग नयन उरगारी॥
भाव सहित खोजइ जो प्रानी। पाव भगति मनि सब सुख खानी॥
मोरे मन प्रभु अस बिस्वासा। राम ते अधिक राम कर दासा॥
राम सिंधु घन सज्जन धीरा। चंदन तरु हरि संत समीरा॥
सब कर फल हरि भगति सुहाई। सो बिनु संत न काहूँ पाई॥
अस बिचार जोइ कर सतसंगा। रामभगति तेहि सुलभ बिहंगा॥

ब्रह्म पयोनिधि मंदर, ग्यान संत सुर आहिं।
कथा सुधा मथि काढ़हिं, भगति मधुरता जाहिं॥
बिरति चर्म असि ग्यान मद, लोभ मोह रिपु मारि।
जय पाइअ सो हरिभगति, देखु खगेस बिचारि॥

परमार्थ के कुछ प्रश्न और उनके उत्तर

प्रथमहिं कहहु नाथ मति धीरा। सब ते दुर्लभ कवन सरीरा॥
बड़ दुख कवन कवन सुख भारी। सोउ संछेपहिं कहहु बिचारी॥
संत असंत मरम तुम्ह जानहु। तिन्ह कर सहज सुभाव बखानहु॥
कवन पुन्य श्रुति बिदित बिसाला। कहहु कवन अघ परम कराला॥
मानस रोग कहहु समुझाई। तुम्ह सर्बग्य कृपा अधिकाई॥

नर तन सम नहिं कवनिउ देही। जीव चराचर जाचत तेही॥
नरक स्वर्ग अपबर्ग निसेनी। ग्यान बिराग भगति सुभ देनी॥

सो तनु धरि हरि भजहिं न जे नर। होहिं बिषयरत मंद मंदतर ॥
काँच किरिच बदलें ते लेहीं। कर ते डारि परस मनि देहीं ॥
नहिं दरिद्र सम दुख जग माहीं। संत मिलन सम सुख जग नाहीं ॥
पर उपकार बचन मन काया। संत सहज सुभाउ खगराया ॥
संत सहहिं दुख परहित लागी। परदुख हेतु असंत अभागी ॥
भूर्ज तरू सम संत कृपाला। परहित निति सह बिपति बिसाला ॥
सन इव खल पर बंधन करई। खाल कढ़ाइ बिपति सहि मरई ॥
खल बिनु स्वारथ पर अपकारी। अहि मूषक इव सुनु उरगारी ॥
पर संपदा बिनासि नसाहीं। जिमि ससि हति हिम उपल बिलाहीं ॥
दुष्ट उदय जग आरति हेतू। जथा प्रसिद्ध अधम ग्रह केतू ॥
संत उदय संतत सुखकारी। बिस्व सुखद जिमि इंदु तमारी ॥
परम धर्म श्रुति बिदित अहिंसा। परनिंदा सम अघ न गरीसा ॥
हर गुर निंदक दादुर होई। जन्म सहस्र पाव तन सोई ॥
द्विज निंदक बहु नरक भोग करि। जग जनमइ बायस सरीर धरि ॥
सुर श्रुति निंदक जे अभिमानी। रौरव नरक परहिं ते प्रानी ॥
होहिं उलूक संत निंदारत। मोहनिसा प्रिय ग्यान भानु गत ॥
सब कै निन्दा जे जड़ करहीं। ते चमगादुर होइ अवतरहीं ॥
सुनहु तात अब मानसरोगा। जिन्ह ते दुख पावहिं सब लोगा ॥
मोह सकल ब्याधिन्ह कर मूला। तिन्ह ते पुनि उपजहिं बहु सूला ॥
काम बात कफ लोभ अपारा। क्रोध पित्त नित छाती जारा ॥
प्रीति करहिं जो तीनिउ भाई। उपजइ सन्यपात दुखदाई ॥
बिषय मनोरथ दुर्गम नाना। ते सब सूल नाम को जाना ॥
ममता दादु कंडु इरषाई। हरष बिषाद गरह बहुताई ॥
परसुख देखि जरनि सोइ छई। कुष्ट दुष्टता मन कुटिलई ॥
अहंकार अति दुखद डमरुआ। दम्भ कपट मद मान नेहरुआ ॥

तृस्ना उदर बृद्धि अति भारी। त्रिबिध ईषना तरुन तिजारी ॥
जुग बिधि ज्वर मत्सर अबिबेका। कहँलगि कहौं कुरोग अनेका ॥

एक ब्याधि बस नर मरहिं, ए असाधि बहुब्याधि।
पीड़हिं संतत जीव कहुँ, सो किमि लहै समाधि ॥

रामकृपा नासहिं सब रोगा। जौं एहि भाँति बनै संजोगा ॥
सद्गुर बैद बचन बिस्वासा। संजम यह न बिषय कै आसा ॥
रघुपति भगति सजीवन मूरी। अनूपान श्रद्धा मति पूरी ॥
एहिबिधिभलेहिं सो रोग नसाहीं। नाहिंत जतन कोटि नहिं जाहीं॥
जानिअ तब मन बिरुज गोसाँई। जब उर बल बिराग अधिकाई॥
सुमति छुधा बाढ़इ नित नई। बिषय आस दुर्बलता गई ॥
बिमल ग्यान जल जब सो नहाई। तब रह रामभगति उर छाई ॥

रामभक्ति के बिना कोई तरता नहीं

सब कर मत खगनायक एहा। करिअ रामपद पंकज नेहा ॥
श्रुति पुरान सब ग्रन्थ कहाहीं। रघुपतिभगति बिना सुख नाहीं ॥
कमठ पीठ जामहिं बरु बारा। बन्ध्यासुत बरु काहुहि मारा ॥
फूलहिं नभ बरु बहु बिधि फूला। जीव न लह सुख हरि प्रतिकूला॥
तृषा जाइ बरु मृगजलपाना। बरु जामहिं सस सीस बिषाना ॥
अन्धकारु बरु रबिहि नसावै। रामबिमुख न जीव सुख पावै ॥
हिम ते अनल प्रगट बरु होई। बिमुख रामसुख पाव न कोई ॥

बारि मथें घृत होइ बरु, सिकता ते बरु तेल।
बिनु हरिभजन न भव तरिअ यह सिद्धान्त अपेल ॥
मसकहि करइ बिरंचि प्रभु, अजहि मसक ते हीन।
अस बिचारि तजि संसय, रामहि भजहिं प्रबीन ॥

इस कलिकाल में केवल रामनाम ही मुक्ति का देनेवाला है

एहि कलिकाल न साधन दूजा। जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा॥
रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि। संतत सुनिअ रामगुनग्रामहि॥
जासु पतितपावन बड़ बाना। गावहिं कवि श्रुति संत पुराना॥
ताहि भजहि मन तजि कुटिलाई। राम भजें गति केहि नहिं पाई॥

मो सम दीन न दीनहित, तुम्ह समान रघुबीर।
अस बिचारि रघुबंसमनि, हरहु बिषम भवभीर॥
कामिहि नारि पिआरि जिमि, लोभिहि प्रिय जिमि दाम।
तिमि रघुनाथ निरंतर, प्रिय लागहु मोहि राम॥

सूक्तियाँ

कुलिसहु चाहि कठोर अति, कोमल कुसुमहि चाहि।
चित्त खगेस राम कर, समुझि परइ कहु काहि॥

बड़े भाग पाइय सतसंगा। बिनहिं प्रयास होहिं भवभंगा॥

संत संग अपवर्ग कर, कामी भव कर पंथ।
कहहिं संत कबि कोबिद, श्रुति पुरान, सद्ग्रंथ॥

परहित सरिस धर्म नहिं भाई। परपीड़ा सम नहिं अधमाई॥

एहि तन कर फल बिषय न भाई। स्वर्गउ स्वल्प अंत दुखदाई॥

उपजइ रामचरन बिस्वासा। भवनिधि तर नर बिनहिं प्रयासा॥

तबहिं होइ सब संसय भंगा। जब बहुकाल करिअ सतसंगा॥

काम क्रोध मद लोभरत, गृहासक्त दुख रूप।
ते किमि जानहि रघुपतिहिं, मूढ़ परे तमकूप॥

संत बिसुद्ध मिलहिं परि तेहीं। चितवहिं राम कृपा करि जेहीं॥

यहाँ मोह कर कारन नाहीं। रवि सन्मुख तम कबहुँ कि जाहीं॥

परबस जीव स्वबस भगवंता। जीव अनेक एक श्रीकन्ता॥

मुधा भेद जद्यपि कृत माया। बिनु हरि जाइ न कोटि उपाया॥

हरि सेवकहिं न ब्याप अबिद्या। प्रभुप्रेरित ब्यापइ तेहि बिद्या॥

तातें नास न होइ दास कर। भेद भगति बाढ़ै बिहंगवर॥

भगतिहीन गुन सुख सब ऐसे। लवन बिना बहु बिंजन जैसे॥

जदपि प्रथम दुख पावइ, रोवइ बाल अधीर।
ब्याधि नासि हित जननी, गनति न सो सिसु पीर॥
तिमि रघुपति निज दासकर, हरहिं मानहित लागि।
तुलसिदास ऐसे प्रभुहि, कस न भजहु भ्रम त्यागि॥

भावबस्य भगवान, सुखनिधान करुना भवन।
तजि ममता मद मान, भजिअ सदा सीता रवन॥

गुर बिनु भवनिधि तरइ न कोई। जौं बिरंचि संकर सम होई॥

जेहि तें कछु निज स्वारथ होई। तेहि पर ममता कर सब कोई ॥

पन्नगारि असि नीति, श्रुतिसंमत सज्जन कहहिं।
अति नीचहु सन प्रीति, करिअ जानि निज परमहित ॥

पाट कीट तें होइ, तेहि तें पाटंबर रुचिर।
कृमि पालइ सबु कोइ, परम अपावन प्रान सम ॥

निज अनुभव अब कहउँ खगेसा। बिनु हरिभजन न जाहिं कलेसा ॥

सोइ पावन सोइ सुभग सरीरा। जो तनु पाइ भजिअ रघुबीरा ॥

कबि कोबिद गावहिं असि नीति। खल सन कलह न भल नहिं प्रीती ॥
उदासीन नित रहिअ गोसाईं। खल परिहरिअ स्वान की नाईं ॥

जनमत मरत दुसह दुख होई। एहि स्वल्पउ नहिं ब्यापिहि सोई ॥

छमा सील जे पर उपकारी। ते द्विज मोहि प्रिय जथा खरारी ॥

सुनु प्रभु बहुत अवज्ञा किए। उपज क्रोध ज्ञानहुँ के हिए ॥

अति संघरषन जौं कर कोई। अनल प्रगट चंदन ते होई ॥

जो इच्छा करिहहु मन माहीं। हरिप्रसाद कछु दुर्लभ नाहीं ॥

सत संगति दुर्लभ संसारा। निमिष दंड भरि एकउ बारा ॥

संत बिटप सरिता गिरि धरनी। परहित हेतु सबन्ह कै करनी ॥

सन्त हृदय नवनीत समाना। कहा कबिन्ह परि कहै न जाना ॥
निज परिताप द्रवइ नवनीता। परदुख द्रवहिं संत सुपुनीता ॥

———

सुनु खगपति अस समुझि प्रसंगा। बुध नहिं करहिं अधम कर संगा ॥

———

श्रुति सिद्धान्त इहइ उरगारी। राम भजिअ सब काज बिसारी ॥

———

सिव सेवा कर फल सुत सोई। अविरल भक्ति रामपद होई ॥

———

गिरिजा संत समागम, सम न लाभ कछु आन।
बिनु हरि कृपा न होइ सो, गावहिं बेद पुरान ॥

———

धन्य देस सो जहँ सुरसरी। धन्य नारि पतिब्रत अनुसरी ॥
धन्य सो भूप नीति जो करई। धन्य सो द्विज निज धर्म न टरई ॥
सो कुल धन्य उमा सुनु, जगत पूज्य सुपुनीत।
श्री रघुबीर परायन, जेहिं नर उपज बिनीत ॥

———

फुटकर

अहह धन्य लछिमन बड़भागी। राम पदारबिन्द अनुरागी ॥

———

सुनत बचन बिसरे सब दूखा। तृषावंत जिमि पाइ पियूषा ॥

———

गहे भरत पुनि प्रभु पद पंकज। नमत जिनहिं सुरमुनि संकर अज ॥

———

कौसल्या पुनि पुनि रघुबीरहिं। चितवति कृपासिन्धु रन धीरहिं ॥
हृदय बिचारति बारहिं बारा। कवन भाँति लंकापति मारा ॥

———

मम हित लागि जन्म इन्ह हारे। भरतहुँ ते मोहि अधिक पियारे॥

करहिं आरती आरतहर कें। रघुकुलकमलविपिन दिनकर कें॥

भरत भाग्य प्रभु कोमलताई। सेष कोटि सत सकहिं न गाई॥

भव बन्धन ते छूटहीं, नर जपि जांकर नाम।
खर्व निसाचर बाँधेउ, नागपास सोइ राम॥

सिव बिरंचि कहँ मोहइ, को है बपुरा आन।
अस जिय जानि भजहिं मुनि, मायापति भगवान॥

जो अति आतप ब्याकुल होई। तरुछाया सुख जानै सोई॥

जो माया सब जगहि नचावा। जासु चरित लखि काहु न पावा॥
सोइ प्रभु भ्रू बिलास खगराजा। नाच नटी इव सहित समाजा॥

राकापति षोड़स उअहि, तारागन समुदाइ।
सकल गिरिन्ह दव लाइय, बिनु रवि राति न जाइ॥

ऐसेहिं बिनु हरि भजन खगेसा। मिटइ न जीवन केर कलेसा॥

जप तप मख सम दम ब्रत दाना। बिरति बिवेक जोग बिग्याना॥
सब कर फल रघुपति पद प्रेमा। तेहि बिनु कोउ न पावइ छेमा॥

स्वारथ सव जीव कहँ एहा। मन क्रम बचन रामपद नेहा॥

जेहि ते नीच बड़ाई पावा । सो प्रथमहिं हति ताहि नसावा ॥

इन्द्र कुलिस मम सूल बिसाला । कालदंड हरि चक्र कराला ॥
जो इन्हकर मारा नहिं मरई । बिप्रद्रोह पावक सो जरई ॥

भगतिहिं ग्यानहिं नहिं कछु भेदा । उभय हरहिं भव संभव खेदा ॥

विनिश्चितं वदामि ते न अन्यथा वचांसि मे ।
हरिं नरा भजन्ति येऽति दुस्तरं तरन्ति ते ॥

अस सुभाव कहुँ सुनउँ न देखउँ । केहि खगेस रघुपति सम लेखउँ ॥

सुनहु राम कर सहज स्वभाऊ । जन अभिमान न राखहिं काऊ ॥
संसृत मूल सूलप्रद नाना । सकल सोकदायक अभिमाना ॥
ताते करहिं कृपानिधि दूरी । सेवक पर ममता अति भूरी ॥
जिमि सिसु तन ब्रण होइ गुसाईं । मातु चिराव कठिन की नाईं ॥
सो सुख जानइ मन अरु काना । नहिं रसना पहिं जाइ बखाना ॥
प्रभु सोभा सुख जानहिं नयना । कहि किमि सकहिं तिन्हहि नहि बयना ॥
साधक सिद्ध बिमुक्त उदासी । कबि कोबिद कृतग्य सन्यासी ॥
जोगी सूर सुतापस ग्यानी । धर्म निरत पंडित बिग्यानी ॥
तरहिं न बिनु सेएँ मम स्वामी । राम नमामि नमामि नमामी ॥

मोरे तुम प्रभु गुरु पितु माता । जाउँ कहाँ तजि पद जलजाता ॥

संत बिटप सरिता गिरि धरनी । परहित हेतु सबन्ह कै करनी ॥

जहँ लगि साधन बेद बखानी। सबकर फल हरि भगति भवानी॥
सो रघुनाथ भगति श्रुति गाई। रामकृपा काहू एक पाई॥

मुनिदुर्लभ हरि भगति नर, पावहिं बिनहिं प्रयास।
जे यह कथा निरन्तर, सुनहिं मानि बिस्वास॥

सोइ सर्व्वज्ञ गुनी सोइ ग्याता। सोइ महि मंडित पंडित दाता॥
धर्म परायन सोइ कुल त्राता। रामचरन जाकर मन राता॥
नीति निपुन सोइ परम सयाना। श्रुति सिद्धान्त नीक तेहि जाना॥
सोइ कबि कोबिद सोइ रनधीरा। जो छल छाँड़ि भजइ रघुबीरा॥
सो धन धन्य प्रथम गति जाकी। धन्य पुन्य रत मति सोइ पाकी॥
धन्य घरी सोइ जब सतसंगा। धन्य जन्म द्विज भगति अभंगा॥

यह न कहिय सठ ही सठसीलहिं। जो मन लाइ न सुन हरि लीलहिं॥
कहिय न लोभिहिं क्रोधिहिं कामिहिं। जो न भजइ सचराचर स्वामिहिं॥
द्विज द्रोहिहिं न सुनाइअ कबहूँ। सुरपति सरिस होइ नृप जबहूँ॥

राम कथा के तेइ अधिकारी। जिन्हकें सतसंगति अति प्यारी॥
गुरुपद प्रीति नीति रत जेई। द्विज सेवक अधिकारी तेई॥
ता कहँ यह बिसेषि सुखदाई। जाहि प्रान प्रिय श्री रघुराई॥
रामचरन रति जो चह, अथवा पद निर्बान।
भाव सहित जो यह कथा, करउ श्रवन पुट पान॥

पाई न गति केहि पतितपावन राम भजि सुनु सठ मना।
गनिका अजामिल ब्याध गीध गजादि खल तारे घना॥

आभीर जमन किरात खस श्वपचादि अति अघ रूप जे ।
कहि नाम बारक तेऽपि पावन होहिं राम नमामि ते ॥१॥

रघुबंस भूषन चरित यह नर कहहिं सुनहिं जे गावहीं ।
कलिमल मनोमल धोइ बिनु श्रम रामधाम सिधावहीं ॥
सत पंच चौपाईं मनोहर जानि जो नर उर धरैं ।
दारुन अबिद्या पंच जनित बिकार श्री रघुबर हरैं ॥२॥

सुन्दर सुजान कृपानिधान अनाथ पर कर प्रीति जो ।
सो एक राम अकाम हित निर्बानप्रद सम आन को ॥
जाकी कृपा लवलेस ते मतिमन्द तुलसीदास हूँ ।
पायो परमबिश्राम राम समान प्रभु नाहीं कहूँ ॥३॥

वेदों-द्वारा स्तुति

जै सगुण निर्गुणरूप रूपअनूप भूप सिरोमने ।
दसकंधरादि प्रचंड निसिचर प्रबल खल भुजबल हने ॥
अवतार नर संसारभार बिभंजि दारुनदुख दहे ।
जै प्रनतपाल दयालु प्रभु संजुक्तसक्ति नमामहे ॥१॥

तव बिषम मायाबस सुरासुर नाग नर अग जग हरे ।
भवपंथ भ्रमत अमित दिवस निसि कालकर्म गुननि भरे ॥
जे नाथ करि करुना बिलोके त्रिबिधि दुख ते निर्बहे ।
भव खेद छेदन दच्छ हम कहुँ रच्छ राम नमामहे ॥२॥

जे ज्ञान मान बिमत्त तव भवहरनि भगति न आदरी ।
ते पाइ सुर दुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरी ॥
बिस्वास करि सब आस परिहरि दास तव जे होइ रहे ।
जपि नाम तव बिनु श्रम तरहिं भवनाथ सो समरामहे ॥३॥

जे चरन सिव अज पूज्य रज सुभ परसि मुनिपतिनी तरी।
नखनिर्गता मुनि बन्दिता त्रैलोक पावन सुरसरी॥
ध्वज कुलिस अंकुस कंज जुत बन फिरत कंटककिन लहे।
पद कंज द्वंद मुकुंद राम रमेस नित्य भजामहे॥४॥
अव्यक्त मूल मनादि तरु त्वच चारि निगमागम भने।
षटकंध साखा पंचबीस अनेक पर्न सुमन घने।
फल जुगल बिधि कटु मधुर बेलि अकेलि जेहि आश्रित रहे।
पल्लवत फूलत नवल नित संसार बिटप नमामहे॥५॥
जे ब्रह्म अजमद्वैतमनुभवगम्य मन पर ध्यावहीं।
ते कहहुँ जानहुँ नाथ हम तव सगुन जस नित गावहीं॥
करुनायतन प्रभु सदगुनाकर देव यह बर मागहीं।
मन बचन कर्म बिकार तजि तव चरन हम अनुरागहीं॥६॥

विनय-पत्रिका

गाइये गनपति जग बन्दन । संकर-सुवन-भवानी-नन्दन ॥१॥
सिद्धि-सदन, गजबदन, विनायक । कृपा-सिंधु, सुन्दर सब लायक॥२॥
मोदक-प्रिय मुद-मंगलदाता । विद्या-वारिधि, बुद्धि-विधाता ॥३॥
माँगत तुलसिदास कर जोरे । बसहिं रामसियमानस मोरे ॥४॥

बावरो रावरो नाह भवानी ।
दानि बड़ो दिन, देत दये बिनु, बेद-बड़ाई भानी ॥१॥
निज घर की बरबात बिलोकहु, हौ तुम परम सयानी ।
सिव की दई सम्पदा देखत, श्री-सारदा सिहानी ॥२॥
जिनके भाल लिखी लिपि मेरी, सुख की नहीं निसानी ।
तिन रंकन को नाक सँवारत, हौं आयो नकबानी ॥३॥
दुखी दीनता दुखियन के दुख, जाचकता अकुलानी ।
यह अधिकार सौंपिये औरहिं, भीख भली मैं जानी ॥४॥
प्रेम-प्रसंसा-बिनय-ब्यंगजुत, सुनि बिधि की बरबानी ।
तुलसी मुदित महेस मनहि मन, जगत-मातु मुसुकानी ॥५॥

कबहुँक अम्ब, अवसर पाइ ।
मेरिऔ सुधि द्याइबी, कछु करुन-कथा चलाइ ॥१॥
दीन सब अँगहीन छीन मलीन अघी अघाइ ।
नाम लै भरै उदर एक प्रभु-दासी-दास कहाइ ॥२॥

बूझिहैं 'सो है कौन' कहिबी नाम दसा जनाइ।
सुनत रामकृपालु के मेरी बिगरिऔ बनि जाइ॥३॥

श्रीरामचन्द्र कृपालु भजुमन हरन भवभय दारुनं।
नवकंज-लोचन, कंजमुख, करकंज, पद कंजारुनं॥१॥
कंदर्प अगनित-अमित-छबि, नवनील नीरद सुन्दरं।
पटपीत मानहुँ तड़ित रुचिसुचि नौमि जनक-सुतावरं॥२॥
भजु दीनबन्धु दिनेस दानव - दैत्य-बंस - निकंदनं।
रघुनंद आनँदकंद कोसलचन्द दसरथ-नन्दनं॥३॥
सिर मुकुट, कुण्डल तिलक चारु, उदारु अंग विभूषनं।
आजानुभुज, सर - चाप-धर संग्राम-जित-खरदूषनं॥४॥
इति वदति तुलसीदास संकर-सेष-मुनि-मन-रंजनं।
मम हृदय-कंज निवास करु, कामादि-खल-दल-गंजनं॥५॥

सुन मन मूढ़! सिखावन मेरो।
हरिपद-बिमुख लह्यो न काहु सुख, सठ यह समुझ सबेरो॥१॥
बिछुरे ससि रबि मन नैननि तें, पावत दुख बहुतेरो।
भ्रमत स्रमित निसि-दिवस गगनमहँ, तहँ रिपु राहु बड़ेरो॥२॥
जद्यपि अति पुनीत सुरसरिता, तिहुँ पुर सुजस घनेरो।
तजे चरन अजहूँ न मिटत नित, बहिबो ताहू केरो॥३॥
छुटै न बिपति भजे बिनु रघुपति, स्रुत सन्देह निबेरो।
तुलसिदास सब आस छाँड़ करि, होहु राम कर चेरो॥४॥

राम राम रटु, राम राम रटु राम राम जपु जीहा।
रामनाम-नवनेह-मेह को, मन! हठि होहि पपीहा॥१॥

सब साधन-फल कूप-सरित-सर-सागर सलिल निरासा ।
रामनाम-रति स्वाति सुधा सुभ-सीकर प्रेम पियासा ॥२॥
गरजि तरजि पाषान बरषि पवि, प्रीति परखि जिय जानै ।
अधिक अधिक अनुराग उमँग उर, पर परमिति पहिचानै ॥३॥
रामनाम गति, रामनाम मति, रामनाम अनुरागी ।
ह्वै गये हैं, जे होहिंगे, त्रिभुवन तेइ गनियत बड़भागी ॥४॥
एक अंग मग अगम गवन कर, बिलमु न छिन छिन छाहैं ।
तुलसी हित अपनो अपनी दिसि, निरुपधि नेम निबाहैं ॥५॥

——

तू दयाल, दीन हौं, तू दानि, हौं भिखारी ।
हौं प्रसिद्ध पातकी, तू पाप-पुज-हारी ॥१॥
नाथ तू अनाथ को, अनाथ कौन मोसो ?
मो समान आरत नहिं, आरति हर तोसो ॥२॥
ब्रह्म तू, हौं जीव, तू ठाकुर, हौं चेरो ।
तात, मात, गुरु, सखा तू सब बिधि हितु मेरो ॥३॥
तोहि मोहिं नाते अनेक मानिये जो भावै ।
ज्यों त्यों तुलसी कृपालु ! चरन सरन पावै ॥४॥

——

कबहूँ मन बिश्राम न मान्यो ।
निसदिन भ्रमत बिसारि सहज सुख, जहँ तहँ इन्द्रिन तान्यो ॥१॥
जदपि बिषय सँग सह्यो दुसह दुख, बिषम जाल अरुझान्यो ।
तदपि न तजत मूढ़, ममताबस, जानत हूँ नहिं जान्यो ॥२॥
जन्म अनेक किये नाना बिधि कर्म-कीच चित सान्यो ।
होइ न बिमल बिबेक-नीर-बिनु, बेद पुरान बखान्यो ॥३॥

निज हित नाथ पिता गुरु हरि सों, हरषि हृदय नहिं आन्यो।
तुलसिदास कब तृषा जाय, सर खनतहिं जनम सिरान्यो ॥४॥

मेरो मन हरिजू! हठ न तजै।
निसदिन नाथ! देउँ सिख बहुबिधि, करत सुभाउ निजै ॥१॥
ज्यों जुवती अनुभवति प्रसव अति दारुन दुख उपजै।
ह्वै अनुकूल बिसारि सूल सठ पुनि खलपतिहिं भजै ॥२॥
लोलुप भ्रमत गृह पसु ज्यों जहँ तहँ सिर पदत्रान बजै।
तदपि अधम बिचरत तेहि मारग कबहुँ न मूढ़ लजै ॥३॥
हौं हार्‌यो करि जतन बिबिध बिधि अतिसै प्रबल अजै।
तुलसिदास बस होइ तबहिं जब प्रेरक प्रभु बरजै ॥४॥

ऐसी मूढ़ता या मन की।
परिहरि राम-भक्ति-सुरसरिता आस करत ओसकन की ॥१॥
धूम-समूह निरखि चातक ज्यों, तृषित जानि मति घन की।
नहिं तहँ सीतलता न बारि, पुनि हानि होत लोचन की ॥२॥
ज्यों गच-काँच बिलोकि सेन जड़, छाँह आपने तन की।
टूटत अति आतुर अहार बस, छति बिसारि आनन की ॥३॥
कहँ लौं कहौं कुचाल कृपानिधि, जानत हौ गति जन की।
तुलसिदास प्रभु हरहु दुसह दुख, करहु लाज निज पन की ॥४॥

नाचत ही निसि दिवस मर्‌यो।
तब ही तें न भयो हरि! थिर जब तें जिव नाम धर्‌यो ॥१॥
बहु बासना बिबिध कंचुकि भूषण लोभादि भर्‌यो।
चर अरु अचर गगन जल थल में, कौन न स्वाँग कर्‌यो ॥२॥

देव दनुज मुनि नाग मनुज नहि, जाँचत कोउ उबर्‌यो ।
मेरो दुसह दरिद्र दोष दुख, काहू तो न हर्‌यो ॥३॥
थके नयन पद पानि सुमति बल, संग सकल बिछुर्‌यो ।
अब रघुनाथ ! सरन आयो जन, भव-भय बिकल डर्‌यो ॥४॥
जेहि गुन तें बस होहु रीझिकरि, सो मोहि सब बिसर्‌यो ।
तुलसिदास निज भवन-द्वार प्रभु, दीजै रहन पर्‌यो ॥५॥

माधव जू ! मो सम मन्द न कोऊ ।
जद्यपि मीन पतंग हीनमति, मोहि नहि पूजैं ओऊ ॥१॥
रुचिर रूप-आहार-बस्य उन्ह, पावक लोह न जान्यो ।
देखत बिपति बिषय न तजत हौं, तातें अधिक अजान्यो ॥२॥
महा मोह-सरिता अपार महँ, संतत फिरत बह्यो ।
श्री हरि-चरन-कमल नौका तजि, फिर फिर फेन गह्यो ॥३॥
अस्थि पुरातन छुधित स्वान अति, ज्यौं भरि मुख पकरै ।
निज तालूगत रुधिर पान करि, मन संतोष धरै ॥४॥
जलचर-बृन्द-जल-अन्तरगत होत सिमिट इक पासा ।
एकहि एक खात लालच-बस, नहिं देखत निज नासा ॥५॥
मेरे अघ सारद अनेक जुग, गनत पार नहिं पावै ।
तुलसीदास पतित-पावन प्रभु, यह भरोस जिय आवै ॥६॥

हरि, तुम बहुत अनुग्रह कीन्हों ।
साधन-धाम बिबुध-दुरलभ तन, मोहिं कृपा करि दीन्हों ॥१॥
कोटिहुँ मुख कहि जात न प्रभु के, एक एक उपकार ।
तदपि नाथ कछु और माँगिहौं, दीजै परम उदार ॥२॥

बिषय-बारि मन-मीन भिन्न नहिं, होत कबहुँ पल एक ।
ताते सहौं बिपति अति दारुन, जनमत जोनि अनेक ॥३॥
कृपा डोरि, बनसी पद-अंकुस, परमप्रेम मृदु चारो ।
एहि बिधि बेधि हरहु मेरो दुख, कौतुक राम तिहारो ॥४॥
हैं स्रुति बिदित उपाय सकल सुर, केहि केहि दीन निहोरै ।
तुलसिदास यहि जीव मोह-रजु, जोइ बाँध्यो सोइ छोरै ॥५॥

जानकी जीवन की बलि जैहौं ।
चित कहै, राम सीय-पद परिहरि अब न कहूँ चलि जैहौं ॥१॥
उपजी उर प्रतीति सपनेहुँ सुख, प्रभु-पद-बिमुख न पैहौं ।
मन समेत या तनु के बासिन्ह इहै सिखावन दैहौं ॥२॥
स्रवननि और कथा नहिं सुनिहौं रसना और न गैहौं ।
रोकिहौं नैन बिलोकत औरहिं सीस ईस ही नैहौं ॥३॥
नातो नेह नाथ सों करि सब नातो नेह बहैहौं ।
या छर भार ताहि तुलसी जग, जाको दास कहैहौं ॥४॥

अब लौं नसानी, अब न नसैहौं ।
रामकृपा भव-निसा सिरानी, जागे पुनि न डसैहौं ॥१॥
पायो नाम चारु चिंतामनि, उर करते न खसैहौं ।
स्यामरूप सुचि रुचिर कसौटी, चित कंचनहिं कसैहौं ॥२॥
परबस जानि हँस्यो इन इन्द्रिन, निज बस ह्वै न हँसैहौं ।
मन मधुकर पन कै तुलसी, रघुपति-पद कमल बसैहौं ॥३॥

जाउँ कहाँ तजि चरन तुम्हारे।
काको नाम पतित-पावन जग, केहि अति दीन पियारे ॥१॥
कौने देव बराइ बिरद-हित, हठि हठि अधम उधारे।
खग, मृग, ब्याध, पषान, बिटप जड़, जवन कवन सुर तारे ॥२॥
देव, दनुज, मुनि, मनुज, सब, माया-बिबस बिचारे।
तिनके हाथ दास तुलसी प्रभु, कहा अपनपौ हारे ॥३॥

केसव कहि न जाइ का कहिये।
देखत तव रचना बिचित्र अति, समुझि मनहि मन रहिये ॥१॥
सून्य भीति पर चित्र, रंग नहिं, तनु बिनु लिखा चितेरे।
धोये मिटै न मरे भीति, दुख पाइय इहि तनु हेरे ॥२॥
रबिकर-नीर बसै अति दारुन, मकर रूप तेहि माहीं।
बदन-हीन सो ग्रसै चराचर, पान करन जे जाहीं ॥३॥
कोउ कह सत्य, झूठ कह कोऊ, जुगल प्रबल कोउ मानै।
तुलसिदास परिहरै तीन भ्रम, सो आपन पहिचानै ॥४॥

माधव असि तुम्हार यह माया।
करि उपाय पचि मरिय, तरिय नहिं, जब लगि करहु न दाया ॥१॥
सुनिय, गुनिय, समुझिय, समुझाइय, दसा हृदय नहिं आवै।
जेहि अनुभव बिनु मोह जनित भव, दारुन बिपति सतावै ॥२॥
ब्रह्म पियूष मधुर सीतल जो, पै मन सो रस पावै।
तौ कत मृगजल-रूप बिषय, कारन निसिबासर धावै ॥३॥
जेहि के भवन बिमल चिन्तामनि, सो कत काँच बटोरै।
सपने परबस परै जागि, देखत केहि जाइ निहोरै ॥४॥

ग्यान भक्ति साधन अनेक, सब सत्य, झूठ कछु नाहीं ।
तुलसिदास हरिकृपा मिटै भ्रम, यह भरोस मन माहीं ॥५॥

हे हरि, कवन दोष तोहिं दीजै ।
जेहि उपाय सपनेहुँ दुरलभ गति, सोइ निसिबासर कीजै ॥१॥
जानत अर्थ अनर्थ-रूप, तमकूप परब यहि लागे ।
तदपि न तजत स्वान अज खर ज्यों, फिरत बिषय अनुरागे ॥२॥
भूत द्रोहकृत मोहबस्य हित, आपन मैं न बिचारो ।
मद-मत्सर-अभिमान ग्यान रिपु, इन महँ रहनि अपारो ॥३॥
बेद-पुरान सुनत समुझत, रघुनाथ सकल जग ब्यापी ।
बेधत नहिं श्रीखंड बेनु इव, सारहीन मन पापी ॥४॥
मैं अपराध-सिंधु, करुनाकर ! जानत अन्तरजामी ।
तुलसिदास भव-ब्याल ग्रसित तव, सरन उरग-रिपु गामी ॥५॥

जौ निज मन परिहरै बिकारा ।
तौ कत द्वैत-जनित संसृति दुख, संसय सोक अपारा ॥१॥
सत्रु मित्र मध्यस्थ तीनि ये, मन कीन्हें बरियाई ।
त्यागन गहन उपेच्छनीय, अहि हाटक तृन की नाई ॥२॥
असन, बसन, पसु बस्तु बिबिध बिधि, सब मनि महँ रह जैसे ।
सरग नरक चर अचर लोक बहु, बसत मध्य मन तैसे ॥३॥
बिटप-मध्य पुतरिका सूत महँ, कंचुकि बिनहिं बनाये ।
मन महँ तथा लीन नाना तनु, प्रगटत अवसर पाये ॥४॥
रघुपति-भक्ति-बारि छालित चित, बिनु प्रयास ही सूझै ।
तुलसिदास कह चिद-बिलास जग, बूझत बूझत बूझै ॥५॥

सुनहुँ राम रघुबीर गुसाईं, मन अनीति-रत मेरो।
चरन-सरोज बिसारि तिहारे, निसिदिन फिरत अनेरो ॥१॥
मानत नाहिं निगम-अनुसासन, त्रास न काहू केरो।
भूल्यो सूल करम-कोलुन्ह तिल, ज्यों बहु बारनि पेरो ॥२॥
जहँ सतसंग, कथा माधव की, सपनेहुँ करत न फेरो।
लोभ-मोह-मद-काम-कोह रत तिन्ह सों प्रेम घनेरो ॥३॥
पर-गुन सुनत दाह, पर-दूषन सुनत हरष बहुतेरो।
आप पाप को नगर बसावत सहि न सकत पर खेरो ॥४॥
साधन फल स्रुति-सार नाम तव, भव सरिता कहँ बेरो।
सो पर-कर काँकिनी लागि सठ, बेंचि होत हठ चेरो ॥५॥
कबहुँक हौं संगति सुभाव तें, जाउँ सुमारग नेरो।
तब करि क्रोध संग कुमनोरथ, देत कठिन भट भेरो ॥६॥
इक हौं दीन मलीन हीनमति, बिपति-जाल अति घेरो।
तापर सहि न जाय करुनानिधि, मन को दुसह दरेरो ॥७॥
हारि पर्‌यो करि जतन बहुत बिधि, तातें कहत सबेरो।
तुलसिदास यह त्रास मिटै जब, हृदय करहु तुम डेरो ॥८॥

मैं हरि, पतित-पावन सुने।
मैं पतित तुम पतित-पावन दोउ बानक बने ॥१॥
ब्याध गनिका गज अजामिल साखि निगमनि भने।
और अधम अनेक तारे जात कापै गने ॥२॥
जानि नाम अजानि लीन्हें नरक जमपुर मने।
दास तुलसी सरन आयो राखिये अपने ॥३॥

ऐसे को उदार जग माहीं ।
बिनु सेवा जो द्रवै दीन पर राम सरिस कोउ नाहीं ॥१॥
जो गति जोग बिराग जतन करि नहिं पावत मुनि ग्यानी ।
सो गति देत गीध सवरी कहँ प्रभु न बहुत जिय जानी ॥२॥
जो संपति दससीस अरपि करि रावन सिव पहँ लीन्हीं ।
सो संपदा विभीषन कहँ अति सकुच-सहित हरि दीन्हीं ॥३॥
तुलसिदास सब भाँति सकल सुख जो चाहसि मन मेरो ।
तौ भजु राम, काम सब पूरन करैं कृपानिधि तेरो ॥४॥

माधव मोह-पास क्यों टूटै ।
बाहर कोटि उपाय करिय अभ्यन्तर ग्रन्थि न छूटै ॥१॥
घृत पूरन कराह अन्तरगत, ससि-प्रतिबिम्ब दिखावै ।
ईंधन अनल लगाय कल्पसत, औंटत नास न पावै ॥२॥
तरु कोटर महँ बस बिहँग, तरु काटे मरै न जैसे ।
साधन करिय बिचार-हीन-मन, सुद्ध होइ नहिं तैसे ॥३॥
अंतर मलिन, बिषय मन अति, तन पावन करिय पखारे ।
मरइ न उरग अनेक जतन, बलमीति बिबिध बिधि मारे ॥४॥
तुलसिदास हरि-गुरु-करुना बिनु, बिमल बिबेक न होई ।
बिनु बिबेक संसार घोर-निधि, पार न पावै कोई ॥५॥

जो पै राम-चरन-रति होती ।
तौ कत त्रिबिध सूल निसिबासर, सहते बिपति निसोती ॥१॥
जो सन्तोष-सुधा निसिबासर, सपनेहुँ कबहुँक पावै ।
तो कत बिषय बिलोकि झूँठ जल, मन-कुरंग ज्यों धावै ॥२॥

जो श्रीपति-महिमा बिचारि उर, भजते भाव बढ़ाए।
तौ कत द्वार द्वार कूकर ज्यों, फिरते पेट खलाए ॥३॥
जे लोलुप भये दास आस के, ते सब ही के चेरे।
प्रभु बिस्वास आस जीती जिन्ह, ते सेवक हरि केरे ॥४॥
नहिं एकौ आचरन भजन को, बिनय करत हौं ताते।
कीजै कृपा दास तुलसी पर, नाथ नाम के नाते ॥ ॥

रघुपति-भगति करति कठिनाई।
कहत सुगम, करनी अपार, जानै सोइ जेहि बनि आई ॥१॥
जो जेहि कला कुसल ताकहँ सोइ, सुलभ सदा सुखकारी।
सफरी सन्मुख जल-प्रवाह, सुरसरी बहै गज भारी ॥२॥
ज्यों सकरा मिलै सिकतामहँ, बल तें न कोउ बिलगावै।
अति रसग्य सूच्छम पिपीलिका, बिनु प्रयास ही पावै ॥३॥
सकल दृश्य निज उदर मेलि, सोवै निद्रा तजि जोगी।
सोइ हरिपद अनुभवै परम सुख, अतिसय द्वैत-बियोगी ॥ ॥
सोक मोह भय हरष दिवस-निसि, देस-काल तहँ नाहीं।
तुलसिदास यहि दसाहीन, संशय निरमूल न जाहीं ॥५॥

जो मोहिं राम लागते मीठे।
तौ नव-रस, षटरस-रस अनरस ह्वै जाते सब सीठे ॥१॥
बंचक बिषय बिबिध तनु धरि, अनुभवे सुने अरु डीठे।
यह जानत हौं हृदय आपने, सपने न अघाइ उबीठे ॥२॥
तुलसिदास प्रभु सों एकहि बल, बचन कहत अति ढीठे।
नाम की लाज राम करुनाकर, केहि न दिये कर चीठे ॥३॥

यों मन कबहूँ तुमहि न लाग्यो ।
ज्यों छल छाँड़ि सुभाव निरंतर, रहत बिषय अनुराग्यो ॥१॥
ज्यों चितई परनारि, सुने पातक-प्रपंच घर घर के ।
त्यों न साधु, सुरसरि-तरंग-निर्मल गुनगन रघुबर के ॥२॥
ज्यों नासा सुगंधरस-बस, रसना षटरस रति मानी ।
रामप्रसाद-माल, जूँठनि लगि, त्यों न ललकि ललचानी ॥३॥
चंदन चंद्रबदनि भूषन पट, ज्यों चह पाँवर परस्यो ।
त्यों रघुपति-पद-पदुम-परस को, तनु पातकी न तरस्यो ॥४॥
ज्यों सब भाँति कुदेव कुठाकुर, सेये बपु बचन हिये हूँ ।
त्यों न राम सुकृतग्य जे सकुचत, सकृत प्रनाम किये हूँ ॥५॥
चंचल चरन लोभ लगि लोलुप, द्वार-द्वार जग बागे ।
राम-सीय-आस्रमनि चलत त्यों, भये न स्रमित अभागे ॥६॥
सकल अंग पद-बिमुख नाथ मुख, नाम की ओट लई है ।
है तुलसिहिं परतीति एक, प्रभु-मूरति कृपामई है ॥७॥

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो ।
श्री रघुनाथ-कृपालु कृपा तें, संत-स्वभाव गहौंगो ॥१॥
जथालाभ संतोष सदा, काहू सों कछु न चहौंगो ।
परहित-निरत निरंतर मन क्रम, बचन नेम निबहौंगो ॥२॥
परुष बचन अति दुसह स्रवन सुनि, तेहि पावक न दहौंगो ।
बिगत मान, मम सीतल मन, पर गुन, नहिं दोष कहौंगो ॥३॥
परिहरि देह-जनित चिन्ता, दुख सुख समबुद्धि सहौंगो ।
तुलसीदास प्रभु यहि पथ रहि, अबिचल हरि-भक्ति लहौंगो ॥४॥

नाहिंन आवत आन भरोसो ।
यहि कलिकाल सकल साधन तरु, है स्रम-फलनि फरो सो ॥१॥
तप, तीरथ, उपवास, दान, मख जेहि जो रुचै करो सो ।
पायेहि पै जानिबो करम-फल, भरि भरि बेद परोसो ॥२॥
आगम-बिधि जप-जाग करत नर, सरत न काज खरो सो ।
सुख सपनेहु न जोग-सिधि-साधन, रोग बियोग धरो सो ॥३॥
काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह मिलि ग्यान बिराग हरो सो ।
बिगरत मन संन्यास लेत, जल नावत आम घरो सो ॥४॥
बहु मत सुनि बहु पंथ पुराननि, जहाँ तहाँ झगरो सो ।
गुरु कह्यो राम-भजन नीको मोहिं, लगत राज-डगरो सो ॥५॥
तुलसी बिनु परतीति प्रीति फिरि फिरि पचि मरै मरो सो ।
रामनाम बोहित भव-सागर, चाहै तरन तरो सो ॥६॥

जाके प्रिय न राम-बैदेही ।
सो छाँड़िये कोटि बैरी सम, जद्यपि परम सनेही ॥१॥
तज्यो पिता प्रहलाद, बिभीषन बंधु, भरत महतारी ।
बलि गुरु तज्यो, कंत ब्रज-बनितनि, भये मुद-मंगलकारी ॥२॥
नाते नेह राम के मनियत, सुहृद सुसेव्य जहाँ लौं ।
अंजन कहा आँखि जेहि फूटै, बहुतक कहौं कहाँ लौं ॥३॥
तुलसी सो सब भाँति परमहित, पूज्य प्रान ते प्यारो ।
जासों होय सनेह रामपद, एतो मतो हमारो ॥४॥

जो पै रहनि राम सो नाहीं ।
तौ नर खर कूकर सूकर सम बृथा जियत जग माहीं ॥१॥

काम, क्रोध, मद, लोभ, नींद, भय, भूख, प्यास सबही के।
मनुज देह सुर साधु सराहत, सो सनेह सिय-पी के ॥२॥
सूर, सुजान, सुपूत, सुलच्छन गनियत गुन गरुआई।
बिनु हरिभजन इँनारुन के फल तजत नहीं करुआई ॥३॥
कीरति, कुल, करतूति, भूति भलि, सील, सरूप सलोने।
तुलसी प्रभु-अनुराग-रहित जस, सालन साग अलोने ॥४॥

कौन जतन बिनती करिये।
निज आचरन बिचारि हारि हिय मानि जानि डरिये ॥१॥
जेहि साधन हरि द्रवहु जानि जन, सो हठि परिहरिये।
जाति बिपति-जाल निसदिन दुख, तेहि पथ अनुसरिये ॥२॥
जानत हूँ मन बचन करम, पर-हित कीन्हें तरिये।
सो विपरीत देखि परसुख, बिनु कारन हो जरिये ॥३॥
स्रुति पुरान सब को मत यह, सतसंग सुदृढ़ धरिये।
निज अभिमान मोह ईर्षाबस, तिनहिं न आदरिये ॥४॥
संतत सोइ प्रिय मोहिं सदा, जातें भवनिधि परिये।
कहौ अब नाथ, कौन बल तें संसार-सोक हरिये ॥५॥
जब कब निज करुना सुभाव ते, द्रवहु तौ निस्तरिये।
तुलसिदास बिस्वास आन नहिं, कत पचि पचि मरिये ॥६॥

ताहि ते आयो सरन सबेरे।
ग्यान विराग भगति साधन कछु, सपनेहुँ नाथ न मेरे ॥१॥
लोभ मोह मद काम क्रोध रिपु, फिरत रैन दिन घेरे।
तिनहिं मिले मन भयो कुपथ-रत, फिरै तिहारेहि फेरे ॥२॥

दोष निलय यह बिषय सोक-प्रद, कहत संग स्रुति टेरे।
जानत हूँ अनुराग तहाँ अति, सो हरि तुम्हरेहि प्रेरे ॥३॥
बिष पियूष सम करहु अगिनि हिम, तारि सकहु बिनु बेरे।
तुम सम ईस कृपालु परमहित, पुनि न पाइहौं हेरे ॥४॥
यह जिय जानि रहौं सब तजि, रघुबीर भरोसे तेरे।
तुलसिदास यह बिपति बाँगुरो, तुमहि सौं बनै निबेरे ॥५॥

मैं तोहिं अब जान्यो संसार।
बाँधि न सकहि मोहिं हरि के बल, प्रगट कपट-आगार ॥१॥
देखत ही कमनीय, कछू नाहिन पुनि कियो बिचार।
ज्यों कदली तरुमध्य निहारत, कबहुँ न निकसत सार ॥२॥
तेरे लिये जनम अनेक मैं, फिरत न पायो पार।
महामोह-मृगजल-सरिता महँ, बोर्‍यो हौं बारहिं बार ॥
सुनु खल, छल बल कोटि किये बरु होहिं न भगत उदार।
सहित सहाय तहाँ बसि अब, जेहि हृदय न नंदकुमार ॥४॥
तासों करत चातुरी जो नहिं जानै मरम
सो परि डरै मरै रजु-अहि तें, बूझै नहिं ब्यवहार ॥५॥
निज हित सुनु सठ, हठ न करहि जो चहहि कुसल परिवार।
तुलसिदास प्रभु के दासनि तजि, भजहि जहाँ मद मार ॥६॥

मन पछितैहै अवसर बीते।
दुर्लभ देह पाइ हरिपद भजु, करम, बचन अरु हीते ॥१॥
सहसबाहु दसबदन आदि नृप, बचे न काल बली ते।
हम हम करि धन-धाम सँवारे, अंत चले उठि रीते ॥२॥

सुत बनितादि जानि स्वारथरत, न करु नेह सबही ते ।
अंतहुँ तोहिं तजैंगे पामर ! तू न तजै अबही ते ॥३॥
अब नाथहिं अनुरागु जागु जड़, त्यागु दुरासा जी ते ।
बुझै न काम अगिनि तुलसी कहुँ, बिषय-भोग बहु घी ते ॥४॥

काजकहा नर तनु धरि सार्‌यो ।
पर-उपकार सार स्रुति को जो, सो धोखेहु न बिचार्‌यो ॥१॥
द्वैत मूल, भय सूल, सोक फल, भवतरु टरै न टार्‌यो ।
राम भजन-तीछन कुठार लै, सो नहिं काटि निवार्‌यो ॥२॥
संसय-सिंधु नाम-बोहित भजि, निज आत्मा न तार्‌यो ।
जनम अनेक बिबेकहीन बहु, जोनि भ्रमत नहिं हार्‌यो ॥३॥
देखि आन की सहज संपदा, द्वेष-अनल मन जार्‌यो ।
सम दम दया दीन-पालन, सीतल हिय हरि न सँभार्‌यो ॥४॥
प्रभु गुरु पिता सखा रघुपति तैं, मनक्रम बचन बिसार्‌यो ।
तुलसिदास यहि आस सरन, राखिहि जेहि गीध उधार्‌यो ॥५॥

जौ मन भज्यो चहै हरि-सुरतरु ।
तौ तजि बिषय-बिकार, सार भजु, अजहुँ जो मैं कहौं सोइ करु ॥१॥
सम, संतोष, बिचार बिमल अति, सतसंगति, ये चारि दृढ़ करि धरु ।
काम क्रोध अरु लोभ मोह मद, राग द्वेष निसेष करि परिहरु ॥२॥
स्रवन कथा, मुख नाम हृदय हरि, सिर प्रनाम, सेवा कर अनुसरु ।
नयनन निरखि कृपा-समुद्र हरि, अगजगरूप भूप सीतावरु ॥३॥
इहै भगति बैराग्य ग्यान यह हरि-तोषन यह सुभ ब्रत आचरु ।
तुलसिदास सिव-मतमारग यहि, चलत सदा सपनेहुँ नाहिंन डरु ॥४॥

भरोसो जाहि दूसरो सो करो।
मोको तो राम को नाम कलपतरु, कलि कल्यान फरो ॥१॥
करम, उपासन ग्यान, बेदमत सो सब भाँति खरो।
मोहि तो "सावन के अंधहिं" ज्यों सूझत रंग हरो ॥२॥
चाटत रह्यों स्वान पातरि ज्यों, कबहुँ न पेट भरो।
सो हौं सुमिरत नाम सुधारस, पेखत परुसि धरो ॥३॥
स्वारथ औ परमारथ हू को, नहिं 'कुंजरो नरो'।
सुनियत सेतु पयोधि पषाननि, करि कपि-कटक तरो ॥४॥
प्रीति-प्रतीति जहाँ जाकी, तहँ ताको काज सरो।
मेरे तो माय-बाप दोउ आखर, हौं सिसु-अरनि अरो ॥५॥
संकर साखि जो राखि कहौं कछु, तौ जरि जीह गरो।
अपनो भलो राम-नामहिं तें, तुलसिहिं समुझि परो ॥६॥

काहे न रसना रामहिं गावहि ?
निसदिन पर-अपवाद बृथा कत, रटि रटि राग बढ़ावहि ॥१॥
नर मुख सुन्दर मन्दिर पावन, बसि जनि ताहि लजावहि।
ससि समीप रहि त्यागि सुधा कत, रबिकर-जल कहँ धावहि ॥२॥
काम-कथा कलि-कैरव चंदिनि, सुनत स्रवन दै भावहि।
तिनहिं हटकि कहि हरि-कल-कीरति, करन-कलंक नसावहि ॥३॥
जातरूप-मति जुगुति रुचिर मनि, रचि रचि हार बनावहि।
सरन-सुखद रबिकुल सरोज रबि, राम नृपहिं पहिरावहि ॥४॥
बाद-बिबाद-स्वाद तजि भजि, हरि सरस चरित चित लावहि।
तुलसिदास भवतरहि, तिहूँ पुर तू पुनीत जस पावहि ॥५॥

मोहिं मूढ़ मन बहुत बिगोयो।
याके लिये सुनहु करुनामय, मैं जग जनमि जनमि दुख रोयो ॥१॥
सीतल मधुर पियूष सहज, सुख, निकटहिं रहत दूरिजनु खोयो।
बहु भाँतिन स्रम करत मोहबस, बृथहि मंदमति बारि बिलोयो ॥२॥
करम-कीच जिय जानि सानि चित, चाहत कुटिल मलहि मल धोयो।
तृषावंत सुरसरि बिहाय सठ, फिरि फिरि बिकल अकास निचोयो ॥३॥
तुलसिदास प्रभु कृपा करहु अब, मैं निज दोष कछू नहिं गोयो।
डासत ही गई बीति निसा सब; कबहुँ न नाथ! नींद भरि सोयो ॥४॥

जानकी जीवन की बलि जैहौं।
चित कहै राम सीय पद परिहरि, अब न कहूँ चलि जैहौं ॥१॥
उपजी उर प्रतीति सपनेहुँ सुख प्रभु पद बिमुख न पैहौं।
मन-समेत या तन के बासिन्ह, इहै सिखावन दैहौं ॥२॥
श्रवननि और कथा नहिं सुनिहौं, रसना और न गैहौं।
रोकिहौं नयन बिलोकत औरहिं, सीस ईस ही नैहौं ॥३॥
नातो नेह नाथ सों करि, सब नातो नेह बहैहौं।
यह छर भार ताहि तुलसी जग, जाको दास कहैहौं ॥४॥

ऐसे राम दीन हितकारी।
अति कोमल करुनानिधान, बिनु कारण पर-उपकारी ॥१॥
साधनहीन दीन निज अघ बस, सिला भई मुनि नारी।
गृह तें गवनि परसि पद पावन, घोर साप तें तारी ॥२॥
हिंसारत निषाद तामस बपु, पसु-समान बनचारी।
भेंट्यो हृदय लगाइ प्रेमबस, नहिं कछु जात बिचारी ॥३॥

जद्यपि द्रोह कियो सुरपति-सुत, कहि न जाय अति भारी।
सकल लोक अवलोकि सोक हत, सरन गए भय टारी ॥४॥
बिहंग जोनि आमिष अहार पर, गीध कौन व्रतधारी।
जनक-समान क्रिया ताकी निज कर सब भाँति सँवारी ॥५॥
अधम जाति सबरी जोषित जड़, लोक वेद तें न्यारी।
जानि प्रीति दै दरस कृपानिधि, सोउ रघुनाथ उधारी ॥६॥
कपि सुग्रीव बन्धु-भय-व्याकुल, आयो सरन पुकारी।
सहि न सके दारुन दुख जन के, हत्यो बालि सहिगारी ॥७॥
रिपु को अनुज बिभीषन निसिचर, कौन भजन अधिकारी।
सरन गए आगे ह्वै लीन्हों, भेंट्यो भुजा पसारी ॥८॥
असुभ होइ जिहि के सुमिरे ते, बानर रीछ बिकारी।
बेद बिदित पावन किये ते सब, महिमा नाथ तुम्हारी ॥९॥
कहँ लगि कहौं दीन अगनित, जिनकी तुम बिपत निवारी।
कलिमल ग्रसित दास तुलसी पर, काहे कृपा बिसारी ॥१०॥

— —

दोहावली

राम बाम दिसि जानकी, लषन दाहिनी ओर।
ध्यान सकल कल्यानकर, तुलसी सुरतरु तोर ॥१॥

पय अहाइ फल खाइ जपु, राम नाम षट मास।
सकल सुमंगल सिद्धि सब, करतल तुलसीदास ॥२॥

रामनाम - मनि - दीप धरु, जीह - देहरी - द्वार।
तुलसी भीतर बाहिरौ, जौ चाहसि उजियार ॥३॥

नाम राम को अंक है, सब साधन हैं सून।
अंक गये कछु हाथ नहिं, अंक रहे दस गून ॥४॥

राम नाम अवलम्ब बिनु, परमारथ की आस।
बरषत बारिद बूँद गहि, चाहत चढ़न अकास ॥५॥

प्रीति प्रतीति सुरीति सों, राम राम जपु राम।
तुलसी तेरो है भलो, आदि मध्य परिनाम ॥६॥

राम भरोसो, राम बल, रामनाम विश्वास।
सुमिरत सुभ मंगल कुसल, माँगत तुलसीदास ॥७॥

हिय फाटहु, फूटहु नयन, जरउ सो तन केहि काम।
द्रवहि, स्रवहि, पुलकहि नहीं, तुलसी सुमिरत राम ॥८॥

रहै न जल भरि पूरि, राम ! सुजस, सुनि रावरो।
तिन आँखिन में धूरि, भरि भरि मूठी मेलिये ॥९॥

रे मन ! सब सों निरस ह्वै, सरस राम सों होहि।
भलो सिखावन देत है, निस दिन तुलसी तोहि ॥१०॥

हरे चरहिं तापहिं बरे, फरे पसारहिं हाथ।
तुलसी स्वारथ मीत सब, परमारथ रघुनाथ ॥११॥

जथा लाभ सन्तोष सुख, रघुबर - चरन - सनेह।
तुलसी जौ मन खूँद सम, कानन बसहु कि गेह ॥१२॥

तुलसी जो पै राम सों, नाहिन सहज सनेह।
मूँड़ मुड़ायो बादि ही, भाँड़ भयो तजि गेह ॥१३॥

बरषा को गोबर भयो, को चह को कर प्रीति?
तुलसी तू अनुभवहि अब, राम बिमुख की रीति ॥१४॥

तुलसी जौ लौं विषय की, मुधा माधुरी मीठि।
तौ लौं सुधा सहस्र सम, राम भगति सुठि सीठि ॥१५॥

तुलसी सुखी जो राम सों, दुखी सो निज करतूति।
करम बचन मन ठीक जेहि, तेहि न सकै कलि भूति ॥१६॥

तुलसी रामहु तें अधिक, राम भक्त जिय जान।
ऋनिया राजा राम भे, धनिक भये हनुमान ॥१७॥

बारि मथे घृत होइ बरु, सिकता तें बरु तेल।
बिनु हरि-भजन न भव तरिय, यह सिद्धान्त अपेल ॥१८॥

श्री रघुबीर प्रताप तें, सिंधु तरे पाषान।
ते मतिमन्द जे राम तजि, भजहिं जाय प्रभु आन ॥१९॥

सूधे मन, सूधे बचन, सूधी सब करतूति।
तुलसी सूधी सकल विधि, रघुबर - प्रेम - प्रसूति ॥२०॥

बेष बिसद बोलनि मधुर, मन कटु करम मलीन।
तुलसी राम न पाइये, भये बिषय-जल-मीन ॥२१॥

कुलिसहु चाहि कठोर अति, कोमल कुसुमहु चाहि।
चित खगेस अस राम कर, समुझि परै कहु काहि ॥२२॥

भव-भुअंग तुलसी-नकुल, डसत ज्ञान हरि लेत।
चित्र-कूट इक औषधी, चितवत होत सचेत ॥२३॥

तुलसी जान्यों दसरथहिं, धरमु न सत्य समान।
रामु तजे जेहि लागि बिनु, राम परिहरे प्रान ॥२४॥

हम, हमार, आचार, बड़, भूरि भारि धरि सीस।
हठि सठ परबस परत जिमि, कीर-कोस-कृमि, कीस ॥२५॥

कहिबे कहँ रसना रची, सुनिबे कहँ किय कान।
धरिबे कहँ चित हित सहित, परमारथहि सुजान ॥२६॥

घर कीन्हें घर जात है, घर छाँड़े घर जाइ।
तुलसी घर बन बीच ही, राम प्रेमपुर छाइ ॥२७॥

तुलसी अद्भुत देवता, आसा देवी नाम।
सेये सोक समर्पई, बिमुख भये अभिराम ॥२८॥

सोई सेंबर तेइ सुवा, सेवत सदा बसन्त।
तुलसी महिमा मोह की, सुनत सराहहिं सन्त ॥२९॥

ज्ञानी, तापस, सूर, कवि, कोविद, गुन आगार।
केहि कै लोभ बिडम्बना, कीन्ह न यहि संसार ॥३०॥

काम क्रोध लोभादि मद, प्रबल मोह कै धारि।
तिन्ह महँ अति दारुन दुखद, माया रूपी नारि ॥३१॥

दीपसिखा सम जुवति-तन, मन जनि करसि पतंग।
भजहि राम, तजि काम मद, करहि सदा सतसंग ॥३२॥

रटत रटत रसना लटी, तृषा सूखि गे अङ्ग ।
तुलसी चातक प्रेम को, नित नूतन रुचि रङ्ग ॥३३॥

उपल बरषि गरजत तरजि, डारत कुलिस कठोर ।
चितव कि चातक मेघ, तजि, कबहुँ दूसरी ओर ॥३४॥

बध्यो बधिक, पर्‍यो पुण्यजल, उलटि उठाई चोंच ।
तुलसी चातक प्रेम पट, मरतहुँ लगी न खोंच ॥३५॥

कै लघु कै बड़ मीत भल, सम सनेह दुख सोइ ।
तुलसी ज्यों घृत मधु सरिस, मिले महाविष होइ ॥३६॥

हृदय कपट, बर बेष धरि, बचन कहैं गढ़ि छोलि ।
अब के लोग मयूर ज्यों, क्यों मिलिये मन खोलि ॥३७॥

नीच निचाई नहिं तजै, सज्जनहूँ के संग ।
तुलसी चंदन बिटप बसि, बिनु बिष भये न भुजंग ॥३८॥

संत संग अपवर्ग-कर, कामी भवकर पंथ ।
कहहि साधु. कवि, कोविद, स्रुति, पुरान सद्ग्रन्थ ॥३९॥

अवसर कौड़ी जो चुकै, बहुरि दिये का लाख ।
दुइज न चंदा देखिये, उदौ कहा भरि पाख ॥४०॥

उत्तम, मध्यम, नीच गति, पाहन, सिकता, पानि ।
प्रीति परिच्छा तिहुँन की, बैर बितिक्रम जानि ॥४१॥

आपु आपु कहुँ सब भलो; अपने कहँ कोइ कोइ ।
तुलसी सब कहँ जो भलो, सुजन सराहिय सोइ ॥४२॥

रामकृपा तुलसी सुलभ, गंग सुसंग समान ।
जो जल परै जो जन मिलै, कीजै आपु समान ॥४३॥

होइ भले के अनभलो, होइ दानि के सूम ।
होइ कुपूत सुपूत के, ज्यों पावक में धूम ॥४४॥

जड़-चेतन गुण-दोष-मय, बिस्व कीन्ह करतार ।
संत-हंस गुन गहहिं पय, परिहरि वारि बिकार ॥४५॥

प्रभु सनमुख-भये नीच नर, होत निपट बिकराल ।
रबि-रुख लखि दरपन फटिक, उगिलत ज्वाला जाल ॥४६॥

प्रभु समीप-गत सुजन-जन, होत सुखद सुविचारि ।
लवन-जलधि जीवन जलद, बरषत सुधा सुबारि ॥४७॥

ठाढ़ो द्वार न दै सकैं, तुलसी जे नर नीच ।
निदहि बलि हरिचन्द को, का किया करन दधीच ॥४८॥

राकापति षोड़स उवहिं, तारागन समुदाइ ।
सकल गिरिन दव लाइये, बिनु रबि राति न जाइ ॥४९॥

पर-सुख संपति देखि सुनि, जरहिं जे जड़ बिनु आगि ।
तुलसी तिनके भाग ते, चलै भलाई भागि ॥५०॥

तुलसी जे कीरति चहहिं, पर कीरति को खोइ ।
तिनके मुँह मसि लागिहै, मिटिहि न मरिहैं धोइ ॥५१॥

सरल बक्रगति पंचग्रह, चपरि न चितवत काहु ।
तुलसी सूधे सूर ससि, समय बिडंबित राहु ॥५२॥

तुलसी खल-बानी मधुर, सुनि समुझिय हिय हेरि ।
रामराज बाधक भई, मूढ़ मंथरा चेरि ॥५३॥

नीच गुड़ी ज्यों जानिबो, सुनि लखि तुलसीदास ।
ढीलि दिये गिरि परत महि, खैंचत चढ़त अकास ॥५४॥

पेरत कोल्हू मेलि तिल, तिली सनेही जानि।
देखी प्रीति की रीति यह, अब देखिबी रिसानि ॥५५॥

परद्रोही, परदार रत, परधन पर-अपवाद।
ते नर पाँवर पापमय, देह धरे मनुजाद ॥५६॥

कपट सार सूची सहस, बाँधि बचन पर बास।
कियो दुराउ चह चातुरी, सो सठ तुलसीदास ॥५७॥

देस-काल-करता-करम-बचन-बिचार-बिहीन।
ते सुर तरु-तर दारिदी, सुरसरि-तीर मलीन ॥५८॥

राज करत बिनु काजही, ठटहिं जे कूर कुठाट।
तुलसी ते कुरुराज ज्यों, जइहैं बारह बाट ॥५९॥

सहज सुहृद, गुरु, स्वामि सिख जो न करै हित मानि।
सो पछिताइ अघाइ उर, अवसि होइ हित-हानि ॥६०॥

कलह न जानब छोट करि, कलह-कठिन परिनाम।
लगति अगिनि लघुनीच गृह, जरत धनिक धनधाम ॥६१॥

बोल न मोटे मारिये, मोटी रोटी मारु।
जीति सहस सम हारिबो, जीते हारि निहारु ॥६२॥

जो परि पायँ मनाइये, तासों रूठि बिचारि।
तुलसी तहाँ न जीतिये, जहँ जीतेहू हारि ॥६३॥

जूझे ते भल बूझिबो, भली जीति तें हारि।
डहके ते डहकाइबो, भलो जो करिय बिचारि ॥६४॥

जा रिपु सों हारेहु हँसी, जिते पाप परितापु।
तासों रारि निवारिये, समय सँभारिये आपु ॥६५॥

रोष न रसना खोलिये, बरु खोलिय तरवारि।
सुनत मधुर परिनामहित, बोलिय बचन बिचारि ॥६६॥

मधुर बचन कटु बोलिबो, बिनु श्रम भाग अभाग।
कुहू कुहू कलकंठ रव, काँ काँ कररत काग ॥६७॥

पेट न फूलत बिनु कहे, कहत न लागै ढेर।
सुमति बिचारे बोलिये, समुझि कुफेर सुफेर ॥६८॥

सूर समर करनी करहिं, कहि न जनावहिं आपु।
बिद्यमान रन पाइ रिपु, कायर करहिं प्रलापु ॥६९॥

रामलषन बिजयी भये, बनहु गरीब निवाज।
मुखर बालि रावन भये, घरही सहित समाज ॥७०॥

तुलसी असमय के सखा, धीरज, धरम बिबेक।
साहित, साहस, सत्यब्रत, राम भरोसो एक ॥७१॥

तुलसी जस भवितब्यता, तैसी मिलै सहाय।
आपु न आवै ताहि पै (कि), ताहि तहाँ लै जाय ॥७२॥

बरषत करषत आपु जल, हरषत अरधनि भानु।
तुलसी चाहत साधु सुर, सब सनेह सनमानु ॥७३॥

नकुल सुदरसन दरसनी, छेमकरी चक चाषु।
दस दिसि देखत सगुन सुभ, पूजहि मन अभिलाषु ॥७४॥

भरत सत्रुसूदन लषन, सहित सुमिरि रघुनाथ।
करहु काज सुभ साज सब, मिलिहि सुमंगल साथ ॥७५॥

सहि कुबोल, साँसति सकल, अँगइ अनट अपमान।
तुलसी धरम न परिहरिय, कहि, करि गये सुजान ॥७६॥

दो 'हा' चारु बिचारुचलु, परिहरि बाद-बिबाद।
सुकृत-सींव स्वारथ-अवधि, परमारथ-मरजाद ॥७७॥

तुलसी सो समरथ, सुमति, सुकृति, साधु, सयान।
जो बिचारि व्यवहरइ जग, खरच लाभ अनुमान ॥७८॥

बिनु आँखिन की पानही, पहिचानत लखि पाय।
चारि नयन के नारि नर, सूझत मीचु न माय ॥७९॥

जो सुनि समुझि अनीति रत, जागत रहै जु सोइ।
उपदेसिबो जगाइबो, तुलसी उचित न होइ ॥८०॥

बहु सुत, बहु रुचि, बहु बचन, बहु अचार व्यवहार।
इनको भलो मनाइबो, यह अज्ञान अपार ॥८१॥

ब्यालहु तें बिकराल बड़, व्याल फेन जिय जानु।
वहि के खाये मरत है, वहि खाये बिनु-प्रानु ॥८२॥

कारन ते कारज कठिन, होइ दोष नहिं मोर।
कुलिस अस्थि तें, उपल तें लोह कराल कठोर ॥८३॥

भलेहु चलत पथ पोच भय, नृप नियोग-नय-नेम।
सुनिय सुभूपति भूषियत, लोह सँवारत हेम ॥८४॥

चढ़े बघूरे चंग ज्यों, ज्ञान ज्यों सोक-समाज।
करम, धरम, सुख, संपदा, त्यों जानिबे कुराज ॥८५॥

कर के कर, मन के मनहिं, बचन बचन गुन जानि।
भूपहि भूलि न परिहरै, बिजय बिभूति सयानि ॥८६॥

मुखिया मुख सो चाहिये, खान पान को एक।
पालै पोषै सकल अँग, तुलसी सहित बिबेक ॥८७॥

सेवक कर पद नयन से, मुख सो साहिब होइ ।
तुलसी प्रीति कि रीति सुनि, सुकबि सराहहिं सोइ ॥८८॥

मन्त्री, गुरु अरु बैद जो, प्रिय बोलहिं भय आस ।
राज, धरम, तनु तीनि कर, होइ बेगिही नास ॥८९॥

लकड़ी, डौआ, करछुली, सरस काज अनुहारि ।
सुप्रभु संग्रहहिं परिहरहिं, सेवक-सखा बिचारि ॥९०॥

साहब तें सेवक बड़ो, जो निज धरम सुजान ।
राम बाँधि उतरे उदधि, लाँघि गये हनुमान ॥९१॥

गोखग, खेखग, बारिखग, तीनों माहिं बिसेक ।
तुलसी पीवैं फिरि चलैं, रहैं फिरैं सँग एक ॥९२॥

मातु-पिता-गुरु-स्वामि सिख, सिर धरि करहिं सुभाय ।
लहेउ लाभ तिन जनम कर, नतरु जनम जग जाय ॥९३॥

रामायण-अनुहरत सिख, जग भयो भारत रीति ।
तुलसी सठ की को सुनै ? कलि कुचालि पर प्रीति ॥९४॥

चोर, चतुर, बटमार, नट, प्रभुप्रिय, भँडुआ, भंड ।
सब भच्छक, परमारथी, कलि सुपंथ पाषंड ॥९५॥

फोरहि सिल-लोढ़ा सदन, लागे अढ़ुक पहार ।
कायर कूर कपूत कलि, घर घर सहस डहार ॥९६॥

तुलसी सहित सनेह नित, सुमिरत सीताराम ।
सगुन समंगल सुभ सदा, आदि मध्य परिनाम ॥९७॥

पुरुषारथ स्वारथ सफल, परमारथ, परिनाम ।
सुलभ सिद्धि सब साहिबी, सुमिरत सीताराम ॥९८॥

का भाषा का संसकृत, प्रेम चाहिये साँच।
काम जु आवै कामरी, का लै करिय कुमाच ॥९९॥

मनि मानिक महँगे किये, सहँगे तृन जल नाज।
तुलसी एते जानिये, राम गरीब निवाज ॥१००॥

कवितावली रामायण

अवधेस के द्वारे सकारे गई, सुत गोद कै भूपति लै निकसे।
अवलोकि हौं सोच-बिमोचन को ठगि-सी रही, जे न ठगे धिक से॥
'तुलसी' मनरंजन रंजित अंजन नैन सु-खंजन-जातक से।
सजनी ससि में समसील उभै नवनील सरोरुह से बिकसे॥१॥

तन की दुति स्याम सरोरुह लोचन, कंज की मंजुलताई हरैं।
अति सुन्दर सोहत धूरि भरे, छबि भूरि अनंग की दूरि धरैं॥
दमकैं दँतियाँ दुति दामिनि ज्यों, किलकैं कल बाल-बिनोद करैं।
अवधेस के बालक चारि सदा, 'तुलसी' मन-मन्दिर में बिहरैं॥२॥

पग नूपुर औ पहुँची कर कंजनि, मंजु बनी मनिमाल हिये।
नवनील कलेवर पीत झँगा झलकैं, पुलकैं नृप गोद लिये॥
अरविंद सो आनन, रूप मरंद अनंदित लोचन-भृंग पिये।
मन मों न बस्यो अस बालक जौ 'तुलसी' जग में फल कौन जिये॥३॥

कबहूँ ससि माँगत आरि करैं, कबहूँ प्रतिबिंब निहारि डरैं।
कबहूँ करताल बजाइ कै नाचत, मातु सबै मन मोद भरैं॥
कबहूँ रिसिआइ कहैं हठि कै, पुनि लेत सोई जेहि लागि अरैं।
अवधेस के बालक चारि सदा, 'तुलसी' मन-मन्दिर में बिहरैं॥४॥

दूलह श्री रघुनाथ बने, दुलही सिय सुन्दर मन्दिर माहीं।
गावति गीत सबै मिलि सुन्दरि, बेद जुवा जुरि बिप्र पढ़ाहीं॥

राम को रूप निहारति जानकि, कंकन के नग की परछाहीं।
यातें सबै सुधि भूल गई, कर टेकि रही पल टारति नाहीं ॥५॥

दूब दधि रोचना कनक थार भरि भरि,
आरती सँवारि वर नारि चलीं गावतीं।
लीन्हे जयमाल करकंज सोहैं जानकी के,
"पहिराओ राघोजू को" सखिया सिखावतीं ॥
तुलसी मुदित मन जनक नगर जन,
झाँकती झरोखे लगीं सोभा रानी पावतीं।
मनहुँ चकोरी चारु बैठीं निज निज नीड़,
चंद की किरन पावैं पलकैं न लावतीं ॥६॥

गर्भ के अर्भक काटन को, पटु धार कुठार कराल है जाको।
सोई हौं बूझत राज-सभा "धनु, को दल्यौ ?" हौं दलिहौं बल ताको ॥
लघु आनन उत्तर देत बड़ो, लरिहै मरिहै, करिहै कछु साको।
गोरो गरूर गुमान भरो, कहौ कौसिक छोटो-सो ढोटो है काको ॥७॥

विंध्य के बासी उदासी तपोव्रत, धारी महा बिनु नारि दुखारे।
गौतम तीय तरी 'तुलसी', सो कथा सुनि भे मुनिवृन्द सुखारे ॥
ह्वै हैं सिला सब चन्द्रमुखी, परसे पद-मंजुल-कंज तिहारे।
कीन्हीं भली रघुनायक जू, करुना करि कानन को पगु धारे ॥८॥

—— ——

कीर के कागर ज्यों नृप चीर, विभूषन उप्पम अंगनि पाई।
औध तजी मगवास के रूख ज्यौं, पंथ के साथी ज्यौं लोग-लुगाई ॥
संग सुबंधु, पुनीत प्रिया, मनो धर्म क्रिया धरि देह सुहाई।
राजिव लोचन राम चले, तजि बाप को राज बटाऊ की नाई ॥९॥

नाम अजामिल से खल कोटि अपार नदी भव बूड़त काढ़े।
जो सुमिरे गिरि-मेरु सिला-कन होत अजाखुर बारिधि बाढ़े॥
'तुलसी' जेहि के पद-पंकज तें प्रगटी तटिनी जो हरै अघ गाढ़े।
सो प्रभु स्वै सरिता तरिबे कहँ माँगत नाव करारे ह्वै ठाढ़े॥१०॥

एहि घाट तें थोरिक दूर अहै कटि लौं जल-थाह दिखाइहौं जू।
परसे पगधूरि तरै तरनी, घरनी घर क्यों समुझाइहौं जू॥
तुलसी अवलंब न और कछू, लरिका केहि भाँति जिआइहौं जू।
बरु मारिय मोहिं, बिना पग धोये हौं नाथ न नाव चढ़ाइहौं जू॥११॥

रावरे दोष न पायँन को, पगधूरि को भूरि प्रभाउ महा है।
पाहन तें बन बाहन काठ को कोमल है, जल खाइ रहा है॥
पावन पायँ पखारि कै नाव चढ़ाइहौं, आयसु होत कहा है।
तुलसी सुनि केवट के बर बैन हँसे प्रभु जानकी ओर हहा है॥१२॥

पातभरी सहरी, सकल सुत बारे-बारे,
केवट की जाति कछू बेद न पढ़ाइहौं।
सब परिवार मेरो याही लागि राजा जू!
हौं दीन बित्तहीन कैसे दूसरी गढ़ाइहौं॥
गौतम की घरनी ज्यों तरनी तरैगी मेरी,
प्रभु सों निषाद ह्वै कै वाद न बढ़ाइहौं।
'तुलसी' के ईस राम रावरे सों साँची कहौं,
बिना पग धोये नाथ नाव न चढ़ाइहौं॥१३॥

पुर तें निकसी रघुबीर बधू; धरि धीर दये मग में डग द्वै।
झलकीं भरि भाल कनी जल की, पट सूखि गये मधुराधर वै॥

फिरि बूझति हैं 'चलनो अब केतिक, पर्णकुटी करिहौ कितह्वै' ?
तियकी लखि आतुरता पियकी, अँखियाँ अति चारुचलीजलच्वै ॥१४॥

जल को गये लक्खन हैं लरिका, परिखौ, पिय ! छाँह घरीकिह्वै ठाढ़े ।
पोंछि पसेउ बयारि करौं, अरु पाँयँ पखारिहौं भूभुरि डाढ़े ॥
'तुलसी' रघुबीर प्रिया स्रम जानि कै बैठि बिलंब लौं कंटक काढ़े ।
जानकीनाह को नेह लख्यौ पुलको तनु बारि बिलोचन बाढ़े ॥१५॥

रानी मैं जानी अजानी महा, पवि पाहन हूँ तें कठोर हियो है ।
राजहु काज अकाज न जान्यो, कह्यो तिय को जिन कान कियो है ॥
ऐसी मनोहर मूरति ये, बिछुरे कैसे प्रीतम लोग जियो है ।
आँखिन में, सखि ! राखिबे जोग, इन्हैं किमि कै बनवास दियो है ॥१६॥

सीस जटा, उर बाहु बिसाल, बिलोचन लाल तिरीछी सो भौंहैं ।
तून सरासन बान धरे, 'तुलसी' बन-मारग में सुठि सोहैं ॥
सादर बारहिंबार सुभाय चितै तुम त्यों हमरो मन मोहैं ।
पूछति ग्राम बधू सिय सों "कहौ सांवरे से, सखि रावरे को हैं" ॥१७॥

सुनि सुंदर बैन सुधारस-साने, सयानी है जानकी जानी भली ।
तिरछे करि नैन, दै सैन तिन्हैं समझाइ कछू मुसुकाइ चली ॥
'तुलसी' तेहि औसर सोहैं सबै अवलोकति लोचन लाहु अली ।
अनुराग-तड़ाग में भानु उदै बिगसीं मनो मंजुल कंज-कली ॥१८॥

———

बासव बरुन बिधि बन तें सुहावनो,
दसानन को कानन बसन्त को सिंगारु सो ।

समय पुराने पात परत, डरत बात,
पालत, लालत रति मार को विहारु सो ॥
देखे बर बापिका तड़ाग बाग को बनाव,
रागवस भो बिरागी पवन कुमारु सो ।
सीय की दसा बिलोक बिटप असोक तर,
'तुलसी' बिलोक्यो सो तिलोक-सोक-सारु सो ॥१९॥

बसन बटोरि बोरि-बोरि तेल तमीचर,
खोरि-खोरि धाइ आइ बाँधत लँगूर हैं ।
तैसो कपि कौतुकी डारात ढीलो गात कै-कै,
लात के अघात सहै जी में कहै 'कूर हैं' ॥
बाल किलकारी कै-कै तारी दै-दे गारी देत,
पाछें लोग बाजत निशान ढोल तूर हैं ।
बालधी बढ़न लागी, ठौर-ठौर दीन्हीं आगि,
बिंध की दवारि, कैधों कोटिसत सूर हैं ॥२०॥

जहाँ तहाँ बुबुक बिलोकि बुबुकारी देत,
जरत निकेत धाओ धाओ लागि आगि रे।
कहाँ तात, मात, भ्रात, भगिनी, भामिनी, भाभी,
छोटे-छोटे छोहरा, अभागे भोरे भागि रे ॥
हाथी छोरो, घोरा छोरो, महिष बृषभ छोरो,
छेरी छोरो, सोवै सो जगाओ जागि जागि रे ।
'तुलसी' बिलोकि अकुलानी जातुधानी कहैं,
"बार बार कह्यो पिय कपि सों न लागि रे" ॥२१॥

हाट, बाट, कोट ओट, अट्टनि, अगार पोरि,
खोरि खोरि दौरि दौरि दीन्हीं अति आगि है।
आरत पुकारत; सँभारत न कोऊ काहू,
ब्याकुल जहाँ सो तहाँ लोग चले भागि है॥
बालधी फिरावै बारबार झहरावै झरैं,
बूँदिया सी लंक पघिलाइ पागि पागि हैं।
'तुलसी' बिलोकि अकुलानी जातुधानी कहैं,
"चित्रहू के कपि सों निसाचर न लागिहै" ॥२२॥

पान पकवान बिधि नाना को, सँधानो सीधो,
बिबिध बिधान धान बरत बखारही।
कनक किरीट कोटि, पलँग, पेटारे, पीठ,
काढ़त कहार, सब जरे भरे भारही॥
प्रबल अनल बाढ़ैं, जहाँ काढ़ैं तहाँ डाढ़ैं,
झपट लपट भरैं भवन भँडारही।
'तुलसी' अगार न पगार न बजार बच्यो,
हाथी हथिसार जरे, घोरे घोरसार ही ॥२३॥

काँपि दसकन्ध तब प्रलय-पयोद बोले,
रावन रजाइ धाइ आके जूथ जोरि के।
कह्यो लंकपति "लंक बरत बुताओ बेगि,
बानर बहाइ मारो महाबारि बोरि कै॥"
"भले नाथ!" नाइ माथ चले पाथ-प्रद नाथ,
बरसैं मुसलधार बार बार घोरि कै।
जीवन तें जागी आगी, चपरि चौगुनी लागी,
'तुलसी' भभरि मेघ भागे मुख मोरि कै ॥२४॥

रावन सो राजरोग बाढ़त बिराट उर,
दिन दिन बिकल सकल सुख-राँक सो।
नाना उपचार करि हारे सुर सिद्ध मुनि,
होत न बिसोक, ओत पावै न मनाक सो॥
राम की रजाय तें रसायनी समीर-सूनु,
उतरि पयोधि पार सोधि सरवाक सो।
जातुधान बुट, पुटपाक लंक जात रूप,
रतन जतन जारि कियो है मृगांक सो॥२५॥

तोसों कहौं दसकंधर रे, रघुनाथ-बिरोध न कीजिय बौरे।
बालि बली खर-दूषन और अनेक गिरे जे जे भीति में दौरे॥
ऐसिय हाल भई तोहिं धौं, नतु लै मिलु सीय चहै सुख जौरे।
राम के रोष न राखि सकैं 'तुलसी' बिधि, श्रीपति, संकर सौरे॥२६॥

हाथिन सो हाथी मारे, घोरे घोरे सों सँहारे,
रथनि सों रथ बिदरनि, बलवान की।
चंचल चपेट चोट चरन चकोट चाहैं,
हहरानी फौजें भहरानी जातुधान की॥
बार बार सेवक-सराहना करत राम,
'तुलसी' सराहै रीति साहेब सुजान की।
लाँबी लूम लसत लपेटि पटकत भट;
देखौ देखौ लषन! लरनि हनुमान की॥२७॥

दबकि दबोरे एक, बारिधि में बोरे एक,
मगन मही में एक गगन उड़ात हैं।

पकरि पछारे कर, चरन उखारे एक,
चीरि फारि डारे, एक मींजि मारे लात हैं ॥
'तुलसी' लखत राम, रावन विबुध, बिधि,
चक्र पानि, चंडीपति, चंडिका सिहात हैं।
बड़े बड़े बानइत बीर बलवान बड़े,
जातुधान जूथन निपाते बात जात हैं ॥२८॥

प्रबल प्रचंड बरिबंड बाहुदंड बीर,
धाये जातुधान हनुमान लियो घेरि कै।
महाबल-पुंज कुंजरारि ज्यों गरजि भट,
जहाँ तहाँ पटके लँगूर फेरि फेरि कै॥
मारे लात, तोरे गात, भागे जात, हाहा खात,
कहैं, 'तुलसीस राखि राम की सौं' टेरि कै।
ठहर ठहर परे कहरि कहरि उठैं,
हहरि हहरि हर सिद्ध हँसे हेरि कै ॥२९॥

कतहुँ बिटप भूधर उपारि परसेन बरक्खत।
कतहुँ बाजि सों बाजि मर्दि गजराज करक्खत॥
चरन चोट चटकन चकोट अरि उर सिर बज्जत॥
बिकट-कटक बिद्दरत बीर बारिद जिमि गज्जत॥
लंगूर लपेटत पटकि भट, 'जयति राम जय, उच्चरत।
तुलसीस पवन-नन्दन अटल जुद्ध क्रुद्ध कौतुक करत ॥३०॥

रीति महराज की नेवाजिये जो माँगनो सो,
दोष-दुख-दारिद-दरिद्र कै कै छोड़िये।

नाम जाको कामतरु देत फल चारि, ताहि,
'तुलसी' बिहाइ कै बबूर रेंड गोड़िये ॥
जाचैं को नरेस देस देस को कलेस करैं ?
दैहै तो प्रसन्न ह्वै बड़ी बड़ाई बोड़िये ॥
कृपापाथनाथ लोकनाथनाथ सीतानाथ,
तजि रघुनाथ हाथ और काहि ओड़िये ? ॥३१॥

सुत, दार, अगार, सखा परिवार बिलोकु महा कुसमाजहि रे ।
सब की ममता तजि कै, समता सजि संत सभा न बिराजहि रे ?
नर देह कहा करि देखु बिचार, बिगारु गँवार न काजहि रे ।
जनि डोलति लोलुप कूकर ज्यों "तुलसी" भजु कोसलराजहि रे ॥३२॥

विषया परनारि, निसा तरुनाई, सु पाइ पर्‌यो अनुरागहि रे ।
जम के पहरू दुख रोग बियोग, बिलोकत हू न बिरागहि रे ॥
ममता बस तैं जब भूलि गयो, भयो भोर, महाभय भागहि रे ।
जरठाइ निसा, रबिकाल उग्यो, अजहूँ जड़ जीव न जागहि रे ॥३३॥

राम है मातु पिता गुरु बंधु औ संगी सखा सुत स्वामी सनेही ।
राम की सौंह, भरोसो है राम को, रंग रँग्यो रुचि राँच्यो न केही ॥
जीयत राम, मुये पुनि राम, सदा रघुनाथहि की गति जेही ।
सोई जियै जग में 'तुलसी', नतु डोलत और मुये धरि देही ॥३४॥

'झूठो है झूठो है झूठो सदा जग' संत कहंत जे अंत लहा है ।
ताको सहै सठ संकट कोटिक, काढ़त दंत करंत हहा है ॥
जानपनी को गुमान बड़ो, 'तुलसी' के बिचार गँवार महा है ।
जानकीजीवन जान न जान्यो तौ जान कहावह जान्यो कहा है ॥३५॥

तिन्ह तें खर सूकर स्वान भले, जड़ताबस ते न कहैं कछुवै ।
'तुलसी' जेहि राम सों नेह नहीं सो सही पशु पूँछ बिखान न द्वै ॥
जननी कत भार मुई दस मास भई किन बांझ, गई किन च्वै ।
जरि जाउ सो जीवन, जानकी नाथ ! जियै जग में तुम्हरो बिनहूं ॥३६॥

काम से रूप, प्रताप दिनेस से, सोम से सील, गनेस से माने ।
हरिचंद से साँचे, बड़े बिधि से, मघवा से महीप बिषै-सुख-साने ॥
सुक से मुनि, सारद से बकता, चिर जीवन लोमस तें अधिकाने ।
ऐसे भये तौ कहा 'तुलसी' जुपै राजिव-लोचन राम न जाने ॥३७॥

झूमत द्वार अनेक मतंग जँजीर जरे मदअंबु चुचाते ।
तीखे तुरंग मनोगति चंचल, पौन के गौनहुँ तें बढ़ि जाते ॥
भीतर चंद्रमुखी अवलोकति, बाहर भूप खरे न समाते ।
ऐसे भये तौ कहा 'तुलसी' जुपै जानकी नाथ के रंग न राते ॥३८॥

राग को न साज, न बिराग जोग जाग जिय,
काया नहिं छोड़ि देत ठाटिबो कुठाट को ।
मनोराज करत अकाज भयो आजु लगि,
चाहै चारु चीर पै लहै न टूक टाक को ।
भयो करतार बड़े कूर को कृपालु, पायो,
नाम प्रेम-पारस हौं लालची बराट को ।
'तुलसी' बनी है राम रावरे बनाये, ना तौ,
धोबी कैसो कूकर न घर को न घाट को ॥३९॥

सब अंग-हीन, सब-साधन-विहीन मन,
बचन मलीन, हीन कुल करतूति हौं ।

बाँध-बल-हीन, भाव-भगति-बिहीन, हीन,
गुन, ज्ञानहीन, हीन भागहू बिभूति हौं ॥
'तुलसी' गरीब की गई-बहोर रामनाम,
जाहि जपि जीह रामहू को बैठो धूति हौं ॥
प्रीति रामनाम सों प्रतीति रामनाम की,
प्रसाद रामनाम के पसारि पाँय सूतिहौं ॥४०॥

जायो कुल मंगन, बधायो न बजायो सुनि,
भयो परिताप पाप जननी जनक को।
बारे तें ललात बिललात द्वार द्वार दीन,
जानत हौं चारि फल चारि ही चनक को ॥
'तुलसी' सो साहब समर्थ को सुसेवक है,
सुनत सिहात सोच बिधि हू गनक को।
नाम, राम ! रावरो सयानो किधौं बावरो,
जो करत गिरी तें गरु तृन तें तनक को ॥४१॥

न मिटै भव संकट दुर्घट है, तप तीरथ जन्म अनेक अटो।
कलि में न बिराग न ज्ञान कहूँ, सब लागत फोकट झूठ जटो ॥
नट ज्यों जनि पेट-कुपेटक कोटिक चेटक कौतुक ठाट ठटो।
'तुलसी' जो सदा सुख चाहिय तौ रसना निसिबासर राम रटो ॥४२॥

राम बिहाय 'मरा' जपते बिगरी सुधरी कबि-कोकिल हू की।
नामहि तें गज की, गनिका की, अजामिल की चलिगै चल-चूकी ॥
नाम-प्रताप बड़े कुसमाज बजाइ रही पति पांडु बधू की।
ताको भलो अजहूँ 'तुलसी' जेहि प्रीति प्रतीति है आखर दू की ॥४३॥

भागीरथी जलपान करौं अरु नाम द्वै राम के लेत नितैहौं।
मोको न लेनो न देनो कछू कलि ! भूलि न रावरी ओर चितैहौं ॥
जानि कै जोर करौ परिनाम, तुम्है पछितैहौ पै मैं न भितैहौं।
ब्राह्मन ज्यों उगिल्यो उरगारि, हौं त्योंही तिहारे हिये न हितैहौं ॥४४॥

धूत कहौ, अवधूत कहौ, रजपूत कहौ, जोलहा कहौ कोऊ।
काहूकी बेटी सों बेटा न ब्याहब, काहू की जाति बिगारौं न सोऊ ॥
'तुलसी' सरनाम गुलाम है राम को, जाको रुचै सो कहो कछु कोऊ।
माँगिकै खैबो मसीत को सोइबो, लैबो को एक न दैबे को दोऊ ॥४५॥

बेष बिराग को, राग भरो मनु माय ! कहौं सतिभाव हौं तोसों।
तेरे ही नाथ को नाम लै बेचिहौं पातकी पामर प्राननि पोसों ॥
एते बड़े अपराधी अघी कहुँ, तैं कहु अंब ! को मेरो तू मोसों।
स्वारथ को परमारथ को, परिपूरन भो फिरि घाटि न होसों ॥४६॥

जहाँ बालमीकि भये ब्याध ते मुनींद्र साधु,
'मरा मरा' जपे सुनि सिय ऋषि सात की।
सीय को निवास लव-कुस को जनम थल,
'तुलसी' छुवत छाँह ताप गरै गात की ॥
बिटप-महीप सुर सरित समीप सोहै,
सीतावट पेखत पुनीत होत पातकी।
बारिपुर दिगपुर बीच बिलसति भूमि,
अंकित जो जानकी-चरन-जलजात की ॥४७॥

देव कहैं अपनी अपना अवलोकन तीरथ-राज चलो रे।
देखि मिटैं अपराध अगाध, निमज्जत साधु समाज भलो रे ॥
सोहै सितासित को मिलिबो 'तुलसी' हुलसै हिय हेरि हलोरे।
मानो हरे तृन चारु चरैं बगरे सुरधेनु के धौल कलोरे ॥४८॥

देवनदी कहँ जो जन जान किये मनसा, कुल कोटि उधारे।
देखि चले, झगरैं सुरनारि, सुरेस बनाइ बिमान सँवारे॥
पूजा को साज बिरंचि रचैं, 'तुलसी' जे महातम जाननहारे।
ओक की नींव परी हरिलोक बिलोकत गंग तरंग तिहारे॥४९॥

बारि तिहारो निहारि, मुरारि भये परसे पद पाप लहौंगो।
ईस ह्वै सीस धरौं पै डरौं, प्रभु की समता बड़ दोष दहौंगो॥
बरु बारहिं बार सरीर धरौं, रघुबीर को ह्वै तव तीर रहौंगो।
भागीरथी! बिनवौं कर जोरि, बहोरि न खोरि लगै सो कहौंगो॥५०॥

जहाँ बन पावनो, सुहावनो बिहङ्ग मृग,
देखि अति लागत आनन्द खेत खूंट सो॥
सीता रामलषन निवास, बास मुनिन को,
सिद्ध साधु साधक सबै विवेक बूंट सो॥
झरना झरत झारि सीतल पुनीत बारि,
मंदाकिनी मंजुल महेस जटाजूट सो॥
'तुलसी' जौ राम सों सनेह साँचो चाहिये,
तौ सेइये सनेह सों बिचित्र चित्रकूट सो॥५१॥

लालची ललात, बिललात द्वार द्वार दीन,
बदन मलीन, मन मिटै न बिसूरना।
ताकत सराध, कै विवाह, कै उछाह कछू,
डोलै लोल बूझत सबद ढोल तूरना॥
प्यासे हू न पावै बारि, भूखे न चनक चारि,
चाहत अहारन पहार, दारि कूरना।
सोक को अगार दुख-भार-भरो तौलौं जन;
जौलौं देवी द्रवै न भवानी अन्नपूरना॥५२॥

पिंगल जटा कलाप, माथे पै पुनीत आप,
पावक नैना, प्रताप भ्रू पर बरत हैं।
लोचन बिसाल लाल, सोहै बालचन्द्र भाल,
कंठ काल-कूट, ब्याल भूषन धरत हैं॥
सुन्दर दिगम्बर बिभूति गात, भाँग खात,
रूरे सृंगी पूरे काल-कंटक हरत हैं।
देत न अघात, रीझि जात पात आक ही के,
भोलानाथ जोगी जब औढर ढरत हैं॥५३॥

लोकबेद हू बिदित बारानसी की बड़ाई,
बासी नरनारि ईस-अंबिका-सरूप हैं।
कालनाथ कोतवाल, दंड-कारि दंड पानि,
सभासद गनप से अमित अनूप हैं॥
तहाँऊ कुचालि कलिकाल की कुरीति, कैधौं,
जानत न मूढ़, इहाँ भूतनाथ भूप हैं।
फलैं फूलैं फैलैं खल, सीदैं साधु पल पल,
खाती दीपमालिका, ठठाइयत सूप हैं॥५४॥

संकर-सहर सर, नर नारि बारिचर,
बिकल सकल महामारी माँजा भई है।
उछरत उतरात हहरात मरि जात,
भभरि भगत, जल-थल मीचुमई है।
देव न दयालु, महिपाल न कृपालु चित,
बारानसी बाढ़ति अनीति नित नई है।
पाहि रघुराज, पाहि कपिराज राम दूत,
रामहू की बिगरी तुहीं सुधारि लई है॥५५॥

एक तो कराल कलिकाल सूल-मूल तामें,
कोढ़ में की खाजु सो सनीचरी है मीन की।
वेद-धर्म दूरि गये, भूमि-चोर भूप भये,
साधु सीद्यमान, जानि रीति पाप-पीन की॥
दूबरे को दूसरो न द्वार, राम दयाधाम!
रावरी ही गति बल-विभव-बिहीन की।
लागैगी पै लाज वा बिराजमान बिरुदहिं,
महाराज आजु जौ न देत दादि दीन की॥४४॥

रामनाम मातु-पितु, स्वामि, समरथ हितु,
आस राम-नाम की, भरोसो रामनाम को।
प्रेम रामनाम हीं सो, नेम रामनाम हीं को,
जानौं न मरम पद दाहिनो न बाम को॥
स्वारथ सकल, परमारथ को रामनाम,
रामनाम-हीन 'तुलसी' न काहू काम को।
राम की सपथ, सरबस मेरे रामनाम,
कामधेनु कामतरु मो-से-छीन-छाम को॥४५॥

गीतावली

आजु सुदिन सुभ घरी सुहाई।
रूप-सील-गुन-धाम राम नृप-भवन प्रगट भये आई ॥१॥
अति पुनीत मधुमास, लगन-ग्रह-बार-जोग समुदाई।
हरषवंत चर-अचर, भूमि सुर-तनरुह पुलक जनाई ॥२॥
बरषहिं बिबुध-निकर कुसुमावलि, नभ दुंदुभी बजाई।
कौसल्यादि मातु मन हरषित, यह सुख बरनि न जाई ॥३॥
सुनि दसरथ सुत जनम लिये सब गुरुजन बिप्र बोलाई।
बेद-बिहित करि क्रिया परम सुचि, आनँद उर न समाई ॥४॥

या सिसु के गुन-नाम-बड़ाई।
को कहि सकै, सुनहु नरपति, श्रीपति समान प्रभुताई ॥१॥
जद्यपि बुधि, वय, रूप, सील, गुन समय चारु चर्‍यो भाई।
तदपि लोक-लोचन-चकोर-ससि राम भगत सुखदाई ॥२॥
सुर, नर, मुनि करि अभय, दनुज हति, हरहि धरनि गरुआई।
कीरति बिमल बिस्व-अघमोचनि, रहिहि सकल जग छाई ॥३॥
या के चरन-सरोज कपट तजि जे भजि हैं मन लाई।
ते कुल जुगल सहित तरिहैं भव, यह न कछू अधिकाई ॥४॥
सुनि गुरु बचन, पुलक तन दंपति, हरष न हृदय समाई।
तुलसिदास अवलोकि मातु-मुख प्रभु मन में मुसुकाई ॥५॥

ललित सुतहि लालति सचु पाये।
कौसल्या कल कनक अजिर महँ सिखवति चलन अँगुरिया लाये ॥१॥

कटि किंकिनी, पैंजनी पाँयनि बाजति रुनझुन मधुर रेंगाये ।
पहुँची करनि, कंठ कठुला बन्यो केहरि नख मनि-जरित जराये ॥१॥
पीत पुनीत बिचित्र झँगुलिया सोहत स्याम सरीर सोहाये ।
दँतियाँ द्वै द्वै मनोहर मुख छबि, अरुन अधर चित लेत चोराये ॥३॥
चिबुक कपोल नासिका सुन्दर, भाल तिलक मसि बिंदु बनाये ।
राजत नयन मंजु अंजन जुत खंजन कंज मीन मद नाये ॥४॥
लटकन चारु भ्रकुटिया टेढ़ी, मेढ़ी सुभग सुदेस सुभाये ।
किलकि किलकि नाचत चुटकी सुनि, डरपति जननि पानि छुटकाये ॥५॥
गिरि घुटुरुवनि टेकि उठि अनुजनि तोतरि बोलत पूप देखाये ।
बाल-केलि अवलोकि मातु सब मुदित मगन आनँद न अमाये ॥६॥
देखत नभ घन-ओट चरित मुनि जोग समाधि बिरत बिसराये ।
तुलसिदास जे रसिक न यहि रस ते नर जड़ जीवत जग जाये ॥७॥

बिहरत अवध-बीथिन राम ।
संग अनुज अनेक सिसु, नव-नील-नीरद-स्याम ॥१॥
तरुन अरुन-सरोज-पद बनो कनकमय पदत्रान ।
पीत-पट कटि तून बर, कर ललित लघु धनु-बान ॥२॥
लोचननि को लहत फल छबि निरखि पुर-नर-नारि ।
बसत तुलसीदास उर अवधेस के सुत चारि ॥३॥

छोटी ऐ धनुहियाँ पनहियाँ पगन छोटी,
छोटि ऐ कछौटी छोटि ऐ तरकसी ।
लसत झँगूली झीनी, दामिनि की छबि छीनी,
सुंदर बदन, सिर पगिया जरकसी ॥१॥

बय-अनुहरत बिभूषन बिचित्र अंग,
जोहे जिय आवति सनेह की सरकसी।
मूरति की सूरति कही न परै तुलसी पै,
जानै सोई जाके उर कसकै करकसी ॥२॥

आजु सकल सुकृत फलु पाइहौं।
सुख की सींव, अवधि आनंद की, अवध बिलोकिहौं पाइहौं ॥१॥
सुतनि सहित दसरथहि देखिहौं, प्रेम पुलकि उर लाइहौं।
रामचन्द्र-मुखचन्द्र छबि नयन-चकोरनि प्याइहौं ॥२॥
सादर समाचार नृप बूझिहैं, हौं सब कथा सुनाइहौं।
तुलसी ह्वै कृतकृत्य आश्रमहिं रामलषन लै आइहौं ॥३॥

रामपद-पदुम-पराग परी।
ऋषि तिय तुरत त्यागि पाहन-तनु छबियम देह धरी ॥१॥
प्रबल पाप पति-साप दुसह दव दारुन जरनि जरी।
कृपा सुधा सिंचि बिबुध-बेलि-ज्यों फिरि सुख-फरनि फरी ॥२॥
निगम-अगम मूरति महेस मति-जुबति बराय बरी।
सोइ मूरति भइ जानि नयनपथ इकटक तें न टरी ॥३॥
बरनति हृदय सरूप, सील, गुन प्रेम-प्रमोद-भरी।
तुलसिदास अस केहि आरत की आरति प्रभु न हरी ॥४॥

रहहु भवन हमरे कहे, कामिनि !
सादर सासु चरन सेवहु नित, जो तुम्हरे अतिहित, गृहस्वामिनि ॥१॥
राजकुमारि! कठिन कंटक मग, क्यों चलिहौ मृदु पद गजगामिनि।
दुसह बात, बरषा, हिम आतप कैसे सहिहौ अगनित दिन जामिनि ॥२॥

हौं पुनि पितु-आग्या प्रमान करि ऐहौं बेगि सुनहु दुति दामिनि ।
तुलसिदास प्रभु-बिरह-बचन सुनि सहि न सकी मुरछित भइ भामिनि ॥३॥

चित्रकूट अति बिचित्र, सुंदर बन, महि पवित्र,
पावनि पय-सरित सकल मल-निकंदिनी ।
सानुज जहँ बसत राम, लोक-लोचनाभिराम,
बाम अंग बामाबर बिस्व-बंदिनी ॥१॥
रिषिवर तहँ छंद बास, गावत कल कोकिल हास,
कीर्तन उनमाय काय क्रोध-कंदिनी ।
बर बिधान करत गान, वारत धन-मान-प्रान,
झरना झरत झिंग झिँग झिँग जल तरंगिनी ॥२॥
बर बिहारु चरन चारु पाँडर चंपक चनार,
करनहार बार पार पुर-पुरंगिनी ।
जोबन नव ढारत ढार दुत्त मत्त मृग मराल
मंजु मंजु गुंजत हैं अलि अलिंगिनी ॥३॥
चितवत मुनिगन चकोर, बैठे निज ठौर ठौर,
अच्छय अकलंक सरद-चंद-चंदिनी ।
उदित-सदा-बन-अकाश, मुदित बदत तुलसिदास,
जय जय रघुनंदन जय जनकनंदिनी ॥४॥

सब दिन चित्रकूट नीको लागत ।
बरषा ऋतु प्रबेश बिसेष गिरि देखन मन अनुरागत ॥१॥
चहुँदिसि बन संपन्न, बिहँग-मृग बोलत सोभा पावत ।
जनु सुन रेस देस-पुर प्रमुदित प्रजा सकल सुख छावत ॥२॥
सोहत स्याम जलद मृदु घोरत धातु रँगमगे सृंगनि ।
मनहु आदि अंभोज बिराजत सेवित सुर-मुनि-भृंगनि ॥३॥

सिखर परस-घन घटहि, मिलति बग-पाँति सो छबि कबि बरनी ।
आदि बराह बिहरि बारिधि मनो उठ्यो है दसन धरि धरनी ॥४॥
जल-जुत बिमल सिलनि झलकत नभ-बन-प्रतिबिंब तरंग ।
मानहु जग-रचना बिचित्र बिलसति बिराट अँग अंग ॥५॥
मंदाकिनिहि मिलत झरना झरि झरि भरि भरि जल आछे ।
तुलसी सकल सुकृत-सुख लागे मानौ राम-भगति के पाछे ॥६॥

जननी निरखति बान-धनुहियाँ ।
बार बार उन-नैननि लावति प्रभु जू की ललित पनहियाँ ॥१॥
कबहुँ प्रथम ज्यों जाइ जगावति कहि प्रिय बचन सबारे ।
उठहु तात ! बलि मातु बदन पर, अनुज-सखा सब द्वारे ॥२॥
कबहुँ कहति यों, बड़ी बार भइ, जाहु भूप पहँ, भैया ।
बंधु बोलि जेंइय जो भावै, गई निछावरि धैया ॥३॥
कबहुँ समुझि बन गवन राम को रहि चकि चित्र लिखी-सी ।
तुलसिदास वह समय कहेतें लागति प्रीति सिखी-सी ॥४॥

जब जब भवन बिलोकति सूनो ।
तब तब बिकल होति कौसल्या दिन दिन प्रतिदुख दूनो ॥
सुमिरत बाल-विनोद राम के सुंदर मुनि-मन-हारी ।
होत हृदय अति सूल समुझि पद-पंकज अजिर-बिहारी ॥
को अब प्रात कलेऊ माँगत रूठि चलैगो, माई !
स्याम-तामरस नैन स्रवत जल काहि लेउँ उर लाई ॥
जीवौं तौ बिपति सहौं निसि बासर मरौं तौ मन पछितायो ।
चलत बिपिन भरि नयन राम को बदन न देखन पायो ॥
'तुलसिदास' यह दुसह दसा अति, दारुन बिरह घनेरो ।
दूरि करै को भूरि कृपा बिनु सोक-जनित रुज मेरो !

ऐसे तैं क्यों कटु बचन कह्यो री ?
'राम जाहु कानन' कठोर तेरो कैसे धौं हृदय रह्यो री ॥१॥
दिनकर-बंस, पिता दसरथ-से, राम-लषन से भाई।
जननी ! तू जननी ? तौ कहा कहौं, बिधि केहि खोरि न लाई ॥२॥
हौं लहिहौं सुख राजमात ह्वै, सुत सिर छत्र धरैगो।
कुल-कलंक मल-मूल मनोरथ तव बिनु कौन करैगो ? ॥३॥
ऐहैं राम, सुखी सब ह्वैहैं, ईस अजस मेरो हरिहैं।
तुलसिदास मोको बड़ो सोच है, तू जनम कौन बिधि भरिहैं ॥४॥

बिलोके दूर तें दोउ बीर।
उर आयत, आजानु सुभग भुज, स्यामल गौर शरीर ॥
सीस जटा, सरसीरुह लोचन, बने परिधन मुनि चीर।
निकट निषंग, संग सिय सोभित, करनि धुनत धनु तीर ॥
मन अगहुँड़ तनु पुलक सिथिल भयो, नलिन नयन भरे नीर।
गड़त गोड़ मानों सकुच-पंक महँ, कढ़त प्रेम-बलधीर ॥
'तुलसिदास' दसा देख भरत की उठि धाये अतिहि अधीर।
लिये उठाइ उर लाइ कृपानिधि बिरह-जनित हरि पीर ॥

जब तें चित्रकूट तें आये।
नंदिग्राम खनि अवनि, डासि कुस, परनकुटी करि छाए ॥१॥
अजिन बसन, फल असन, जटा धरे रहत अवधि चित दीन्हें।
प्रभु-पद-प्रेम-नेम-ब्रत निरखत मुनिन्ह नमित मुख कीन्हें ॥२॥
सिंहासन पर पूजि पादुका बारहिबार जोहारे।
प्रभु-अनुराग माँगि आयसु पुरजन सब काज सँवारे ॥३॥
तुलसी ज्यों ज्यों घटत तेज तनु, त्यौं त्यौं प्रीति अधिकाई।
भये, न हैं, न होहिंगे कबहूँ भुवन भरत-से भाई ॥४॥

आली ! हौं इन्हहिं बुझावौं कैसे ?
लेत हिये भरि भरि पति को हित, मातु हेतु सुत जैसे ॥१॥
बार बार हिहिनात हेरि उत, जो बोलै कोउ द्वारे।
अंग लगाइ लिये बारे तें करुनामय सुत प्यारे ॥२॥
लोचन सजल, सदा सोवत-से, खान पान बिसराये।
चितवत चौंकि नाम सुनि, सोचत राम-सुरति उर आये ॥३॥
तुलसी प्रभु के बिरह-बधिक हठि राजहंस-से जोरे।
ऐसेहु दुखित देखि हौं जीवति राम-लखन के घोरे ॥४॥

राघौ एक बार फिरि आवौ।
ये बर बर बाजि बिलोकि आपने बहुरो बनहिं सिधावौ ॥
जे पय प्याइ पोखि कर-पंकज बार बार चुचुकारे।
ज्यों जीवहिं मेरे राम लाड़िले ! ते अब निपट बिसारे ॥
भरत सौगुनी सार करत हैं अति प्रिय जानि तिहारे।
तदपि दिनहिं दिन होत झाँवरे मनहुँ कमल हिम मारे ॥
सुनहु पथिक, जो राम मिलहिं बन कहियो मातु सँदेसो।
'तुलसी' मोहिं और सबहिन तें इन्हको बड़ो अँदेसो ॥

राघौ गीध गोद करि लीन्हों।
नयन-सरोज सनेह सलिल सुचि मनहु अरघ जल दीन्हों ॥१॥
सुनहु, लषन ! खगपतिहि मिले बन मैं पितु-मरन न जान्यौ।
सहि न सक्यौ सो कठिन बिधाता, बड़ो पछु आजुहि भान्यौ ॥२॥
बहु बिधि राम कह्यौ तनु राखन, परम धीर नहिं डोल्यौ।
रोकि प्रेम, अवलोकि बदन बिधु, बचन मनोहर बोल्यौ ॥३॥
तुलसी प्रभु झूठे जीवन लगि समय न धोखो लैहौं।
जाको नाम मरत मुनि दुरलभ तुमहि कहाँ पुनि पैहौं ॥४॥

प्रेम-पट पाँवड़े देत, सुअरघ बिलोचन-बारि।
आस्रम लै दिये आसन पंकज-पाँय पखारि॥
पद-पंकजात पखारि पूजे, पंथ-श्रम-बिरहित भये।
फल फूल अंकुर-मूल धरे सुधारि भरि दोना नये॥
प्रभु खात पुलकित गात, स्वाद सराहि आदर जनु जये।
फल चारिहू फल चारि दहि, परचारि-फल सबरी दये॥१॥

सुमन बरषि हरषे सुर, मुनि मुदित सराहि सिहात।
केहि रुच केहि छुधा सानुज माँगि माँगि प्रभु खात॥
प्रभु खात माँगत, देति सबरी, राम भोगी जात के।
पुलकत प्रसंसत सिद्ध-सिव-सनकादि भाजन भाग के॥
बालक सुमित्रा कौसिला के पाहुने फल-साग के।
सुनि समुझि तुलसी जान रामहिं बस अमल अनुराग के॥

कबहूँ, कपि! राघव आवहिंगे?
मेरे नयन चकोर प्रीतिबस राका ससि मुख दिखरावहिंगे॥१॥
मधुप, मराल, मोर, चातक ह्वै लोचन बहु प्रकार धावहिंगे।
अंग अंग छबि भिन्न भिन्न सुख निरखि निरखि तहँ तहँ छावहिंगे॥२॥
बिरह-अगिनि जरि रही लता ज्यों, कृपादृष्टि जल पलुहावहिंगे।
निज बियोग-दुख जानि दयानिधि मधुर बचन कहिं समुझावहिंगे॥३॥
लोकपाल, सुर, नाग, मनुज सब परे बन्दि कब मुकतावहिंगे।
रावन बध रघुनाथ-बिमल-जस नारदादि मुनिजन गावहिंगे॥४॥
यह अभिलाष रैन दिन मेरे, राज बिभीषन कब पावहिंगे।
तुलसिदास प्रभु मोह जनित भ्रम, भेद बुद्धि कब बिसरावहिंगे॥ ॥

रावन ! जु पै राम रन रोषे ।
को सहि सकै सुरासुर समरथ, बिसिष काल-दसननि तें चोषे ॥१॥
तपबल, भुजबल, कै सनेह-बल सिव-बिरंचि नीकी बिधि तोषे ।
सो फल राज समाज-सुवन-जन आपुन नास आपने पोषे ॥२॥
तुला पिनाक, साहु, नृप, त्रिभुवन भट बटोरि सब के बल जोषे ।
परसुराम-से सूर-सिरोमनि पल में भये खेत के धोषे ॥३॥
कालि की बात बालि की सुधि करि समुझि हिताहित खोलि झरोखे ।
कह्यो कुमंत्रिन को न मानिये, बड़ी हानि, जिय जानि त्रिदोषे ॥४॥
जासु प्रसाद जनमि जग पुरषनि सागर सृजे, खने अरु सोखे ।
तुलसिदास सो स्वामि न सूझ्यो, नयन बीस मंदिर के-से मोखे ॥५॥

तुम्हरे बिरह भई गति जौन ।
चित दै सुनहु, राम करुनानिधि ! जानौं कछु, पै सकौं कहिहौं न॥१॥
लोचन-नीर कृपिन के धन ज्यों रहत निरन्तर लोचनन-कोन ।
'ह' धुनि-खगी लाज पिंजरी महँ राखि हिये बड़े बधिक हठि मौन ॥२॥
जेहि बाटिका बसति, तहँ खग-मृग तजि तजि भजे पुरातन भौन ।
स्वास-समीर भेंट भइ भोरेहु, तेहि मग पगु न धर्‌यो तिहु पौन ॥३॥
तुलसिदास प्रभु ! दसा साय की मुख करि कहत होति अतिगौन ।
दीजै दरस, दूरि कीजे दुख, हौ तुम्ह आरत-आरति-दौन ॥४॥

पदपदुम गरीबनिवाज के ।
देखिहौं जाइ पाइ लोचन-फल हित सुर-साधु-समाज के ॥१॥
गई बहोर, ओर निरबाहक, साजक बिगरे साज के ।
सबरी-सुखद, गीध गतिदायक, समन सोक कपिराज के ॥२॥
नाहिन मोहिं और कतहू कछु, जैसे काग जहाज के ।
आयो सरन सुखद पदपंकज चोंथे रावन बाज के ॥३॥

आरतिहरन सरन, समरथ सब दिन अपने की लाज के।
तुलसी 'पाहि' कहत नत-पालक मोहु से निपट निकाज के ॥४॥

गये राम सरन सबको भलो।
गनो-गरीब, बड़ो छोटो, बुध-मूढ़, हीन बल-अति बलो ॥१॥
पंगु-अंध, निरगुनी-निसंबल, जो न लहै जाँचे जलो।
सो निबह्यो नीके, जो जनमि जग राम-राजमारग चलो ॥२॥
नाम-प्रताप-दिवाकर-कर खर गरत तुहिन ज्यों कलिमलो।
सुत हित नाम लेत भवनिधि तरि गयो अजामिल-सो खलो ॥३॥
प्रभुपद प्रेम प्रनाम-कामतरु सद्य बिभीषन को फलो।
तुलसी सुमिरत नाम सबनि को मंगलमय नभ जल थलो ॥४॥

मेरो सब पुरुषारथ थाको।
बिपति बँटावन बंधु बाहु बिनु करौं भरोसो काको ॥१॥
सुनु, सुग्रीव! साँचेहू मोपर फेर्‌यो बदन बिधाता।
ऐसे समय समर-संकट हौं तज्यो लखन सो भ्राता ॥२॥
गिरि, कानन जैहैं साखामृग, हौं पुनि अनुज सँघाती।
ह्वैहै कहा बिभीषन की गति, रही सोच भरि छाती ॥३॥
तुलसी सुनि प्रभु-बचन भालु कपि सकल बिकल हिय हारे।
जामवंत अनुमंत बोलि तब, औसर जानि प्रचारे ॥४॥

जौ हौं अब अनुसासन पावौं।
तौ चंद्रमहिं निचोरि चैल-ज्यौं, आनि सुधा सिर नावौं ॥१॥
कै पाताल दलौं ब्यालावलि, अमृत-कुंड महि लावौं।
भेदि भुवन, करि भानु बाहिरो तुरत राहु दै तावौं ॥२॥

बिबुध-बैद बरबस आनौं धरि, तौ प्रभु-अनुग कहावौं।
पटकौं मीच नीच मूषक ज्यों, सबहिं को पापु बहावौं ॥३॥
तुम्हरिहि कृपा, प्रताप तिहारेहि नेकु बिलंब न लावौं।
दीजै सोइ आयसु तुलसी-प्रभु, जेहि तुमरें मन भावौं ॥४॥

होतो नहिं जौ जग जनम भरत को।
तौ, कपि कहत, कृपान-धार मग चलि आचरत बरत को? ॥१॥
धीरज धरम धरनिधर-धुरहू तें गुर धुर धरनि धरत को?
सब सदगुन सनमानि आनि उर, अघ-औगुन निदरत को? ॥२॥
सिवहु न सुगम सनेह रामपद सुजननि सुलभ करत को?
सृजि निज जस-सुरतरु तुलसी कहँ, अभिमत फरनि फरत को॥३॥

बैठी सगुन मनावति माता।
कब ऐहैं मेरे बाल कुसल घर, कहहु, काग! फुरि बाता ॥१॥
दूध-भात की दोनी दैहौं, सोने चोंच मढ़ैहौं।
जब सिय सहित बिलोकि नयन भरि राम-लषन उर लैहौं ॥२॥
अवधि समीप जानि जननी जिय अति आतुर अकुलानी।
गनक बोलाइ, पाँय परि पूछति प्रेम मगन मृदुबानी ॥३॥
तेहि अवसर कोउ भरत निकट तें समाचार लै आयो।
प्रभु-आगमन सुनत तुलसी मनो मीन मरत जल पायो ॥४॥

——

बन तें आइकै राजा राम भये भुआल।
मुदित चौदउ भुवन, सब सुख सुखी सब सब काल ॥१॥
मिटे कलुष कलेस-कुलषन, कपट-कुपथ-कुचाल।
गये दारिद, दोष दारुन, दंभ दुरित-दुकाल ॥२॥

कामधुक महि, कामतरु तरू, उपल मनिगन लाल ।
नारि नर तेहि समय सुकृती, भरे भाग सुभाल ॥३॥
बरन - आस्रम - धरमरत, मन बचन बेष मराल ।
राम - सिय - सेवक - सनेही, साधु, सुमुख, रसाल ॥४॥
राम - राज - समाज बरनत सिद्ध - सुर दिगपाल ।
सुमिरि सो तुलसी अजहु हिय हरष होत बिसाल ॥५॥

साँझ समय रघुबीर - पुरी की सोभा आजु बनी ।
ललित दीपमालिका बिलोकहिं हितकर अवध धनी ॥१॥
फटिक - भीत - सिखरन पर राजति कंचन - दीप - अनी ।
जनु अहिनाथ मिलन आयो मनि - सोभित सहसफनी ॥२॥
प्रति मंदिर कलसन पर भ्राजहिं मनि गनि दुति अपनी ।
मानहु प्रगटि बिपुल लोहितपुर पठइ दियं अवनी ॥३॥
घर घर मंगलचार एक रस हरषित रंक - गनी ।
तुलसिदास कल कीरति गावहिं, जो कलिमल समनी ॥४॥

बालक सीय के बिहरत मुदित मन दोउ भाइ ।
नाम लव कुश राम सिय अनुहरति सुन्दरताइ ॥१॥
देत मुनि मुनि - सिसु खेलौना, ते लै धरत दुराइ ।
खेल खेलत नृप सिसुन्ह के बाल बृन्द बोलाइ ॥२॥
भूष - भूषन - बसन - बाहन, राज - साज सजाइ ।
बरन चरम, कृपान सर, धनु-तून लेत बनाइ ॥३॥
दुखी सिय पिय - बिरह तुलसी, सुखी सुत सुख पाय ।
आँच पय उफनात, सींचत सलिल ज्यों सकुचाय ॥४॥

रघुनाथ तुम्हारे चरित मनोहर गावहिं सकल अवधबासी ।
अति उदार अवतार मनुज - बपु धरे ब्रह्म अज अबिनासी ॥१॥
प्रथम ताड़का हति, सुबाहु बधि, मख राख्यो द्विज-हितकारी ।
देखि दुखी अति सिला सापबस रघुपति बिप्र नारि तारी ॥२॥
सब भूपन को गरब हर्‌यो, भंज्यो संभु चाप भारी ।
जनकसुता समेत आवत गृह परसुराम अति मदहारी ॥३॥
तात-बचन तजि राजकाज सुर चित्रकूट मुनिबेष धर्‌यो ।
एक नयन कीन्हों सुरपति सुत, बधि बिराध रिषि-सोक हर्‌यो॥४॥
पंचवटी पावन राघव करि सूपनखा कुरूप कीन्हीं ।
खर दूषन संहारि कपट मृग - गीधराज कहँ गति दीन्हीं ॥५॥
हति कबंध, सुग्रीव सखा करि, बेधे ताल, बालि मार्‌यो ।
बानर रीछ सहाय, अनुज सँग, सिंधु बाँधि जस बिस्तार्‌यो ॥६॥
सकुलपुत्र दल सहित दसानन मारि अखिल सुर दुख टार्‌यो ।
परमसाधु जिय जानि बिभीषन लंकापुरी तिलक सार्‌यो ॥७॥
सीता अरु लछिमन सँग लीन्हें औरहु जिते दास आये ।
नगर निकट बिमान आये, सब नर नारी देखन धाये ॥८॥
सिव - बिरंचि, सुक-नारदादि मुनि अस्तुति करत बिमल बानी ।
चौदह भुवन चराचर हरषित, आये राम राजधानी ॥९॥
मिले भरत, जननी, गुरु, परिजन, चाहत परम अनंद भरे ।
दुसह-बियोग-जनित दारुन दुख रामचरन देखत बिसरे ॥१०॥
बेद पुरान बिचारि लगन सुभ महाराज अभिषेक कियो ।
तुलसिदास जिय जानि सुअवसर भगति-दान तब माँगि लियो ॥११॥

विविध ग्रन्थों से

हनुमानबाहुक

सिन्धु-तरन सिय-सोच-हरन रवि-बाल-बरन तनु ।
भुज बिसाल, मूरति कराल, कालहु को काल जनु ॥
गहन-दहन-निरदहन-लङ्क, निःसंक बंक-भुव ।
जातुधान-बलवान-मान-मद-दवन पवन सुव ॥
कह 'तुलसिदास' सेवत सुलभ, सेवक-हित संतत निकट ।
गुनगनत, नमत, सुमिरत, जपत समनसकल सकट-बिकट॥

दवन-दुवन-दल भुवन बिदित बल,
बेद जस गावत बिबुध-बंदी-छोर को ।
पाप-ताप-तिमिर-तुहिन-बिघटन-पटु,
सेवक-सरोरुह सुखद भानु भोर को ॥
लोक परलोक तें बिसोक, सपने न सोक,
'तुलसी' के हिये है भरोसो एक ओर को ।
रामको दुलारो दास बामदेव को निवास,
नाम कलिकामतरु केसरी-किसोर को ॥

जानत जहान हनुमान को निवाज्यो जन,
मन अनुमानि, बलि, बोल न बिसारिये ।
सेवा-जोग 'तुलसी' कबहुँ ? कहाँ चूक परी,
साहेब सुभाय कपि साहेब सँभारिये ॥

अपराधी जानि कीजै साँसति सहस भाँति,
मोदक मरै जो ताहि माहुर न मारिये।
साहसी समीर के दुलारे रघुबीर जू के,
बाँह पीर महाबीर बेगि ही निवारिये॥

रामगुलाम तुही हनुमान गुसाईं सुसाईं सदा अनुकूलो।
पाल्यो हौं बाल ज्यों आखर दू पितु मातु ज्यों मङ्गल मोद समूलो॥
बाँह की बेदन, बाँह पगार! पुकारत आरत आनँद-भूलो।
श्री रघुबीर निवारिय पीर, रहौं दरबार परो लटि लूलो॥

कहौं हनुमान सों, सुजान रामराय सों,
कृपानिधान संकर सों, सावधान सुनिये।
हरष - विषाद - राग रोष - गुन - दोषमई,
बिरची बिरंचि सब देखियतु दुनिये॥
माया जीव काल के, करम के सुभाय के,
करैया राम, बेद कहैं, साँची मन गुनिये।
तुमतें कहा न होय, हाहा! सो बुझैये मोहिं,
हौंहूँ रहौं मौन ही, बयो सो जानि लुनिये॥

श्रीकृष्ण गीतावली

माता लै उछङ्ग गोबिंद मुख बार बार निरखै।
पुलकित तनु आनंदघन छन छन मन हरषै॥
पूछत तोतरात बात मातहिं जदुराई।
अतिसय सुख जातें तोहि मोहिं कहु समुझाई॥
देखत तव बदन-कमल मन अनंद होई।
कहै कौन रसन मौन जाने कोइ कोई॥

सुंदर मुख मोहिं देखाव, इच्छा अति मोरे।
मम समान पुन्यपुंज बालक नहिं तोरे॥
'तुलसी' प्रभु प्रेमबस्य मनुज-रूपधारी।
बाल केलि लीलारस ब्रज - जन - हितकारी॥

आजु उनीदे आये मुरारी।
आलसवंत सुभग लोचन सखि छिन मूँदत, छिन देत उघारी॥
मनहुँ इन्दु पर खंजरीट दोउ कछुक अरुन बिधि रचे सँवारी।
कुटिल अलक जनु मार फंद कर गहे सजग ह्वै रह्यो सँभारी॥
मनहुँ उड़न चाहत अति चंचल पलक पंख छिन देत पसारी।
नासिक कीर, बचन पिक सुनि करि संगति मनु गुनि रहति बिचारी॥
रुचिर कपोल, चारु कुंडल बर, भ्रकुटि सरासन की अनुहारी।
परम चपल तेहि त्रास मनहुँ खग प्रगटत दुरत न मानत हारी॥
जदुपति मुखछबि कलप कोटि लगि कहि न जाइ जाके मुख चारी।
'तुलसिदास' जेहि निरखि ग्वालिनी भजीं तात पति तनय बिसारी॥

ऊधो या ब्रज की दसा बिचारो।
ता पाछे यह सिद्धि अपनी जोग-कथा बिस्तारो॥
जा कारन पठये तुम माधव सो सोचहु मनमाहीं।
केतिक बीच बिरह परमारथ जानत हौ किधौं नाहीं?॥
परम चतुर निज दास स्याम के संतत निकट रहत हौ।
जल बूड़त अवलंब फेन को फिरि फिरि कहा कहत हौ!॥
वह अति ललित मनोहर आनन कौने जतन बिसारौं।
जोग जुगुति अरु मुकुति बिबिध बिधि वा मुरली पर वारौं॥
जेहि उर बसत स्यामसुन्दर घन तेहि निर्गुन कस आवै।
'तुलसिदास' सो भजन बहावो जाहि दूसरो भावै॥

मधुकर कहहु कहन जो पारो ।
नाहिंन, बलि, अपराध रावरो, सकुचि साध जनि मारो ॥
नहिं तुम ब्रज बसि नंदलाल को बालबिनोद निहारो ।
नाहिंन राम रसिक रस चाख्यो, तातें डेल सो डारो ॥
'तुलसी' जौ न गये प्रीतम सँग प्रान त्यागि तनु न्यारो ।
तौ सुनिबो देखिबो बहुत अब, कहा करम सों चारो ॥

सब मिलि साहस करिय सयानी ।
ब्रज आनियहि मनाइ पाँय परि कान्ह कूबरी रानी ॥
बसैं सुबास, सुपास होहिं सब फिरि गोकुल रजधानी ।
महरि महर जीवहिं सुख-जीवन खुलहिं मोद-मनि खानी ॥
तजि अभिमान अनख अपनो हित कीजिय मुनिबर बानी ।
देखिबो दरस ।दूसरेहु चौथेहु बड़ो लाभ, लघु हानी ॥
पावक परत निषिद्ध लाकरी होति अनल जग जानी ।
'तुलसी' सो तिहुँ भुवन गाइबी नंद सुवन सनमानी ॥

मधुप ! समुझि देखहु मनमाहीं ।
प्रेम पियूष रूप उडुपति बिनु कैसे हौ अलि पैयत रबि पाहीं ॥
जद्यपि तुम हित लागि कहत सुनि स्रवन बचन नहिं हृदय समाहीं ।
मिलहिं न पावक महँ तुषार कन जौं खोजत सत कलप सिराहीं ॥
तुम कहि रहे, हमहुँ पचिहारी, लोचन हठी तजत हठ नाहीं ।
'तुलसिदास' सोइ जतन करहु कछु बारक स्याम इहाँ फिर जाहीं ॥

मोको अब नयन भये रिपु माई ।
हरि-बियोग तनु तजेहि परमसुख ये राखहि सोइ है बरियाई ।

बरु मन कियो बहुत हित मेरो बारहिबार काम दव लाई।
बरषि नीर ये तबहिं बुझावहिं स्वारथ निपुन अधिक चतुराई॥
ज्ञान परसु दै मधुप पठायो बिरह बेलि कैसेहु कठिनाई।
सो थाक्यो बरह्यो एकहि तक देखत इनकी सहज सिंचाई॥
हारत हू न हारि मानत, सखि, सठ सुभाव कंदुक की नाई।
चातक जलज मीनहुँ ते भोरे समुझत नहिं उन्हकी निठुराई॥
ए हठ निरत दरस लालच बस परे जहाँ बुधि बल न बसाई।
'तुलसिदास' इन्ह पर जो द्रवहिं हरि तौ पुनि मिलौं बैरु बिसराई॥

रामाज्ञा-प्रश्न

तुलसी तुलसी राम सिय, सुमिरि लखनु हनुमान।
काजु विचारेहु सो करहु, दिनु दिनु बड़ कल्यान॥

कौसल्या पद नाइ सिरु, सुमिरि सुमित्रा पाय।
करहु काज मंगल कुसल, बिधि हरि संभु सहाय॥

भरत सत्रुसूदन लखन, सहित सुमिरि रघुनाथ।
करहु काज सुभ साज सब, मिलहि सुमंगल साथ॥

बिटप बेलि फूलहिं फलहिं, जल थल बिमल बिसेखि।
मुदित किरात बिहग मृग, मंगल-मूरति देखि॥

सगुन सकल-संकट समन, चित्रकूट चलि जाहु।
सीताराम-प्रसाद सुभ, लघु साधन बड़ लाहु॥

तुलसी सहित सनेह नित, सुमिरहु सीताराम।
सगुन सुमंगल सुभ सदा, आदि मध्य परिनाम॥

सकल काज सुभ समउ भल, सगुन सुमंगल जानु।
कीरति बिजय बिभूति भलि, हिय हनुमानहिं आनु॥

सुमिरि सत्रुसूदन चरन, चलहु करहु सब काज।
सत्रु पराजय निज बिजय, सगुन सुमंगल साज॥

भरत नाम सुमिरत मिटहिं, कपट कलेस कुचालि।
नीति प्रीति परतीति हित, सगुन सुमंगल सालि॥

राम नामु कलि कामतरु, सकल सुमंगल-कंद।
सुमिरत करतल सिद्धि जग, पग-पग परमानन्द॥

सीता चरन प्रनामु करि, सुमिरि सुनामु सनेम।
सुतिय होहिं पतिदेवता, प्राननाथ प्रिय प्रेम॥

लखन ललित मूरति मधुर, सुमिरहु सहित सनेह।
सुख संपति कीरति बिजय, सगुन सुमंगल गेह॥

अनुदिन अवध बधावने, नित नव मंगल मोद।
मुदित मातु पितु लोग लखि, रघुबर बालविनोद॥

ललित लाहु लोने लखनु, लोयन-लाहु निहारि।
सुत ललाम लालहु ललित, लेहु ललकि फल चारि॥

गौतमतिय-तारन चरन-कमल आनि उर देखु।
सकल सुमंगल सिद्धि सब, करतल सगुन बिसेखु॥

रामनाम कलि कामतरु, राम भगति सुर धेनु।
सगुन सुमंगल मूल जग, गुरु-पद-पंकज रेनु॥

सेवक पाल कृपाल चित, रविकुल कैरव चन्द ।
सुमिरि करहु सब काज सुभ, पग पग परमानन्द ॥

रामनाम रति नाम मति, राम नाम बिस्वास ।
सुमिरत सुभ मंगल कुसल, तुलसी तुलसीदास ॥

दसरथ नाम सुकामतरु, फलइ सकल कल्यान ।
धरनि धाम धन धरम सुख, सुत गुन-रूपनिधान ॥

पुरुषारथ स्वारथ सकल, परमारथ परिनाम ।
सुलभ सिद्धि सब सगुन सुभ, सुमिरत सीताराम ॥

पार्वती-मंगल

कहहु सुकृत केहि भाँति सराहिय तिन्हकर ।
लीन्ह जाइ जगजननि जनमु जिन्हके घर ॥
मंगल खानि भवानि प्रगट जब तें भइ ।
तब तें रिधि सिधि संपति गिरिगृह नित नइ ॥

सुन्दर गौर सरीर भूति भलि सोहइ ।
लोचन भाल बिसाल बदनु मनु मोहइ ॥
सैल कुमारि निहारि मनोहर मूरति ।
सजल नयन हिय हरषु पुलक तनु पूरति ॥

पुनि पुनि करै प्रनामु, न आवत कछु कहि ।
"देखौं सपन कि सौतुख ससिसेखर, सहि !"
जैसे जनमदरिद्र महामनि पावइ ।
पेखत प्रगट प्रभाउ प्रतीति न आवइ ॥

सफल मनोरथ भयउ, गौरि सोहइ सुठि।
घर तें खेलन मनहुँ अबहिं आई उठि॥
देखि रूप अनुराग महेसु भये बस।
कहत बचन जनु सानि सनेह-सुधा रस॥

हमहिं आजु लगि कनउड़ काहु न कीन्हेउ।
पारबती! तप प्रेम मोल मोहिं लीन्हेउ॥
अब जो कहहु सो करउँ बिलंब न यहि घरि।
सुनि महेस मृदु बचन पुलकि पाँयन परि॥

बड़ बिनोदु मग मोदु न कछु कहि आवत।
जाइ नगर निअरानि बरात बजावत॥
पुर खरभर, उर हरषेउ अचलु-अखंडलु।
परब उदधि उमगेउ जनु लखि बिधु मंडलु॥

दीन्ह जाइ जनवास सुपास किये सब।
घर घर बालक बात कहन लागे तब॥
"प्रेत बैताल बराती, भूत भयानक।
बरद चढ़ा बर बाउर, सबइ सुबानक॥

थापि अनल हरबरहिं बसन पहिरायउ।
आनहु दुलहिन बेगि समउ अब आयउ॥
सखी सुआसिनि संग गौरि सुठि सोहति।
प्रगट रूपमय मूरति जनु जगु मोहति॥

भूषन बसन समय सम सोभा सो भली ।
सुखमा बेलि नवल जनु रूप फलनि फली ॥
कहहु काहि पटतरिय गौरि गुनरूपहि ।
सिंधु कहिय केहि भाँति सरिस सर कूपहि ॥

बरु दुलहिनिहि बिलोकि सकल मन रहसहिं ।
साखोचार समय सब सुर मुनि बिहँसहिं ॥
लोक-बेद-बिधि कीन्ह लीन्ह जल कुस कर ।
कन्यादान सँकलप कीन्ह धरनीधर ॥

पूजे कुल गुर-देव कलसु सिल सुभ घरी ।
लावा होम बिधान बहुरि भाँवरि परी ॥
बंदन बंदि, ग्रंथिबिधि करि, ध्रुव देखेउ ।
भा बिवाह सब कहहिं जनम फल पेखेउ ॥

भइ जेवनार बहोरि बुलाइ सकल सुर ।
बैठाये गिरिराज धरम - धरनी - धुर ॥
परुसन लगे सुआर, बिबुध जन जेंवहिं ।
देहिं गारि बर नारि मोद मन भेवहिं ॥

करहिं सुमंगल गान सुघर सहनाइन्ह ।
जेइँ चले हरि दुहिन सहित सुर भाइन्ह ॥
भूधर भोर बिदाकर साज सजायउ ।
चले देव सजि जान निसान बजायउ ॥

भेंटि बिदाकरि बहुरि भेंटि पहुँचावहिं।
हुँकरि हुँकरि सु लवाइ धेनु जनु धावहिं॥
उमा मातुमुख निरखि नयन जल मोचहिं।
'नारि जनमु जग जाय' सखी कहि सोचहिं॥

रामलला-नहछू

कोटिन बाजन बाजहिं दसरथ के गृह हो।
देवलोक सब देखहिं आनँद अति हिय हो॥
नगर सोहावन लागत बरनि न जातै हो।
कौसल्या के हरष न हृदय समातै हो॥

आले हि बाँस के माँड़व मनिगन पूरन हो।
मोतिन्ह झालर लागि चहूँ दिसि झूलन हो॥
गंगाजल कर कलस तौ तुरित मँगाइय हो।
जुवतिन्ह मंगल गाइ राम अन्हवाइय हो॥

गजमुकुता हीरा मनि चौक पुराइय हो।
देइ सुअरघ राम कहँ लेइ बैठाइय हो॥
कनक खंभ चहुँ ओर मध्य सिंहासन हो।
मानिक दीप बराय बैठि तेहि आसन हो॥

नाउनि अति गुनखानि तौ बेगि बोलाई हो।
करि सिंगार अति लोनि तौ बिहँसति आई हो॥
कनक चुनिन सों लसित नहरनी लिये कर हो।
आनँद हिय न समाइ देखि रामहिं बर हो॥

आज अवधपुर आनँद नहछू राम क हो।
चलहु नयन भरि देखिय सोभाधाम क हो॥
अति बड़ भाग नउनियाँ छुये नख हाथ सों हो।
नैनन्ह करति गुमान तौ श्रीरघुनाथ सों हो॥

बरवै रामायण

सिय मुख सरद कमल जिमि किमि कहि जाइ।
निसि मलीन वह, निसिदिन यह बिगसाइ॥

चंपक हरवा अँग मिलि अधिक सोहाइ।
जानि परै सिय हियरे जब कुँभिलाइ॥

सिय तुव अंग-रंग मिलि अधिक उदोत।
हार - बेलि पहिरावउँ चंपक होत॥

कुंकुम तिलक भाल, स्रुति कुंडल लोल।
काकपच्छ मिलि सखि कस लसत कपोल॥

भाल तिलक सर, सोहत भौंह कमान।
मुख अनुहरिया केवल चन्द समान॥

तुलसी बंक बिलोकनी, मृदु मुसुकानि।
कस प्रभु नयनकमल अस कहौं बखानि॥

कामरूप सम तुलसी राम सरूप।
को कवि समसरि करैं परै भवकूप॥

गरब करहु रघुनंदन जनि मन माँह।
देखउ आपनि मूरति सिय कइ छाँह॥

सजल कठौता कर गहि कहत निषाद।
चढ़उ नाव पगधोइ करउ जनि बाद॥

डहकु न, है उजियरिया, निसि नहिं घाम।
जगत जरत अस लागु मोहिं बिनु राम॥

अब जीवन कइ हे कपि आस न कोइ।
कनगुरिया कइ मुँदरी कँगना होइ॥

चित्रकूट पयतीर सो सुरतरु-बास।
लषन रामसिय सुमिरहु तुलसीदास॥

पय नहाइ फल खाइ, परिहरिय आस।
सीय - राम - पद सुमिरउ तुलसीदास॥

स्वारथ परमारथ हित एक उपाय।
सीयराम - पद तुलसी प्रेम बढ़ाय॥

काल कराल बिलोकउ होइ सचेत।
रामनाम जपु तुलसी प्रीति समेत॥

संकट सोच बिमोचन मंगल गेह।
तुलसी रामनाम पर करिय सनेह॥

कलि नहिं ज्ञान, बिराग न जोग समाधि।
रामनाम जपु तुलसी नित निरुपाधि॥

माय बाप गुरु स्वामि राम कर नाम।
तुलसी जेहि न सोहाइ ताहि बिधि बाम॥

तप, तीरथ, मख, दान, नेम, उपवास।
सब तें अधिक राम जपु तुलसीदास॥

नाम भरोस, नाम बल, नाम सनेहु।
जनम जनम रघुनंदन तुलसिहि देहु॥

वैराग्य-संदीपिनी

तुलसी मिटै न मोहतम, किये कोटि गुनग्राम।
हृदय कमल फूलै नहीं, बिनु रवि-कुल-रवि राम॥

तुलसी यह तनु खेत है, मन बच कर्म किसान।
पाप पुन्य द्वै बीज हैं, बवै सो लवै निदान॥

तुलसी यह तनु तवा है, तपत सदा त्रयताप।
सांति होइ जब सांतिपद, पावै राम प्रताप॥

सत्रु न काहू करि गनै, मित्र गनै नहिं काहि।
तुलसी यह मत संत को, बोलै समता माहिं॥

सील गहनि सबकी सहनि, कहनि हीय मुख राम।
तुलसी रहिये यहि रहनि, संत जनन को काम॥

सीतल बानी संत की, ससि हू तें अनुमान।
तुलसी कोटि तपनि हरै, जो कोउ धारै कान॥

जाके मन तें उठि गई, तिल तिल तृष्ना चाहि।
मनसा बाचा कर्मना, तुलसी बंदत ताहि॥

कंचन काँचहि सम गनै, कामिनि काठ पखान।
तुलसी ऐसे संतजन, पृथिवी ब्रह्म समान॥

आकिंचन इंद्रियदमन, रमत राम इकतार।
तुलसी ऐसे संतजन, बिरले या संसार॥

बिरले बिरले पाइये, माया त्यागी संत।
तुलसी कामी कुटिल कलि, केकी काक अनंत॥

तुलसी जाके बदन तें, धोखेउ निकसति राम।
ताके पग की पगतरी, मेरे तनु को चाम॥

सात द्वीप नव खंड लौं, तीनि लोक जग माहिं।
तुलसी सांति समान सुख, अपर दूसरो नाहिं॥

अहंकार की अगिनि में, दहत सकल संसार।
तुलसी बाँचैं संतजन, केवल सांति अधार॥

सोइ ज्ञानी सोइ गुनी जन, सोई दाता ध्यानि।
तुलसी जाके चित भई, राग द्वेष की हानि॥

फिरी दोहाई राम की, गे कमादिक भाजि ।
'तुलसी ज्यों रबि के उदय, तुरत जात तम लाजि ॥

जानकी-मंगल

परसि कमलकर सीस, हरषि हिय लावहिं ।
प्रेम पयोधि-मगन मुनि, पार न पावहिं ॥
मधुर मनोहर मूरति सादर चाहहिं ।
बार बार दसरथ के, सुकृत सराहहिं ॥

बिप्र साधु सुर काज महामुनि मन धरि ।
रामहिं चले लिवाइ धनुष मख मिसु करि ॥
गौतमनारि उधारि पठै पति-धामहिं ।
जनक नगर लै गयउ महामुनि रामहिं ॥

राजत राजसमाज जुगल रघुकुल मनि ।
मनहुँ सरदबिधु उभय, नखत धरनी धनि ॥
काकपच्छ सिर, सुभग सरोरुह लोचन ।
गौर स्याम सत-कोटि-काम-मद-मोचन ॥

तिलकु ललित सर भृकुटी काम कमानै ।
स्रवन बिभूषन रुचिर देखि मन मानै ॥
नासा चिबुक कपोल अधर रद सुंदर ।
बदन सरद-बिधु-निंदक सहज मनोहर ॥

उर बिसाल वृषकंध सुभग भुज अति बल।
पीत बसन उपवीत, कंठ मुकुताफल ॥
कटि निखंग, कर कमलन्हि धरे धनुसायक।
सकल अंग मनमोहन जोहन लायक ॥

राम-लखन-छबि देखि मगन भये पुरजन।
उर आनँद, जल लोचन, प्रेम पुलक तन ॥
नारि परस्पर कहहिं देखि दुहुँ भाइन्ह।
'लहेउ' जनम फल आजु जनमि जग आइन्ह ॥

गये सुभाय राम जब चाप समीपहिं।
सोच सहित परिवार बिदेह महीपति ॥
कहि न सकत कछु सकुचनि, सिय हिय सोचइ।
गौरि गनेस गिरीसहिं सुमिरि सकोचइ ॥

अंतरजामी राम मरम सब जानेउ।
धनु चढ़ाइ कौतुकहिं कान लगि तानेउ ॥
प्रेम परखि रघुबीर सरासन भंजेउ।
जनु मृगराज-किसोर महागज गंजेउ ॥

नियरानि नगर बरात हरषी लेन अगवानी गये।
देखत परस्पर मिलत, मानत, प्रेम परिपूरन भये ॥
आनंद पुर कौतुक कोलाहल बनत सो बरनत कहाँ।
लै दियो तहँ जनवास सकल सुपास नितनूतन जहाँ ॥

चले सुमिरि गुरु सुर सुमन बरषहिं, परे बहु बिधि पाँवड़े।
सनमानि सब बिधि जनक दसरथ किये प्रेम कनावड़े ॥

गुन सकल सम समधी परस्पर मिलत अति आनँद लहे।
जय धन्य जय जय धन्य धन्य बिलोकि सुर नर मुनि कहे॥

लै लै नाउँ सुआसिनि मंगल गावहिं।
कुँवर कुँवरि हित गनपति गौरि पुजावहिं॥
अगिनि थापि मिथिलेस कुसोदक लीन्हेउ।
कन्यादान बिधान संकलप कीन्हेउ॥

संकलपि सिय रामहिं समरपी सील सुख सोभामई।
जिमि संकरहिं गिरिराज गिरिजा हरिहिं श्री सागर दई॥
सिंदूर बंदन होम लावा होन लागीं भाँवरी।
सिलपोहनी करि मोहनी मन हर्‌यौ मूरति साँवरी॥

जनक अनुज-तनया दुइ परम मनोरम।
जेठि भरत कहँ ब्याहि रूप रति सय सम॥
सिय लघु भगिनि लखन कहँ रूप-उजागरि।
लखन-अनुज श्रुतिकीरति सब-गुन-आगरि॥

राम बिबाह समान ब्याह तीनिउ भये।
जीवनफल, लोचनफल बिधि सब कहँ दये॥
दाइज भयउ बिबिध बिध जाइ न सो गनि।
दासी, दास, बाजि, गज, हेम, बसन, मनि॥

सासु उतारि आरती करहिं निछावरि।
निरखि निरखि हिय हरषहिं मूरति साँवरि॥
माँगेउ बिदा राम तब, सुनि करुना भरी।
परिहरि सकुच सप्रेम पुलकि पायन्ह तरी॥

सीय सहित सब सुता सौंपि कर जोरहिं।
बार बार रघुनाथहिं निरखि निहोरहिं॥
"तात तजिय जनि छोह मया राखबि मन।
अनुचर जानब राउ सहित पुर परिजन॥"

बधुन्ह सहित सुत चारिउ मातु निहारहिं।
बारहिं बार आरती मुदित उतारहिं॥
करहिं निछावरि छिनु छिनु मंगल मुद भरी।
दूलह दुलहिनिन्ह देखि प्रेम-पय-निधि परी॥

देत पाँवड़े अरघु चलीं लइ सादर।
उमँगि चलेउ आनंद भुवन भुइं बादर॥
नारि उहार उघारि दुलहिनिन्ह देखहिं।
नैन लाहु लहि जनम सफल करि लेखहिं॥

भवन आनि सनमानि सकल मंगल किये।
बसन कनक मनि धेनु दान बिप्रन्ह दिये॥
जाचक कीन्ह निहाल असीसहिं जहँ तहँ।
पूजे देव पितर सब राम उदय कहँ॥

नेग चार करि दीन्ह सबहिं पहिरावनि।
समधी सकल सुआसिनि गुरुतिय पावनि॥
जोरी चारि निहारि असीसत निकसहिं।
मनहुँ कुमुद बिधु-उदय मुदित मन बिकसहिं॥